ISSN 2394-0654

# शोध खनिज

## Shodh Khanij

जुलाई-सितंबर 2024 वर्ष - 10 अंक -39

बहुविषयक पीअर रिव्यूड जर्नल

Multidisciplinary Peer Reviewed Journal

https://www.muditeducation.com/shodhkhanij

Multidisciplinary Peer Reviewed Journal ISSN: 2394-0654

बहुविषयक पीअर रिव्यूड जर्नल

# शोध खनिज Shodh Khanij

जुलाई-सितंबर 2024 वर्ष - 10 अंक - 39

**संपादक**

**डॉ. अमृत कुमार**

जनसंचार विभाग, झारखंड केंद्रीय विश्वविद्यालय

चेरी-मनातू, कामरे, रांची (झारखंड) पिन – 835 222

**shodhkhanij@gmail.com**

**सह-संपादक**

**डॉ. पंकज कुमार सिंह**

मुदित बाल विद्यालय, त्रिमूर्ति नगर, उमरी

वर्धा (महाराष्ट्र). पिन कोड – 442 001

Mob. 9823696685 **gandhikhadi@gmail.com**

**संपादकीय संपर्क**

बी. 6, बालाजी अपार्टमेंट, फ़ूटा रोड 41

मंदिर वाली गली, संत नगर, बुरारी, दिल्ली. पिन – 110 084

www.muditeducation.com/shodhkhanij

**© शोध खनिज में व्यक्त विचार और सर्वाधिकार लेखकों के अपने हैं। प्रकाशित विचारों से संपादक व संपादक-मंडल की सहमति अनिवार्य नहीं है। उक्त सभी पद अवैतनिक हैं। किसी भी वाद-विवाद का न्याय क्षेत्र दिल्ली होगा।**

# संपादक मंडल


## सलाहकार समिति

**प्रो. (डॉ.) अनिल कुमार राय**
कुलपति
पंडित दीनदयाल उपाध्याय शेखावाटी विश्वविद्यालय
सीकर (राजस्थान) पिन 332024

**प्रो. (डॉ.) मोहम्मद फरियाद**
प्रोफेसर, जनसंचार एवं पत्रकारिता विभाग
मौलाना आज़ाद नेशनल उर्दू यूनिवर्सिटी
गच्चीबौली – हैदराबाद. पिन-500032

**प्रो. (डॉ.) संजय सिंह बघेल**
प्रोफेसर, हिंदी विभाग
आत्मा राम सनातन धर्म महाविद्यालय
दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली. पिन - 110021

**श्री अजीत कुमार**
एसोशिएट प्रोफेसर, इतिहास विभाग
आत्मा राम सनातन धर्म महाविद्यालय
दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली. पिन - 110021

**डॉ. बच्चा बाबू**
एसोशिएट प्रो., यूनिवर्सिटी स्कूल ऑफ मास कम्युनिकेशन
गुरु गोबिंद सिंह इंद्रप्रस्थ विश्वविद्यालय, दिल्ली - 110078

## पुनरीक्षण समिति

**डॉ. गोविन्द प्रसाद वर्मा**
सहायक प्रोफेसर, मानविकी और भाषा संकाय
महात्मा गाँधी केंद्रीय विश्वविद्यालय
मोतिहारी (बिहार) पिन – 845401

**डॉ. गजेंद्र प्रताप सिंह**
सहायक प्रोफेसर
स्कूल ऑफ़ मीडिया & कम्युनिकेशन स्टडीज़
गलगोटिया विश्वविद्यालय, ग्रेटर नोएडा (उ.प्र.) - 203201

## पुनरीक्षण समिति

**डॉ. अमिता**
एसोशिएट प्रोफेसर, पत्रकारिता एवं जनसंचार विभाग
गुरु घासीदास विश्वविद्यालय, बिलासपुर
(छतिसगढ़) पिन 495009

**डॉ. उमेश तिवारी**
सहायक प्रोफेसर, प्राचीन भारतीय इतिहास, संस्कृति और
पुरातत्व विभाग, तिलका मांझी भागलपुर विश्वविद्यालय
भागलपुर (बिहार) पिन -812007

**डॉ. भारती देवी**
सहायक प्रोफेसर, राजनीति विज्ञान विभाग
मोतीलाल नेहरू कॉलेज (इवनिंग)
दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली. पिन -110021

**डॉ. विवेक विश्वास**
सहायक प्रोफेसर, जनसंचार विभाग
महाराजा अग्रसेन महाविद्यालय
दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली. पिन 110096

**डॉ. धीरेन्द्र कुमार राय**
सहायक प्रोफेसर, पत्रकारिता एवं जनसंप्रेषण विभाग
काशी हिंदू विश्वविद्यालय, वाराणसी (उ. प्र.) - 221005

**डॉ. रुद्रेश नारायण मिश्र**
सहायक प्रोफेसर, हिंदी पत्रकारिता एवं जनसंचार विभाग
श्री गुरु नानक देव खालसा कॉलेज
(दिल्ली विश्वविद्यालय) दिल्ली. पिन 110005

**डॉ. उमेश कुमार सिंह**
वर्धा समाज कार्य संस्थान
महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय
वर्धा (महाराष्ट्र). पिन-442001


**स्वामित्व, प्रकाशक और मुद्रक: अमृत कुमार, एल 1, ए 19, मोहन गार्डन, उत्तम नगर दिल्ली – 110059. संपादक : अमृत कुमार**

Multidisciplinary Peer Reviewed Journal ISSN: 2394-0654

# शोध खनिज Shodh Khanij

जुलाई-सितंबर 2024 वर्ष (Vol.) - 10 अंक (Issue) - 39

## अनुक्रम


| | संपादकीय | पृष्ठ संख्या |
|---|---|---|
| 1. | रमेशचंद्र शाह_ स्वत्रंत चेता तत्त्वाभिनिवेशी आलोचक _**डॉ. गोविन्द प्रसाद वर्मा** | 05-12 |
| 2. | डिजिटल मीडिया साक्षरता और फेक न्यूज़ : समस्या एवं संभावित समाधान _**यादव आनन्दसेन रामनाथ _विनय कुमार सिंह** | 13-22 |
| 3. | मानस एग्रो इंडस्ट्रीज एंड इंफ्रास्ट्रक्चर लिमिटेड की वित्तीय तरलता का विश्लेषण: वर्तमान अनुपात और त्वरित अनुपात के आधार पर… _**डॉ. रविन्द्र तु. बोरकर _श्रीराम बालेकर** | 23-27 |
| 4. | भारत में गरीबी उन्मूलन हेतु सरकारी प्रयास : योजनाओं का विश्लेषण और… _**उपेन्द्र कुमार** | 28-35 |
| 5. | सामाजिक समस्याओं से शांति की चुनौतियों के समाधान में गांधी जी का दर्शन_ शैक्षिक मानसिक चुनौतियों के विशेष संदर्भ में _**शिखा यादव _रोहित शर्मा** | 36-41 |
| 6. | Exploring the Role of Caste Identity in Shaping the Tamas Dimension of Personality in Indian Women _**Dr. Mahesh Kumar Tiwari** | 42-49 |
| 7. | Introducing Annai Meenambal Sivaraj from South India _**Dr. Mohini Jagdish Gawai** | 50-55 |
| 8. | The Evolution of Web Series in India: Trends, Impact, And Future Prospects _**Dr. Shachindra Shekhar Shakunt** | 56-75 |
| 9. | कुँवर चंद्र प्रकाश सिंह के गीतों में राष्ट्रीय-सांस्कृतिक चेतना_ **अविरल पटेल** | 76-84 |
| 10. | बुकानन के नजरों में गया _**राहुल कुमार** | 85-96 |
| 11. | हरनोट का कहानी-संग्रह 'कीलें': सामाजिक एवं राजनीतिक मूल्यों के ह्रास…_**संतोष कुमार** | 97-105 |
| 12. | मनोवैज्ञानिक शोध : अर्थ एवं विशेषताएं और उपयोग _**डॉ. गणेश ताराचंद खैरे** | 106-111 |
| 13. | हुस्न तबस्सुम निहां के कहानी संग्रह 'नीले पंखों वाली लड़कियां' में स्त्री स्वर का…_**अंजली** | 112-126 |
| 14. | त्रिलोचन का गद्य साहित्य और साहित्यिक संवेदना _**कमलेश कुमार यादव** | 127-133 |
| 15. | जमनालाल बाजाज का सामाजिक विचार _**सुमन्त कुमार मिश्रा** | 134-139 |
| 16. | निजामाबाद के हस्तशिल्प श्रमिकों की समस्याएं एवं चुनौतियों का अध्ययन _**अनुराग सिंह_ डॉ. वरुण कुमार उपाध्याय** | 140-148 |
| 17. | Restoring Cultural Heritage: Navigating the Challenges and Assessing the Implications _**Lokesh Pandey** | 149-158 |
| 18. | NOTES FOR AUTHORS | |

# संपादकीय

साहित्य, समाज, अर्थव्यवस्था, तकनीक और मनोविज्ञान—इन सभी क्षेत्रों में निरंतर बदलते परिप्रेक्ष्य को समझने और विश्लेषित करने का प्रयास किसी भी शोध-पत्रिका का मूल उद्देश्य होता है। प्रस्तुतांक में प्रकाशित शोध-पत्र न केवल विविध विषयों का प्रतिनिधित्व करते हैं, बल्कि वर्तमान भारतीय समाज में उठ रहे बुनियादी प्रश्नों और संभावनाओं की एक बहुआयामी तस्वीर भी प्रस्तुत करते हैं।

डॉ. गोविन्द प्रसाद वर्मा द्वारा रमेशचंद्र शाह के आलोचना-कर्म का मूल्यांकन उन्हें एक स्वतंत्रचेता तत्त्वाभिनिवेशी आलोचक के रूप में स्थापित करता है, जहाँ साहित्य की समीक्षा केवल रचनात्मक अभिव्यक्ति न होकर बौद्धिक प्रतिबद्धता का उदाहरण बनती है। वहीं यादव आनन्दसेन रामनाथ और विनय कुमार सिंह द्वारा डिजिटल मीडिया साक्षरता और फेक न्यूज़ पर केंद्रित शोध, एक अत्यंत समकालीन और वैश्विक समस्या को विश्लेषित करता है, जो आज की लोकतांत्रिक संरचनाओं के लिए गंभीर चुनौती है।

उपेन्द्र कुमार द्वारा गरीबी उन्मूलन योजनाओं का मूल्यांकन नीति-निर्माण की दिशा में आवश्यक आलोचनात्मक दृष्टि प्रदान करता है। वहीं शिखा यादव और रोहित शर्मा का शोध गांधीवादी दर्शन के आलोक में शांति की चुनौतियों को संबोधित करता है, जो वर्तमान तनावग्रस्त सामाजिक परिदृश्य में मार्गदर्शक सिद्ध हो सकता है।

डॉ. महेश कुमार तिवारी द्वारा जातिगत पहचान और स्त्री की 'तमस' प्रवृत्ति का अध्ययन भारतीय सामाजिक संरचना में अंतर्निहित मनोवैज्ञानिक स्तरों को उजागर करता है, जबकि डॉ. मोहिनी गवई द्वारा अन्नई मीनांबाल शिवराज का पुनर्पाठ भारतीय नारी नेतृत्व की उपेक्षित कड़ी को सामने लाता है।

भारतीय वेब सीरीज़ पर डॉ. शचिन्द्र शेखर शकुंत का विश्लेषण, न केवल मनोरंजन क्षेत्र के सामाजिक प्रभाव को रेखांकित करता है, बल्कि नयी पीढ़ी के सांस्कृतिक मानस को भी समझने का माध्यम बनता है।

अविरल पटेल द्वारा कुँवर चंद्र प्रकाश सिंह के गीतों में राष्ट्रीय-सांस्कृतिक चेतना, राहुल कुमार द्वारा बुकानन की नजरों में गया, और संतोष कुमार द्वारा हरनोट की कहानियों में मूल्यों के ह्रास पर केंद्रित शोध, साहित्य की सामाजिक अंतर्धारा को उजागर करते हैं।

डॉ. गणेश ताराचंद खैरे का मनोवैज्ञानिक शोध पर लेख शोध की विधियों और उसकी संभावनाओं का स्पष्ट बोध कराता है, वहीं अंजली द्वारा हुस्न तबस्सुम निहां की कहानियों में स्त्री स्वर का विश्लेषण समकालीन स्त्री लेखन की आवाज़ को मुखर बनाता है। कमलेश कुमार यादव, सुमन्त कुमार मिश्रा तथा अनुराग सिंह जैसे लेखकों के शोध निबंध, क्रमशः त्रिलोचन के गद्य, जमनालाल बाजाज के विचार, और हस्तशिल्प श्रमिकों की चुनौतियों पर प्रकाश डालते हैं, जो साहित्य, समाज और श्रम के अंतर्संबंध को रेखांकित करते हैं।

अंत में, लोकेश पाण्डेय का लेख सांस्कृतिक विरासत के पुनरुद्धार से जुड़ी जटिलताओं और संभावनाओं का गहन विश्लेषण करता है। यह अंक हमारे समय के सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक और तकनीकी प्रश्नों से जुड़ी बहसों को समर्पित है। आशा है कि यह विविध विषयों से समृद्ध संकलन पाठकों, शोधार्थियों और नीति-निर्माताओं को नई दृष्टि और दिशा प्रदान करेगा।

# रमेशचंद्र शाह : स्वत्रंत चेता तत्त्वाभिनिवेशी आलोचक

**डॉ. गोविन्द प्रसाद वर्मा***

**govindvillage@gmail.com**

रमेशचंद्र शाह आधुनिक संवेदन से युक्त स्वाधीन चेतना संपन्न रीझ-बूझ वाले सर्जक है। उन्होंने हिंदी साहित्य की विविध विधाओं- कविता, आलोचना, निबंध, कहानी, उपन्यास आदि में विपुल और वैविध्यपूर्ण लेखन किया है। वे आलोचना विधा को भी सर्जनात्मक रूप देने के लिए जाने जाते हैं। इस कारण, हिंदी साहित्य में उनके आलोचना-कर्म की काफी चर्चा रही है। रमेशचंद्र शाह की आलोचना के केंद्रीय पुरुष 'अज्ञेय' रहे हैं। उनकी आलोचना का विस्तार मुख्यत: अज्ञेय से पूर्व छायावादी चतुष्टयी और अज्ञेय के साथ 'इलाहाबाद-भोपाल स्कूल' तक है।[1] इसका अर्थ है वे बीसवीं शताब्दी के हिंदी रचना-कर्म के आलोचक हैं। उनकी आलोचना का केंद्रीय तत्त्व रीझ-बूझ है, जिसे हम सहृदयता और स्वत्रंतता से युक्त बौद्धिकता भी कह सकते हैं। प्रो. हनुमानप्रसाद शुक्ल द्वारा संपादित पुस्तक- 'जे बूड़े सब अंग' रमेशचंद्र शाह की इसी आलोचना-दृष्टि का प्रतिनिधि आख्यान है।

प्रस्तुत पुस्तक और संपादकीय का शीर्षक क्रमशः- 'जे बूड़े सब अंग' तथा 'सहृदयता और बौद्धिक प्रश्नाकुलता से उपजी रीझ-बूझ'- बहुत ही सार्थक एवं औचित्यपूर्ण है। बिहारी के दोहे से लिया गया पुस्तक का शीर्षक आस्वादकता की चरम कसौटी 'सहृदयता' का बोधक है। इसी सहृदयता की अनुभूति और बौद्धिकता के संश्लेष का नाम रमेशचंद्र शाह है। संपादक प्रो. शुक्ल ने इसका सटीक विश्लेषण किया है – "काव्य या साहित्य के मर्म पर रीझकर उसका बोध प्राप्त करने-कराने के लिए की गयी उनकी समूची आलोचना और समीक्षा सहृदयता की जमीन पर इसी बौद्धिक प्रश्नाकुलता से ही उपजी है। सहृदयता मनुष्य-वृत्ति है, बौद्धिक प्रश्नाकुलता युग-वृत्ति है। हमारे समय का संवेदन इन दोनों के युगपत् समीकरण या संश्लेष में ही संभव है।"[2] यह टिप्पणी शाह जी की आलोचना-दृष्टि को स्पष्ट करने में मदद करती है। आलोचक और आलोचना का यह दायित्व होता है कि वह रचना में गहरे पैठे और सत्य का संधान करें जिससे बृहत्तर पाठक समुदाय की चेतना जागृत एवं संस्कारित होता रहे। रमेशचंद्र शाह आलोचक की स्वाधीन चेतना की सदैव वकालत करते रहे। वे इसके साथ ही समानता और जनतांत्रिक विचार के पक्षधर रहे। प्रो.शुक्ल ने शाह जी के आलोचकीय व्यक्तित्व तथा आलोचना का सार स्पष्ट किया है –"एक तो रचना-विशेष की समीक्षा और समूचे कवि-कर्म का वैशिष्ट्य-निरूपण एवं आकलन। दूसरे उस समाज में रचना को संभव कर सकने वाली स्थितियों की चौकसी यानी एक

* **सहायक आचार्य, हिंदी विभाग, मानविकी एवं भाषा संकाय, महात्मा गाँधी केंद्रीय विश्वविद्यालय, मोतिहारी**

जनतांत्रिक और स्वाधीन चिंता एवं चेतना का पर्यावरण संरक्षित हो, इसकी पहरेदारी; क्योंकि इसके बिना आलोचना-कर्म संभव नहीं"।[3]

रमेशचंद्र शाह के आलोचना-कर्म पर आधारित यह पुस्तक तीन भागों में विभक्त है। पहला भाग 'विचार और आलोचना' शीर्षक से है तथा इसमें 18 आलेख हैं। दूसरे भाग का शीर्षक 'कुछ कृतियाँ ...' हैं जिसमें 7 समीक्षात्मक लेख हैं। तीसरे भाग में 'साक्षात्कार' है। 'साक्षात्कार' पुस्तक की सह-संपादिका डॉ. विजया सिंह ने लिया है।

'जनतंत्र और समालोचना' पुस्तक का पहला निबंध है। किसी भी देश की संस्कृति के निर्माण में लोकतंत्र और साहित्य का महत्त्वपूर्ण योगदान होता है। राजनैतिक और साहित्यिक संस्कृति के निर्माण के लिए स्वाधीन चेता प्रबुद्ध और नैतिक समालोचकों की परम आवश्यकता होती है; अन्यथा उनकी अनुपस्थिति से दोनों अराजकता की दिशा में बढ़ जाते हैं। राजनीति और साहित्य के बीच अंत:क्रिया तथा संवाद भी चलते रहना चाहिए। शाह जी वैश्विक परिदृश्य में जनतंत्र और समालोचना के परस्पर क्रिया-प्रतिक्रिया एवं महत्त्व को रेखांकित करते हैं। वे भारतीय पक्ष के लिए रामचंद्र शुक्ल, अज्ञेय, भालचंद्र नेमाड़े, मलयज, अशोक वाजपेयी, विपिन कुमार अग्रवाल, अरविंद घोष और गांधीजी के चिंतन को प्रस्तुत करते हैं, तो पश्चिम से मैथ्यू आर्नल्ड, टी. एस. इलियट, एफ. आर. लीविस जैसे चिंतकों से संवाद करते हैं। वे सभी चिंतक किसी-न-किसी रूप में सबकी स्वाधीनता और जागरुक सामाजिक भागीदारी की वकालत करते हैं। ऐसा लगता है कि उनकी दृष्टि में गांधीजी हमारे मार्गदर्शक हो सकते हैं- "निश्चय ही उन्नीसवीं सदी के यूरोप की सर्वश्रेष्ठ लिबरल विरासत का काफी घनिष्ठ परिचय उन्हें हो चुका था;पर उनका चिंतन और कर्म उस उदारवाद का अनुवाद कभी नहीं था। वे अपनी तरह के रेडिकल भी बने,पर उनका रेडिकलिज्म यूरोप के लिबरलिज्म की यूरोपीय प्रतिक्रिया से निकला रेडिकलिज्म नहीं था। वे व्यक्ति की स्वाधीनता के प्रबलतम समर्थकों में थे, पर उनके इस आग्रह का पश्चिमी 'इंडिविजुअलिज्म'से तनिक भी लेना-देना नहीं था। वे करोड़ों गूँगों-बहरों के जन्मजात प्रवक्ता थे, पर उनकी यह प्रतिबद्धता किसी उधार ली गयी विचारधारा और उसके मुहावरे की मुखापेक्षी नहीं थी।"[4]

'साहित्य और आधुनिक संवेदन' शीर्षक निबंध के माध्यम से श्री शाह संवेदना के विस्तार का बुनियादी और जरुरी सवाल उठाते हैं। अलग-अलग जैविक परिस्थितियों के कारण अलग-अलग संस्कृतियों का निर्माण होता है। इन्हीं सांस्कृतिक विविधताओं के कारण समान परिस्थिति में भी संवेदना का रूप अलग-अलग हो जाता है। आधुनिक युग के पश्चिम में जो वैज्ञानिक एवं वैचारिक क्रांतियाँ हुई उससे उपजा वहाँ का संवेदन और साहित्यिक अभिव्यक्ति अलग है, जबकि हमारे यहाँ अलग। इसी सन्दर्भ में प्राकृतिक विज्ञानों से साहित्य विशिष्ट होता है।

दुनिया की सभी संस्कृतियों की अपनी परंपरा और इतिहास होता है। उसके साथ ही उनके सच्चे स्वरूप को बनाए रखने के लिए एक आलोचनात्मक विवेक भी होता है। यही विवेक और तर्कबुद्धि ज्ञान-विज्ञान के नए-नए रूपों से संवाद और विकास का मार्ग प्रशस्त करती है। श्री शाह भारतीय और यूरोपीय दोनों

के आलोचनात्मक-स्वभाव, परंपरा बोध और इतिहास दृष्टि के अंतरसंबंध की गहरी पड़ताल करते हैं। और, वे मानते हैं कि हर बड़े रचनाकार में आलोचना, परंपरा और इतिहास तीनों का सूक्ष्म विवेक और समन्वय पाया जाता है। हिंदी साहित्य में आचार्य रामचन्द्र शुक्ल इसके श्रेष्ठ उदाहरण है। वे निरंतर गतिशील और परिवर्तित समय के साथ साहित्य की भूमिका की समझ रखने वाले आलोचक थे। वे 'कविता क्या है' निबंध में लिखते हैं कि जैसे-जैसे सभ्यता का विकास होता जाएगा काव्य की आवश्यकता बढ़ती जाएगी और कवि कर्म कठिन होता जाएगा। आचार्य शुक्ल की तरह पश्चिम में मैथ्यू आर्नल्ड, टी.एस.इलियट आदि चिंतकों ने भी वही कार्य किया और कर भी रहे हैं। रमेशचंद्र शाह की चिंता है कि जैसे-जैसे सभ्यता-संस्कृति का विकास संवेदनात्मक रूप से जटिल और कठिन होता जा रहा है, वैसे-वैसे हमारे यहाँ के बुद्धजीवियों में ज्ञान के एकहरेपन का सांस्कृतिक संकट बढ़ता जा रहा है। ये कार्य जो लोग कर रहे हैं उनकी सुनने वाला कोई नहीं हैं। वे लिखते हैं – "... साहित्य के आलोचक को आज जितना इतिहास, दर्शन आदि क्षेत्रों के विद्वानों की अंतर्दृष्टियों से लाभान्वित होने की जरूरत है, उतनी शायद पहले कभी नहीं थी। इस दु:खद तथ्य को रेखांकित करना अत्यावश्यक हो गया है कि आज की हिंदी आलोचना एक खतरनाक 'इन-ब्रीडिंग'का शिकार हो रही है। एक तो वैसे ही दार्शनिक,वैज्ञानिक और साहित्यिक बुद्धजीवियों के बीच संवाद का अभाव है;दूसरे हमारे बीच जो दो-एक ऐसी साहित्यिक प्रतिभाएँ हैं भी, जिन्होंने व्यापक दृष्टि से वर्तमान भारतीय समाज में मूल्यमूढ़ता और वैचारिक धुंध को अपनी उत्तरदायी और प्रखर विचार-शक्ति से विश्लेषित-प्रकाशित करने का उद्यम किया भी है,उसकी भी कोई प्रतिध्वनि नहीं सुनायी देती।"[5]

साहित्य में विचार एवं भाव साथ-साथ रहते हैं, परंतु विचार की तुलना में भाव या संवेदना ज्यादा संश्लिष्ट होता है। भाव को चित्र मूर्त्त और संगीत गति प्रदान करता है। इन दोनों तत्त्वों की साहित्य की संवेदनात्मक अमिट अभिव्यक्ति एवं परिवर्तनशीलता में महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है।

रमेशचंद्र शाह कालजयी साहित्य की पहचान का सवाल उठाते हैं और उसका उत्तर अनेक तरह से देते हैं। वे मानते हैं कि प्रत्येक कालखंड पर प्रत्येक कालखंड में 'क्लासिक्स' पर विचार होना चाहिए। आज 'क्लासिक्स' महाकाव्य औए नाटक तक सीमित नहीं रहा; बल्कि उपन्यास, कहानी जैसी गद्य विधाओं तक व्याप्त हो गया है। वे ही रचनाएँ 'क्लासिक्स' कही जाएँगी जिनमें काल के अतिक्रमण का सामर्थ्य हो, जो सार्वकालिक प्रासंगिक हो, जिनमें चराचर की पीड़ा हो, जिनमें असामान्य अनुभूति या सत्य-बोध की क्षमता हो, जो आस्वादक की कल्पना शक्ति को दीक्षित करें, जो बहुवस्तुस्पर्शिनी प्रतिभा की उपज हो, जिनमें विरुद्धों के सामंजस्य की अभिव्यक्ति हो, इत्यादि। इन्हीं संदर्भों में रामायण, महाभारत, कामायनी आदि कालजयी रचनाएँ हैं।

तुलना और अनुकरण मानवीय मन की नैसर्गिक क्रियाएँ हैं। तुलना का साहित्य में प्रवेश भाषाशास्त्र के अध्ययन के रास्ते हुआ है। एकल भाषा, एकल साहित्य एक रेखीय वृत्त से निकलने, संवाद बढाने में तुलनात्मक साहित्य ने मदद की। उसने सभी साहित्यों की सांस्कृतिक वैशिष्ट्य को बनाए रखने की वकालत

की। भूमंडलीकरण के इस दौर में भारत जैसे बहुभाषी एवं बहुसाहित्यिक देश में तुलनात्मक साहित्य की आवश्यकता एवं अनिवार्यता बढ़ती जा रही है। हम भारत की सांस्कृतिक एकता की लंबे समय बात करते आ रहे हैं,उसे पूर्णत: फलीभूत करने में तुलनात्मक भारतीय साहित्य ही महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है।

'हिंदी संस्कृति' शीर्षक निबंध में रमेशचंद्र शाह ने विशेष रूप से रामविलास शर्मा और अज्ञेय को केंद्र में रखकर अपना विचार प्रस्तुत किया किया है। रामविलास शर्मा ने 'हिंदी संस्कृति' या 'हिंदी जातीयता' के विचार के प्रभाव को धीरेंद्र वर्मा से ग्रहण किया था और निराला के सर्जनात्मक लेखन एवं वैचारिक चिंतन से पुष्ट किया था। रामविलास जी हिंदी संस्कृति को जनपदीय संस्कृति से जोड़ते हैं और उसे समझने के लिए वैदिक काल खंड तक जाने की बात करते थे। शाहजी रामविलास शर्मा से अपने को अलगाते हैं तथा अज्ञेय के विचार से अपने को संपृक्त करते हैं। उनका विचार है कि साहित्य और कला को स्वायत्त बनाकर, जब तक उसे राजनीति से बड़ा नहीं बनाया जाएगा तब तक हिंदी संस्कृति का हित नहीं होगा।

आनंद केंटिश कुमारस्वामी आधुनिक कला चिंतन के श्लाका पुरुष है। उनके द्वारा भारतीय कला का पुनर्जागरण हुआ। वे मानवीय जीवन को कला से और कला को मानवीय जीवन से अभिन्न मानते थे। दूसरे शब्दों में कला की व्याप्ति लौकिक जीवन से आध्यात्मिक जीवन तक है। कला लौकिक रूप में बहुरूपात्मक है और आध्यात्मिक रूप में एकात्मक। उनकी दृष्टि में प्रत्येक व्यक्ति कलाकार भी है और आस्वादक भी। रमेशचंद्र शाह कुमारस्वामी के कला चिन्तन से दो महत्वपूर्ण निष्कर्ष निकालते हैं,पहला- दुनिया के सारे धर्मों में रहस्यात्मक-तत्त्व एक समान है। दूसरा, शाह जी के शब्दों में- "...बौद्धधर्म और बौद्धकला को भारतीय धर्म और भारतीय कला की मुख्यधारा से अलग करना असंभव है: बौद्ध प्रतीकों का एकाग्र अध्ययन हमें यह विश्वास दिलाता है कि वह प्रतीक अकस्मात शून्य में से पैदा नहीं हुए। इस अनुभूति से आनंद कुमारस्वामी को उन तमाम प्रतीकों का शोध नये दृष्टिकोण से करने की प्रेरणा हुई,जो भारतवर्ष के समूचे प्रारंभिक वैदिक साहित्य में ओतप्रोत हैं। वे खोजना चाहते थे कि कहीं ऐसा तो नहीं कि जो अवधारणाएँ प्रतीकों-संकेतों के बीज रूप में इस तमाम वैदिक साहित्य में व्यक्त हुई हैं, उन्हीं अवधारणाओं को मूर्त्त अभिव्यक्ति पहले-पहल बौद्धकला में मिली हो।"[6]

प्रस्तुत पुस्तक में छायावाद से संबंधित चार निबंधों- 'प्रसाद और छायावाद की प्रासंगकिता', 'निराला और परवर्ती हिन्दी कविता', 'पहला प्रगतिशील और पहला स्वप्नदर्शी कवि' तथा 'कामायनी का अर्थगौरव'- को सम्मिलित किया गया है। निश्चित रूप से छायावाद एक विराट सांस्कृतिक आन्दोलन रहा है। 'प्रसाद' इस युग के प्रकाश स्तंभ रहे हैं। 'प्रसाद' में एक तरफ गहरा इतिहास बोध है तो दूसरी तरफ प्रश्नाकुल बौद्धिकता। शाह जी अनुसार यही आधुनिकता बोध का लक्षण है। उनकी दृष्टि में 'प्रसाद' द्वंद्वात्मक भाव बोध को समरस करने वाले रचनाकार हैं। वे लिखते हैं- "...दोहरी रचनात्मकता की राह से प्रसाद जी लगातार उस आदर्श संयोजन की ओर- अर्थात काव्य और नाट्य, इतिहास और मनोविज्ञान, अतीत और वर्तमान, आदर्श और यथार्थ, वैयक्तिक और निर्वैयक्तिक की उस घुलाहट की ओर बढ़ते जा रहे थे, जिसका नाम कामायनी है।

आखिर खुद प्रसाद जी ने ही तो यह विचार व्यक्त किया कि दु:खदग्ध जगत और आनंदपूर्ण स्वर्ग का एकीकरण ही साहित्य है।"[7]

इस विचार को शाहजी कई स्थानों पर दोहराते हैं। वे इसे रचनात्मक चुनौती के रूप में देखते हैं और कहते हैं कि यह चुनौती छायावादी युग में भी प्रासंगिक थी और आज भी उतनी ही प्रासंगिक है। उसे वे गांधीजी के साथ जोड़कर देखते हैं। "...रचनात्मक चुनौती छायावाद-युग के सामने थी, वह अब और भी प्रखर रूप में हमारे सामने है : 'त्रासजनित विवेक' को 'पावनताजनित विवेक' में बदलने की। उस दृष्टि से प्रसाद, और उनके युग की प्रासंगिकता आज के रचनाकर्मी के लिए कम नहीं हुई है, बल्कि कुछ बढ़ी ही है, जिस तरह कि गांधी की प्रासंगिकता बढ़ी है।"[8]

'कामायनी का अर्थगौरव' शीर्षक निबंध में रमेशचंद्र शाह पुनः 'प्रसाद' की द्वंदात्मक संवेदना (सुख-दु:ख, राग-विराग आदि) को रेखांकित करते हैं और उसको समरस या सामंजस्य बनाने के लिए काव्य बिंब का प्रयोग करते हैं। वे बिंब को अर्थ के उद्घाटन का माध्यम बनाते हैं। इसके लिए वे रामस्वरूप चतुर्वेदी के बिंब संबंधी चिंतन का भी उपयोग करते हैं। आधुनिक हिंदी कविता के गहन विश्लेषण का कार्य बिंब के माध्यम से ही संभव है ऐसा शाहजी की आलोचना से प्रतीत होता है।

निराला हिंदी के अद्वितीय कवि हैं। आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने उन्हें बहुवस्तुस्पर्शिनी प्रतिभा का कवि माना। अज्ञेय की दृष्टि में भी निराला एक श्रेष्ठ कवि हैं। शाहजी शुक्ल जी की निराला संबंधी चिंतन की पुनर्व्याख्या करते हुए लिखते हैं कि "निराला की संवेदना जितनी विस्तृत और समावेशी है, उनकी भाषिक चेतना भी उतनी ही समावेशी है।"[9] विराट सांस्कृतिक फलक पर संवाद करते हुए निराला की कविता आगे बढ़ी, परंतु परवर्ती हिंदी कविता में लगातार क्षीण होती गयी। वह उस दाय को संभाल नहीं सकी, ऐसा श्री शाहजी मानते हैं। छायावाद में प्रकृति के चितेरे कवि के रूप में पंत जी की चर्चा जोर-शोर से रही। यह भी कहा गया कि वे परिवर्तनशील और स्वप्नदर्शी कवि है। वे अपनी कविताओं में एक साथ भौतिकता और आध्यात्मिकता को अभिव्यक्त करने में सक्षम हैं। इसके लिए वे मार्क्स और श्री अरविंद दोनों को एक साथ लाते हैं।

रमेशचंद्र शाह के समूचे लेखन में अज्ञेय की गूँज-अनुगूँज लगातार सुनाई पड़ती रहती है। इस संकलन में भी अज्ञेय संबंधी सर्वाधिक तीन निबंध- 'भारतीय आधुनिकता और अज्ञेय', 'अज्ञेय का स्वातंत्र्य-दर्शन', 'आंगन के पार द्वार' और अज्ञेय' है। शाहजी हिंदी साहित्य में आधुनिकता और स्वतंत्रता के प्रतिपादक के रूप में अज्ञेय को स्मरण करते हैं। अज्ञेय के आगमन के साथ ही हिंदी साहित्य का आधुनिकीकरण सृजन और चिंतन दोनों स्तर पर होता है। अज्ञेय और रमेशचंद्र शाह दोनों यूरोपीय साहित्य और संस्कृति के गहरे अध्येता हैं। दोनों को यूरोपीय प्रभाव से गुरेज नहीं है; परंतु वे उसका भारतीयकरण करने पर बल देते हैं। संभवतः इसी समानता के कारण शाहजी को अज्ञेय अत्यंत प्रिय है। परंतु, आलोचक रमेशचंद्र शाह अपने प्रिय रचनाकार की आलोचना से भी पीछे नहीं हटते। 'आंगन के पार द्वार' काव्य-संग्रह पर टिप्पणी करते हुए श्री शाह लिखते हैं- "

'आंगन के पार द्वार' को पढ़ते हुए पहली बात जो ध्यान में आती है, वह यही कि इसकी कविताओं में पिछले संग्रहों की अपेक्षा काव्यवस्तु का और संवेदनात्मक प्रतिक्रियाओं का भी वैविध्य कम है। एक दूसरे से पृथक और विशिष्ट- यहाँ तक कि स्पष्टत: अंतर्विरोधी स्वरों की जटिल समृद्धि जो पिछले संग्रहों की विशेषता थी, यहाँ आते-आते एकाएक काफी विरल हो गई है और कवि की संवेदना निपट अंतर्मुखी एकाग्रता के साथ कुछ ही थोड़े से स्वरों में संयत और संहत हो गई है।"[10] चिंतक अज्ञेय कविता के श्रव्य से पठ्य बनने, संप्रेषण के बदलते रूप, आधुनिक मूल्य-बोध, संस्कार और संवेदना, संस्कृति और परिस्थिति, भारतीयता और परंपरा की निर्वैयक्तिक ढंग से व्याख्या करते हैं।

रमेशचंद्र शाह नई कविता के प्रमुख हस्ताक्षरों- विजयदेवनारायण साही, कुंवर नारायण, नरेश मेहता, रघुवीर सहाय, श्रीकांत वर्मा आदि पर गहन विचार करते हैं। कवि-आलोचक विजयदेवनारायण साही स्वातंत्र्योत्तर हिंदी आलोचना के प्रमुख स्तंभों में से एक हैं। साहीजी कवि भी बड़े हैं और आलोचक भी। अपने गुरु के सर्जक व्यक्तित्व पर टिप्पणी करते हुए श्रीशाह जी लिखते हैं- "यह आवाज जहाँ एक और अत्यंत वैयक्तिक और विशिष्ट जान पड़ती है, वहीं एक मार्मिक ढंग से निस्संग और निर्वैयक्तिक भी। आसक्ति और अनासक्ति, परिहास और गाम्भीर्य, आत्मीयता और ओज का वह एक ऐसा विलक्षण यौगिक है, जिसमें हमारी खंडित चेतना का हाहाकार भी है और एक अखंड अपनापे का आश्वासन भी, जिसमें भोक्ता भी है, और साक्षी भी।

*परम गुरु/दो तो ऐसी विनम्रता दो/की अंतहीन सहानुभूति की वाणी बोल सकूँ*
*और यह अंतहीन सहानुभूति/पाखंड न लगे।*
*दो तो ऐसा कलेजा दो/कि अपमान महत्वाकांक्षा और भूख*
*की गांठों में मरोड़े हुए/उन लोगों का माथा सहला सकूँ*
*और इसका डर न लगे/फिर कोई हाथ ही काट खाएगा।"*[11]

नवोन्मेषी कवि कुंवर नारायण स्वातंत्र्योत्तर हिंदी कविता में एक नई पहचान के साथ उपस्थित होते हैं। वे पुरातन कथ्य में आधुनिकतम भाव बोध भरने के लिए जाने जाते हैं। शाहजी की दृष्टि में कुंवर नारायण प्रेम को सर्वोच्च मूल्य मानते हैं। "कुंवर नारायण इस अर्थ में सच्चे आधुनिक कवि हैं : उनकी कविता सान का काम करती है- हमारी आज की प्रश्नाकुलता और अभिव्यक्ति पर धार चढ़ाने का, और उन्हें सचमुच नया करने का। 'प्यार' इस कवि के लिए सर्वोच्च मानव मूल्य है; किंतु भावुकता से निरपेक्ष, सर्वथा निर्भान्त रूप से...।"[12]

'संशय की एक रात' का कवि नरेश मेहता भी पुराकथाओं में आधुनिक रंग भरने में माहिर है। नरेश मेहता के राम संशय से ग्रस्त है। प्रश्नाकुल हैं और सामान्य व्यक्ति हैं। शाहजी ने रघुवीर सहाय के काव्य-संग्रह 'आत्महत्या के विरुद्ध' की गहन छानबीन की है और इस निष्कर्ष पर पहुँचते दिखाई देते हैं कि वह आत्म चेतना और बौद्धिक विकलता के कवि हैं। वे लिखते हैं- "रघुवीर सहाय की भौतिक विकलता केवल

सामाजिक-राजनीतिक जीवन की विसंगतियों को लेकर ही नहीं है : वह स्वयं उनके कविता के प्रति भी उन्मुख है।"[13]

श्रीकांत वर्मा की मगध संग्रह की कविताओं में मूल्य विपर्यय और मूल्य अन्वेषण की तलाश है। कवि कोशल और मगध जैसे ऐतिहासिक केंद्रों के माध्यम से इस मूल्य के अलग-अलग रूपों की पड़ताल करता है। उसे कोशल से एक रास्ता, मगध से दूसरा रास्ता और वर्तमान समय में मूल्य का एक नया रास्ता या रूप दिखाई देता है-

*"दुर्नीति पर चलें/नीति पर बहस बनाए रखें*
*दुराचरण करें/ सदाचार की चर्चा चलाएं रखें*
*असत्य कहें/असत्य करें/असत्य जिएँ*
*सत्य के लिए मर मिटने की आन नहीं छोड़े*
*अंत में प्राण/तो सभी छोड़ते हैं*
*व्यर्थ के लिए हम प्राण नहीं छोड़ें..."*[14]

प्रस्तुत संचयन में मुक्तिबोध और फणीश्वरनाथ रेणु के कथा साहित्य से संबंधित निबंध भी है। रमेशचंद्र शाह की दृष्टि में मुक्तिबोध की रचनाओं में जिस तरह का अंतर्द्वंद, जैसे- बाह्य यथार्थ और आतंरिक संवेदना, सौंदर्यानुभूति और जीवनानुभूति है। वे मानते हैं कि मुक्तिबोध के लिए कविता से ज्यादा उपन्यास उपयुक्त होता या अनुकूल होता। वे फणीश्वरनाथ रेणु को ध्वन्यात्मक संवेदना का कथाकार मानते हैं और ध्वनि-बिंब के माध्यम से उन्होंने 'परती परिकथा' का आलोचनात्मक विश्लेषण भी किया है। इस पुस्तक की खास विशेषता यह भी है कि इसमें तीन चिंतकों- निर्मल वर्मा, रामस्वरूप चतुर्वेदी और शामलाल के विचारों को समझने की कोशिश की गई है।

निर्मल जी के सांस्कृतिक विमर्श पर रमेशचंद्र शाह का विशेष ध्यान जाता है। वे मानते हैं कि कोई भी समाज या राष्ट्र अपने सांस्कृतिक दाय से संवाद के बिना मुरझा जाता है। इस संदर्भ में वे स्वातंत्र्योत्तर भारतीय बुद्धिजीवियों की खोज खबर लेते हैं। रामस्वरूप चतुर्वेदी को शाहजी हिंदी का बौद्धिक आलोचक मानते हैं। उन्होंने चतुर्वेदी जी को संस्कृति और परिस्थिति के विवेक से परिपूर्ण आलोचक भी कहा। चतुर्वेदी जी आलोचना की आधुनिक प्रविधि काव्य भाषा (बिंब और प्रतीक) को आधार बनाकर अर्थ का संधान करने वाले आलोचक हैं। शामलाल जी तेजतर्रार बौद्धिक पत्रकार रहे हैं। शाहजी उनकी पुस्तक 'ए हंड्रेड एनकाउंटर्स' से खासे प्रभावित रहे हैं, वे उनकी टिप्पणियों के कायल हैं।

प्रस्तुत पुस्तक का अंतिम भाग साक्षात्कार का है। इससे रमेशचंद्र शाह के सामान्य व्यक्ति से साहित्यिक व्यक्ति की मानसिक निर्मिति तक की यात्रा का पता चलता है। उनका सर्जनात्मक और आलोचनात्मक व्यक्तित्व, इलाहाबाद से भोपाल तक की यात्रा, अपने प्रिय कवि के साथ के क्षणों को

आत्मीयता के साथ स्मरण करना, अपने साहित्यिक लेखन से पूर्ण संतुष्टि का भाव यह साक्षात्कार प्रस्तुत करता है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि प्रोफेसर हनुमानप्रसाद शुक्ल ने अपनी अंतर्दृष्टि और विवेक से रमेशचंद्र शाह के वैविध्यपूर्ण आलोचनात्मक लेखन से इस संचयन को तैयार किया है। निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि जिस प्रकार आचार्य रामचंद्र शुक्ल के केंद्र में तुलसीदास हैं, हजारीप्रसाद द्विवेदी के कबीर हैं, रामविलास शर्मा के निराला है, उसी प्रकार रमेशचंद्र शाह के केंद्रीय रचनाकार अज्ञेय ही हैं। अज्ञेय के सर्जक और चिंतक दोनों रूपों से, समान रूप से अपने को संपृक्त भी करते हैं और अपने को अलगाकर मौलिक चिंतन भी प्रस्तुत करते हैं। अंतत: रमेशचंद्र शाह हिंदी के स्वत्रंत चेता तत्त्वाभिनिवेशी आलोचक की श्रेणी में हैं।

---

**संदर्भ एवं टिप्पणी -**

[1] रमेशचंद्र शाह वैसे तो किसी 'स्कूल' या 'गुटबंदी' के सदैव खिलाफ रहे हैं।

[2] शुक्ल, हनुमानप्रसाद & सिंह, विजया. (सं.). *जे बूड़े सब अंग*. दिल्ली : शिल्पायन पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स. पृष्ठ 09

[3] शुक्ल, हनुमानप्रसाद & सिंह, विजया. (सं.). *जे बूड़े सब अंग*. दिल्ली : शिल्पायन पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स. प्रस्तावना, पृष्ठ-14

[4] वही, पृष्ठ- 40

[5] वही, पृष्ठ- 66

[6] वही, पृष्ठ- 114

[7] वही, पृष्ठ- 117

[8] वही, पृष्ठ- 127

[9] वही, पृष्ठ- 134

[10] वही, पृष्ठ- 291

[11] वही, पृष्ठ- 210

[12] वही, पृष्ठ- 234-235

[13] वही, पृष्ठ- 341

[14] वही, पृष्ठ- 361

# डिजिटल मीडिया साक्षरता और फेक न्यूज़: समस्या एवं संभावित समाधान

**यादव आनन्दसेन रामनाथ***

**senanandbhu@gmail.com**

**विनय कुमार सिंह†**

**vidyarthi.vinay33@gmail.com**

**सारांश:**

डिजिटल युग में सूचना की पहुँच और प्रसार में अभूतपूर्व वृद्धि हुई है। एक ओर जहाँ इसने सूचना के लोकतंत्रीकरण को संभव बनाया है, वहीं दूसरी ओर फेक न्यूज़, भ्रामक सूचना, ट्रोलिंग और तथ्यहीन प्रचार जैसी गंभीर चुनौतियाँ भी सामने आई हैं। भारत में स्मार्टफोन और सोशल मीडिया की व्यापक पहुँच ने नागरिकों को न केवल सक्रिय बनाया है, बल्कि उन्हें गलत सूचना के प्रति अत्यधिक संवेदनशील बना दिया है। इस शोधपत्र में न्यू मीडिया के विकास, उसकी प्रमुख विशेषताओं तथा डिजिटल युग में नागरिक पत्रकारिता की भूमिका का विश्लेषण किया गया है। इसके अंतर्गत न्यू मीडिया की सामाजिक एवं राजनीतिक प्रभावशीलता, नागरिक सहभागिता तथा इसके द्वारा उत्पन्न चुनौतियों की विवेचना की गई है। साथ ही, सूचना के प्रसार और नियंत्रण से जुड़े प्रमुख कानूनी प्रावधानों की समीक्षा की गई है। यह अध्ययन डिजिटल युग में सूचना की शक्ति को संतुलित दृष्टिकोण से समझने और उसके सामाजिक प्रभावों का गहराई से विश्लेषण करने का प्रयास करता है।

**बीज शब्द:** डिजिटल युग, न्यू मीडिया, नागरिक पत्रकारिता, फेक न्यूज़, सोशल मीडिया, ट्रोलिंग।

## प्रस्तावना

डिजिटल युग में सूचना की पहुँच पहले से कहीं अधिक बढ़ गई है, जिससे समाज में सकारात्मक और नकारात्मक परिणाम सामने आए हैं। एक ओर जहाँ डिजिटल प्लेटफ़ॉर्म्स ने सूचना साझा करने की प्रक्रिया को अधिक लोकतांत्रिक बनाया है, वहीं दूसरी ओर फेक न्यूज़ और गलत सूचना के प्रसार के प्रमुख माध्यम भी बन गए हैं। मीडिया सिद्धांत विशेषज्ञों जैसे मार्शल मैक्लुहान और फ्रेडरिक किटलर का मानना है कि मीडिया

* **अनुवाद अध्ययन विभाग, महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा**

† **कला संकाय, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी**

केवल सूचना का वाहक नहीं है बल्कि यह मानव अनुभव और सामाजिक संरचना को भी पुनर्परिभाषित करता है। मार्शल (McLuhan, 1964) ने मीडिया को 'मानव तंत्रिका तंत्र का विस्तार' माना है।[1] जबकि किटलर (1999) के अनुसार, हमारी सामाजिक स्थिति और व्यवहार स्वयं मीडिया द्वारा निर्धारित होते हैं। इन विचारों से यह स्पष्ट होता है कि 'मीडिया और समाज के बीच संबंध द्वंद्वात्मक' (dialectical) है।"[2] Kittler, F. A. (1999). इसी संदर्भ में, "आधुनिक तकनीकी उपकरणों से यह अपेक्षा की गई कि वे न केवल कार्य के संगठन (Friedmann, 1978) बल्कि हमारे अवकाश गतिविधियों, सोचने के तरीकों (McLuhan, 1964) और समग्र सामाजिक संरचना (Ellul, 1964) को भी प्रभावित करेंगे।"[3] (Flichy, 2006) ई-गतिविधियाँ जैसे ऑनलाइन चर्चा, हैशटैग अभियान और वर्चुअल मंचों पर संवाद ने इस सहभागिता को और अधिक गहरा किया है।

न्यू मीडिया ने नागरिकों की आर्थिक, राजनीतिक और सामाजिक मुद्दों पर सक्रिय भागीदारी को बढ़ावा दिया है, जिससे जनसंचार और भी अधिक प्रभावशाली बन गया है। न्यू मीडिया ने पारंपरिक मीडिया की सीमाओं को चुनौती देते हुए संवाद, अभिव्यक्ति और सूचना प्रसारण को एक नया आयाम प्रदान किया है। हालांकि, सोशल मीडिया प्लेटफ़ॉर्म, जो त्वरित सूचना प्रसारण के उद्देश्य से विकसित किए गए थे, अब **फेक न्यूज़ के तेज़ और व्यापक प्रसार** का साधन बनते जा रहे हैं। इस चुनौती से निपटने के लिए केवल तकनीकी समाधान पर्याप्त नहीं हैं; इसके लिए **मीडिया साक्षरता**, **सामाजिक जागरूकता**, **कानूनी प्रावधानों** और **नीतिगत हस्तक्षेपों** की बहुस्तरीय रणनीति की आवश्यकता है।

**आलेख:**

**1. न्यू मीडिया और फेक न्यूज**

"न्यू मीडिया" शब्द केवल तकनीकी नवाचारों का प्रतिनिधित्व नहीं करता बल्कि यह मीडिया की प्रकृति और उसकी भूमिका को समझने के एक विशेष दृष्टिकोण की ओर संकेत करता है। डिजिटल मीडिया जहाँ सूचनाओं को अंकों में कोडित करता है, वहीं ऑनलाइन मीडिया आपसी जुड़ाव और इंटरनेट-आधारित संप्रेषण को केंद्र में रखता है। न्यू मीडिया इन दोनों विशेषताओं को समाहित करता है और इसके प्रभाव केवल तकनीकी नहीं बल्कि सामाजिक, सांस्कृतिक और व्यक्तिगत जीवन तक फैले हुए हैं। न्यू मीडिया की शुरुआत कंप्यूटर, इंटरनेट और मोबाइल तकनीकों के विस्तार के साथ हुई। इसने पारंपरिक मीडिया की सीमाओं को चुनौती देते हुए दो-तरफा संवाद (Two Way Communication) को बढ़ावा दिया है, जहाँ दर्शक केवल सूचना ग्रहणकर्ता नहीं बल्कि सक्रिय भागीदार भी हैं। सोशल मीडिया, ब्लॉग और चैट जैसे प्लेटफॉर्म उपयोगकर्ताओं को प्रतिक्रिया देने और चर्चा में भाग लेने का अवसर देते हैं। यह संवादात्मकता नागरिक पत्रकारिता, डिजिटल लोकतंत्र और समाजिक भागीदारी को मजबूती प्रदान करती है। "न्यू मीडिया ने पत्रकारिता और जनसंचार के ढांचे को जड़ से बदल दिया है। अब संवाद केवल एकतरफा न रहकर सहभागितापूर्ण, त्वरित और बहुआयामी बन गया है। डिजिटल प्लेटफ़ॉर्म्स जैसे सोशल मीडिया, ब्लॉग्स और

यूट्यूब ने आम लोगों को भी सूचनाओं के निर्माण और प्रसार में भागीदार बना दिया है, जिससे नागरिक पत्रकारिता को नई ऊर्जा मिली है।"[4] (Lister et al., 2009: p.13)। "न्यू मीडिया की प्रमुख विशेषताएँ, जैसे इंटरएक्टिविटी, हाइपरटेक्स्ट, नेटवर्किंग, और सिम्युलेशन, इसे पारंपरिक मीडिया से भिन्न बनाती हैं।"[5] (Jibril, Ibrahim, & Ibrahim, 2024)। न्यू मीडिया ने विशेष रूप से युवाओं को सशक्त किया है, जो इसका उपयोग न केवल जानकारी प्राप्त करने के लिए बल्कि अभिव्यक्ति और सामाजिक आंदोलनों में भाग लेने के लिए भी कर रहे हैं। हालांकि, इसका असर गलत सूचना और फेक न्यूज़ की बढ़ती चुनौती पर भी पड़ा है, जो सार्वजनिक धारणाओं को विकृत कर सकती है और चुनावी परिणामों को प्रभावित कर सकती है। इन परिवर्तनों के बावजूद, न्यू मीडिया ने सूचनाओं को अधिक लोकतांत्रिक, संवादात्मक और प्रभावशाली बना दिया है लेकिन साथ ही इसे लेकर गेटकीपिंग और जानकारी की सटीकता बनाए रखने की आवश्यकता भी बढ़ गई है।

"लेव मैनोविच (2001) ने न्यू मीडिया की प्रकृति को समझाने के लिए पाँच प्रमुख सिद्धांत प्रस्तुत किए हैं: संख्यात्मक प्रतिनिधित्व (Numerical Representation), जिसमें न्यू मीडिया वस्तुएं डिजिटल कोड से बनी होती हैं जिन्हें एल्गोरिदमिक रूप से संशोधित किया जा सकता है; मॉड्यूलरिटी (Modularity), जो दर्शाता है कि डिजिटल सामग्री विभिन्न स्वतंत्र इकाइयों जैसे चित्र, पाठ, या वीडियो से मिलकर बनती है, जो अपनी स्वतंत्र पहचान बनाए रखते हुए एक साथ जुड़ी होती हैं; स्वचालन (Automation), जिसमें कंप्यूटर एल्गोरिद्म के माध्यम से मीडिया निर्माण और संपादन की प्रक्रियाओं को स्वचालित किया जाता है; परिवर्तनीयता (Variability), जो यह दर्शाता है कि न्यू मीडिया सामग्री कई संस्करणों में मौजूद हो सकती है, जो उपयोगकर्ता की सहभागिता या डेटा इनपुट के आधार पर अनुकूलित की जा सकती है; और ट्रांसकोडिंग (Transcoding), वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा मीडिया और सांस्कृतिक डेटा को कंप्यूटर फॉर्मेट में रूपांतरित किया जाता है, जिससे जानकारी की संरचना और प्रस्तुति प्रभावित होती है। ये सिद्धांत न्यू मीडिया की विशिष्ट क्षमताओं को रेखांकित करते हैं, जो इसे पारंपरिक मीडिया से अलग बनाते हैं।"[6] (Manovich, 2001)

**फेक न्यूज और समाचार**

समाचार को कई तरीकों से परिभाषित किया गया है, जैसे "यह किसी हालिया, रोचक और महत्वपूर्ण घटना का विवरण (Kershner, 2005), ऐसी घटनाओं का विवरण जो लोगों को महत्वपूर्ण रूप से प्रभावित करती हैं (Richardson, 2007), या कुछ नया और विचित्र होने का नाटकीय विवरण (Jamieson और Campbell, 1997)। समाचार को अक्सर पत्रकारिता का परिणाम माना जाता है, जो "स्वतंत्र, विश्वसनीय, सटीक और व्यापक जानकारी" प्रदान करने की अपेक्षा की जाती है (Kovach और Rosenstiel, 2007)।"[7] (Tandoc, Lim, & Ling, 2017) वहीं, "फेक न्यूज़ को विभिन्न दृष्टिकोणों से परिभाषित किया गया है, जिसमें पत्रकारिता प्रमुख रही है, जबकि मनोविज्ञान, कंप्यूटर विज्ञान और राजनीतिक विज्ञान जैसे अन्य

क्षेत्रों ने भी इसमें योगदान दिया है। फेक न्यूज़ को सामान्यतः गलत सूचना (misinformation) के रूप में देखा जाता है। फेक न्यूज़ को छह रूपों में वर्गीकृत किया गया: व्यंग्य (satire), पैरोडी (parody), गढ़ी गई खबरें (fabrication), संदर्भों में हेरफेर (manipulation), राजनीतिक या वैचारिक उद्देश्यों हेतु प्रचार (propaganda), और भ्रामक विज्ञापन (advertising)।"[8] (Tandoc, Lim, & Ling, 2017)

"फेक न्यूज" गलत सूचना है, जो जानबूझकर या अनजाने में समाचार के रूप में फैलती है। इसका उद्देश्य लोगों को भ्रमित करना है। मीडिया में गलत सूचना कोई नई बात नहीं है जैसे 1938 में "The War of the Worlds" का रेडियो प्रसारण, जिसने लाखों लोगों को डरा दिया था।"[9] (Aïmeur, Amri, & Brassard, 2023) डिजिटल मीडिया ने समाचार की पारंपरिक परिभाषा को चुनौती दी है, जिससे नागरिक पत्रकारिता ने गैर-पत्रकारों को समाचार बनाने का अवसर दिया और सोशल मीडिया ने इसे और विस्तारित किया, जहां लोग अपने अनुभवों को समाचार के रूप में साझा करते हैं।

सोशल मीडिया और डिजिटल प्लेटफार्मों के बढ़ते उपयोग के कारण फेक न्यूज तेजी से फैलने लगी है। यह समाज पर नकारात्मक प्रभाव डाल सकती है, जैसे कि जनमत को प्रभावित करना और सामाजिक स्थिरता को खतरे में डालना। इसका मुकाबला करने के लिए मीडिया साक्षरता और तकनीकी उपायों की आवश्यकता है। "फेक न्यूज" को कॉलिन्स इंग्लिश डिक्शनरी में इस प्रकार परिभाषित किया गया है: "गलत और अक्सर सनसनीखेज जानकारी जो समाचार रिपोर्टिंग के रूप में प्रसारित की जाती है" The Cambridge Online Dictionary के अनुसार, "Deception" का अर्थ है "सत्य को छिपाने की क्रिया, विशेष रूप से किसी लाभ को प्राप्त करने के लिए।" धोखाधड़ी या छल की यह प्रक्रिया अक्सर लोगों के विश्वास, संदेह और तीव्र भावनाओं पर आधारित होती है, जो उन्हें स्पष्ट रूप से सोचने और निर्णय लेने से रोक सकती हैं।"[10] (Aïmeur et al., 2018)। फेक न्यूज के कारण सांप्रदायिक दंगे जैसे बड़ी संवेदनशील घटनाएँ सामने आई हैं। इन घटनाओं ने समाज में उथल-पुथल, धार्मिक तनाव और मानसिक परेशानी को जन्म दिया। फेक न्यूज ने यह सिद्ध कर दिया है कि यह हिंसा, सामाजिक विभाजन और राजनीतिक तनाव का कारण बन सकती है।

## 2.न्यू मीडिया और जनसंचार माध्यम

जनसंचार माध्यमों ने सामाजिक, आर्थिक और तकनीकी परिवर्तनों के कारण एकतरफा, अविभाजित संप्रेषण से विकसित होकर जटिल और परस्पर संवादात्मक नेटवर्क का रूप ले लिया है। "न्यू मीडिया", जो डिजिटलीकरण द्वारा संचालित है, व्यक्तिगत संचार के लिए व्यापक रूप से उपलब्ध विविध उपकरणों और प्लेटफार्मों को दर्शाता है। यह पारंपरिक मीडिया को पूरी तरह प्रतिस्थापित नहीं करता बल्कि प्रायः पहले से मौजूद प्रवृत्तियों को और अधिक विस्तारित और तीव्र करता है। इस श्रेणी में इंटरनेट के सार्वजनिक उपयोग जैसे ऑनलाइन समाचार, स्ट्रीमिंग सेवाएं, मंच और वेब शामिल हैं। यद्यपि नए मीडिया को

लेकर उत्साह और चिंता दोनों देखी जाती हैं, ये पारंपरिक मीडिया के अंत का संकेत नहीं देते, बल्कि उनके निरंतर रूपांतरण में योगदान करते हैं।[11] (McQuail, 2010)।

न्यू मीडिया और जनसंचार माध्यमों का विकास डिजिटल युग में महत्वपूर्ण बदलाव के रूप में देखा गया है। न्यू मीडिया पत्रकारिता डिजिटल प्लेटफॉर्म्स जैसे सोशल मीडिया, ब्लॉग और वेबसाइट्स के माध्यम से समाचार प्रसारित करती है, जिसमें जनता की भागीदारी और सूचनाओं का आदान-प्रदान तत्काल और इंटरैक्टिव तरीके से होता है। "न्यू मीडिया (New Media) ने पारंपरिक पत्रकारिता के आर्थिक ढांचे को चुनौती दी है, जिससे समाचार पत्रों की वित्तीय स्थिति प्रभावित हुई है। इंटरनेट ने सूचना का प्रमुख स्रोत बनकर पारंपरिक मीडिया की जगह ले ली है। इसके साथ ही **नागरिक पत्रकारिता** का उदय हुआ है, जिसमें आम नागरिक मोबाइल फोन, ब्लॉग और सोशल मीडिया के माध्यम से समाचार एकत्रित कर रहे हैं और प्रसारित कर रहे हैं। इससे अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता को बल मिला है और लोकतांत्रिक भागीदारी बढ़ी है। हालाँकि, इसमें गुणवत्ता और निष्पक्षता की कमी देखने को मिलती है क्योंकि कई बार बिना प्रमाण या तथ्यों के प्रचार होता है। नई मीडिया तकनीकों ने लोगों को संवाद और भागीदारी का अवसर दिया है लेकिन पत्रकारों के लिए चुनौती यह है कि वे भारी मात्रा में ऑनलाइन सामग्री में से सटीक और प्रासंगिक सूचना कैसे चुनें। सोशल मीडिया ने समाचारों को एकतरफा नहीं बल्कि संवादात्मक और साझेदारी वाला बना दिया है।"[12] (Rabindranath, 2011)

"तकनीकी रूप से उन्नत राष्ट्र डिजिटल क्रांति के दौर से गुजर रहे हैं, जो सामाजिक जीवन और संस्थाओं को नया स्वरूप दे रही है। नई मीडिया तकनीकों ने मानवीय संबंधों और शिक्षा, राजनीति व स्वास्थ्य जैसे क्षेत्रों को गहराई से प्रभावित किया है। इसी संदर्भ में क्रिस्टोफर जे. श्नाइडर ने Policing and Social Media: Social Control in an Era of New Media में कानून प्रवर्तन में सोशल मीडिया और पारंपरिक मीडिया के आपसी संबंधों की पड़ताल करते हैं। वो पारंपरिक सूचना प्रचार मॉडल को चुनौती देते हैं, जिसमें प्राधिकृत (authorized) सूत्रों द्वारा जानकारी मीडिया के माध्यम से जनता तक पहुंचाई जाती थी और दिखाते हैं कि किस प्रकार सोशल मीडिया ने इस प्रक्रिया को पूरी तरह बदल दिया है।"[13] (Wiest, 2017) इसका उद्देश्य पारंपरिक मीडिया की सीमाओं को पार करना और सूचना को बड़े पैमाने पर त्वरित तरीके से पहुंचाना है।

"न्यू मीडिया" 1960 के दशक से तकनीकी उपकरणों के उपयोग और सामाजिक व्यवस्थाओं को दर्शाता है। न्यू मीडिया की विशेषताएँ हैं—इंटरकनेक्टिविटी, इंटरएक्टिविटी, बहुपरयोगिता और सर्वव्यापकता। डिजिटलाइजेशन ने सूचना संप्रेषण को सरल और एकीकृत बनाया है। इस संचार क्रांति ने पारंपरिक मीडिया को चुनौती दी है और शक्ति को दर्शकों तथा डिजिटल कंपनियों की ओर स्थानांतरित किया है, जिससे संचार अब अधिक सहभागितापूर्ण और विकेंद्रीकृत हो गया है। वहीं, जनसंचार माध्यम एक व्यापक अवधारणा है, जिसमें पारंपरिक और आधुनिक दोनों प्रकार के माध्यम शामिल हैं, जो समाज में विचार, सूचना और मनोरंजन

का प्रसार करते हैं।[14] (McQuail, 2010)। भारत में फेक न्यूज के बढ़ते प्रभाव ने इन दोनों माध्यमों के बीच की सीमाओं को और भी धुंधला कर दिया है क्योंकि न्यू मीडिया प्लेटफार्म्स का प्रभाव त्वरित और दूरगामी होता है, जिससे राजनीतिक प्रचार और समाज में तनाव फैलाने की क्षमता में वृद्धि हुई है।

नागरिक पत्रकारिता, न्यू मीडिया का एक महत्वपूर्ण पहलू है, जिसमें आम लोग (जो पेशेवर पत्रकार नहीं होते) डिजिटल प्लेटफ़ॉर्म्स के माध्यम से समाचार साझा करते हैं। इसकी शुरुआत दक्षिण कोरिया की OhmyNews.com वेबसाइट से मानी जाती है, जो **"हर नागरिक एक रिपोर्टर है"** के सिद्धांत पर आधारित है।[15] (Gillmor, 2004)। यह ओपन-सोर्स मॉडल पर कार्य करता है, जिसमें आम नागरिकों को रिपोर्टिंग का अवसर दिया जाता है। यह पोर्टल मुख्यतः दक्षिण कोरिया की राजनीति और समाज पर केंद्रित है और पारंपरिक मीडिया की एकतरफा संरचना को चुनौती देता है। और सूचना के प्रसार में अधिक स्वतंत्रता प्रदान करता है। इसके जरिए नागरिक जनहित से जुड़ी घटनाओं पर ध्यान आकर्षित कर सकते हैं और मीडिया में सेंसरशिप के खिलाफ आवाज़ उठा सकते हैं, जो लोकतांत्रिक समाज के लिए महत्वपूर्ण है।

जनसंचार के सिद्धांत जैसे "एजेंडा सेटिंग, कल्टीवेशन थ्योरी, प्रचार मॉडल और फ्रेमिंग थ्योरी आदि स्पष्ट करते हैं कि मीडिया किस प्रकार विचारों और सूचना का निर्माण करता है तथा समाज को प्रभावित करता है।"[16] (McQuail & Windahl, 1993) मुख्यधारा मीडिया में गेटकीपिंग सिद्धांत के अनुसार मीडिया संगठन और संपादक यह तय करते हैं कि कौन-सी जानकारी प्रकाशित की जाएगी। जिससे एजेंडा तैयार करने, सूचना की गुणवत्ता और विश्वसनीयता बनाए रखने की कोशिश की जाती है हालाँकि, न्यू मीडिया में गेटकीपिंग की भूमिका कमजोर हो गई है। अब हर व्यक्ति प्रकाशक बन गया है, जिससे सूचनाओं का प्रवाह अधिक लोकतांत्रिक तो हुआ है, लेकिन इसके साथ ही प्रमाणीकरण (authentication) और विश्वसनीयता की समस्याएँ भी बढ़ी हैं। इस स्थिति में यह आवश्यक हो जाता है कि पारंपरिक और डिजिटल मीडिया के बीच संतुलन बनाते हुए सूचना के प्रवाह को नियंत्रित और विश्वसनीय बनाया जाए।

### 3. **न्यू मीडिया, कानून व्यवस्था और नैतिक दायित्व**

सोशल मीडिया, विशेष रूप से फेसबुक न्यूज फीड और WhatsApp ने फेक न्यूज के प्रसार को बढ़ावा दिया है। राजनीतिक ध्रुवीकरण, भावनात्मक सोच, पुष्टि पूर्वाग्रह और सोशल मीडिया एल्गोरिदम आदि इसके प्रमुख कारण हैं। इन प्लेटफार्मों के माध्यम से गलत सूचना का फैलाव जनमत को प्रभावित करता है। इस समस्या से निपटने के लिए तथ्यात्मक जानकारी का प्रसार और गलत सूचना को तुरंत चुनौती देना आवश्यक है। भारत में डिजिटल क्रांति ने सूचना की पहुँच बढ़ाई है लेकिन डिजिटल मीडिया साक्षरता की कमी ने फेक न्यूज को बढ़ावा दिया है। इसे रोकने के लिए पुलिस अनुसंधान एवं विकास ब्यूरो (BPRD) ने दिशा-निर्देश जारी किए हैं, जिनसे कानून प्रवर्तन एजेंसियाँ फेक न्यूज और डिजिटल धोखाधड़ी की पहचान कर सकें (Bureau of Police Research and Development, 2020)। यह जानकारी समाज में अशांति और

सांप्रदायिक तनाव को बढ़ावा देती है, इसलिए जागरूकता, तथ्यों की जाँच और विश्वसनीय स्रोतों का पालन करना अत्यंत महत्वपूर्ण है।[17] (Drishti IAS, 2020)।

1990 के दशक के आर्थिक उदारीकरण और "डिजिटल इंडिया" अभियान ने इंटरनेट की पहुँच को बढ़ाया परंतु इसके साथ ही गलत सूचना, विशेषतः सांप्रदायिक अफवाहें, एक गंभीर सामाजिक चुनौती बन गईं। चुनावों, धार्मिक आयोजनों और महामारी के समय सोशल मीडिया पर प्रसारित सामग्री ने सामाजिक सामस्यों को बढ़ावा दिया। मीडिया कन्वर्जेंस के चलते एक ही संदेश अब टेक्स्ट, वीडियो और इमेज के माध्यम से तेजी से फैलता है, जिससे फेक न्यूज की व्यापकता और प्रभाव दोनों बढ़े हैं। हालांकि IT अधिनियम 2000 और डिजिटल मीडिया नियम 2021 जैसे कानून मौजूद हैं, लेकिन सीमित निगरानी और राजनीतिक दुरुपयोग इनकी प्रभावशीलता को कम करते हैं।

न्यू मीडिया ने मुखयधारा के जनसंचार माध्यम (प्रिंट मीडिया, टेलीविज़न) के विपरीत जनसमुदाय को अपने विचार व्यक्त करने के लिए मंच प्रदान किया है। जो अपने रियल टाइम ट्वीट, ब्लॉग आदि सामाग्री के माध्यम से नागरिक पत्रकारिता की भूमिका निभाते है।और न्यू मीडिया को अधिक प्रभावशाली बनती है। लेकिन साथ ही कई अन्य चुनौतियों उत्पन्न करती है। इसमें फेक न्यूज़, ट्रोलिंग, तथ्यहीन प्रचार और व्यक्तिगत प्रतिष्ठा को नुकसान पहुँचाने जैसी समस्याएँ शामिल हैं। डिजिटल प्लेटफॉर्मों के दुरुपयोग से समाज में भ्रम और वैमनस्यता फैलाने की प्रवृत्ति भी देखी जा रही है। सूचना प्रौद्योगिकी अधिनियम, 2000 और उसके अधीन आने वाले विभिन्न प्रावधानों जैसे धारा 66A, 69A, 79(1), तथा 2021 व 2023 के आईटी नियमों के तहत सरकार ने सोशल मीडिया पर नियंत्रण स्थापित करने के प्रयास किए हैं।

भारत में सूचना प्रौद्योगिकी अधिनियम, 2000 और आईटी नियम, 2021 न्यू मीडिया को नियंत्रित करने का प्रयास करते हैं, लेकिन इनकी प्रभावशीलता डिजिटल साक्षरता की कमी, राजनीतिक दुरुपयोग और पारदर्शिता की चुनौतियों से प्रभावित होती है। कंटेंट मॉडरेशन, शिकायत निवारण और ट्रेसबिलिटी जैसे प्रावधान मौजूद हैं, फिर भी फेक न्यूज़, ध्रुवीकरण, ट्रोलिंग और साइबर बुलिंग जैसी समस्याएँ बनी हुई हैं। नैतिक रूप से न्यू मीडिया को तथ्यात्मकता, निजता और बौद्धिक संपदा का सम्मान करना चाहिए। एआई, डीपफेक और बॉट्स के ज़रिए फैलती फर्जी सूचनाएँ नई चुनौतियाँ उत्पन्न कर रही हैं, जिनका समाधान तकनीकी सुधार और जिम्मेदार उपयोग के माध्यम से संभव है।[18]

**4. डिजिटल मीडिया साक्षरता और संभावित समाधान**

भारत सरकार ने डिजिटल मीडिया साक्षरता बढ़ाने के लिए कई पहलें शुरू की हैं, जिनमें "डिजिटल इंडिया" कार्यक्रम 2015 में शुरू किया गया था, इसका उद्देश्य नागरिकों को डिजिटल रूप से सशक्त बनाना और भारतीय भाषाओं में डिजिटल संसाधनों की उपलब्धता सुनिश्चित करना है। इसके तहत सूचना प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में विभिन्न योजनाएं और नीतियां विकसित की गई हैं जिससे सरकारी सेवाओं और जानकारी तक सभी की पहुँच सुनिश्चित की जा सके (Govt. of India, n.d.)।[19] इसके अतिरिक्त, सूचना प्रौद्योगिकी (मध्यवर्ती

दिशा-निर्देश और डिजिटल मीडिया आचार संहिता) नियम, 2021 के तहत, डिजिटल मीडिया पर सामग्री के प्रकाशकों के लिए आचार संहिता और शिकायत निवारण तंत्र स्थापित किया गया है।[20] (Ministry of Information and Broadcasting, 2021). इसके अलावा, न्यू मीडिया विंग (NMV) सूचना और प्रसारण मंत्रालय के तहत स्थापित किया गया है, जो सोशल मीडिया पर गतिविधियों की निगरानी और नागरिक केंद्रित शासन को बढ़ावा देने का कार्य करता है। इन पहलों के माध्यम से सरकार डिजिटल मीडिया की गुणवत्ता और विश्वसनीयता सुनिश्चित करने के लिए प्रतिबद्ध है।

**संभावित समाधान:**

फेक न्यूज़ की पहचान करना आज के डिजिटल युग में अत्यंत आवश्यक हो गया है क्योंकि सोशल मीडिया पर झूठी खबरें तेज़ी से फैलती हैं और समाज पर गहरा प्रभाव डालती हैं। "फेक न्यूज़ अक्सर आधे-अधूरे तथ्यों, भ्रामक हेडलाइन, एडिट की गई तस्वीरों और पुराने वीडियो क्लिप्स के माध्यम से तैयार की जाती है, ताकि उसे सच्ची खबर जैसा दिखाया जा सके। ऐसी खबरों से बचने के लिए कुछ महत्वपूर्ण उपाय अपनाए जाने चाहिए, जैसे केवल *आकर्षक शीर्षक पढ़कर खबर साझा न करें, स्रोत की विश्वसनीयता की जांच करें, लेखक के बारे में जानकारी लें, सहायक तथ्यों और लिंक की पुष्टि करें, खबर की तिथि देखें कि वह पुरानी तो नहीं है, लेख की भाषा और प्रस्तुति की गुणवत्ता जांचें,* और अंततः किसी भी खबर को साझा करने से पहले फैक्ट-चेकिंग वेबसाइट जैसे Boomlive.in, Fastchecker.in या Snopes जैसी विश्वसनीय साइटों से सत्यापन अवश्य करें। इन उपायों से न केवल हम स्वयं को भ्रामक सूचना से बचा सकते हैं बल्कि समाज में जागरूकता भी फैला सकते हैं।"[21] (Narwal, B. 2018)

डिजिटल साक्षरता बढ़ाने के लिए सरकार और नागरिक समाज संगठनों को मिलकर प्रयास करने की आवश्यकता है। स्कूलों और कॉलेजों में डिजिटल मीडिया शिक्षा को पाठ्यक्रम का हिस्सा बनाया जाना चाहिए, ताकि युवा उपयोगकर्ता सूचना का मूल्यांकन और सत्यापन कर सकें। सरकारी अभियानों जैसे "डिजिटल इंडिया" और 'इनफॉर्मेशन लिटरेसी मिशन,' को ज़मीनी स्तर तक पहुँचाना महत्वपूर्ण है। सोशल मीडिया प्लेटफार्मों को फर्जी खबरों की पहचान के लिए टूल्स और रिपोर्टिंग विकल्प प्रदान करने चाहिए। मीडिया साक्षरता शिक्षा को बढ़ावा देना, आलोचनात्मक सोच विकसित करना, और ऑनलाइन सामग्री की विश्वसनीयता का मूल्यांकन करना जरूरी है। इसके लिए शैक्षिक और तथ्य-जांच प्रयासों को प्रोत्साहित करना चाहिए। सरकार, नागरिक समाज और निजी क्षेत्र का सहयोग, साथ ही व्यापक जागरूकता अभियानों की आवश्यकता है, जो फेक न्यूज के जोखिमों के बारे में नागरिकों को शिक्षित करें।

**निष्कर्ष:**

डिजिटल मीडिया साक्षरता केवल तकनीकी आवश्यकता नहीं बल्कि लोकतंत्र की रक्षा का अनिवार्य अंग बन चुकी है। एक जागरूक नागरिक ही डिजिटल मीडिया के माध्यम से सशक्त हो सकता है और समाज को सच्ची व सकारात्मक दिशा में ले जा सकता है। अतः सरकार, मीडिया कंपनियाँ, शिक्षण संस्थान और नागरिक

समाज को मिलकर एक समन्वित प्रयास करना चाहिए जिससे भारत डिजिटल रूप से साक्षर, उत्तरदायी और सुरक्षित बन सके। "मूल स्रोत की पहचान और क्रेडिट देना, नकली अकाउंट और बॉट्स की पहचान, और दृश्य सामग्री की सत्यता की पुष्टि पत्रकारिता के सत्यापन की महत्वपूर्ण प्रक्रिया हैं। इसके अलावा, सामग्री के अपलोड समय और भौगोलिक स्थिति की जांच, रीयल टाइम दर्शक संलग्नता, और क्राउडसोर्सिंग का उपयोग सत्यापन में सहायक होता है। हालांकि, वायरल सामग्री के जोखिमों को भी ध्यान में रखते हुए, पत्रकारों को सटीक और प्रभावी सत्यापन करना आवश्यक है।"[22] (UNESCO, 2018)

भारत में फेक न्यूज और गलत सूचना सार्वजनिक राय, सामाजिक सौहार्द और लोकतंत्र के लिए गंभीर चुनौती हैं। इससे निपटने के लिए डिजिटल साक्षरता, मजबूत नियामक ढाँचा और जिम्मेदार पत्रकारिता आवश्यक हैं। तथ्य-जांच, विश्वसनीय स्रोतों का उपयोग और नागरिकों की सजगता से फेक न्यूज के प्रभाव को कम किया जा सकता है। इसके लिए सरकार, मीडिया और समाज का सामूहिक सहयोग जरूरी है।

**संदर्भ :**

[1] McLuhan, M. (1964). *Understanding media: The extensions of man* (pp. 7–24). New York: McGraw-Hill.

[2] Kittler, F. A. (1999). *Gramophone, film, typewriter* (pp. xxxv.)(G. Winthrop-Young & M. Wutz, Trans.). Stanford University Press. (Original work published 1986)

[3] Flichy, P. (2006). New media history. In L. A. Lievrouw & S. Livingstone (Eds.), Handbook of new media: Social shaping and social consequences of ICTs (pp. 187–204). SAGE Publications.

[4] **Lister, M., Dovey, J., Giddings, S., Grant, I., & Kelly, K.** (2009). New Media: A Critical Introduction (2nd ed.). Routledge.

[5] **Jibril, U. F., Ibrahim, A. T., & Ibrahim, A. M.** (2024). Exploring misinformation in the context of online page cloning: An analysis of long-term societal impact and counter-strategies in Nigeria. Journal of Social Sciences Research, 2(4), 31–45. https://doi.org/10.5281/zenodo.14033190

[6] Manovich, L. (2001). The language of new media (pp. 49–55). MIT Press.

[7] Tandoc, E. C., Jr., Lim, Z. W., & Ling, R. (2018). Defining "fake news": A typology of scholarly definitions. Digital Journalism, 6(2), 137–153. https://doi.org/10.1080/21670811.2017.1360143

[8] Ibid (pp. 137-153)

[9] **Aïmeur, E., Amri, S., & Brassard, G.** (2023). Fake news, disinformation and misinformation in social media: A review. Social Network Analysis and Mining, 13(1), 30. https://doi.org/10.1007/s13278-023-01028-5

[10] Ibid

[11] McQuail, D., & Deuze, M. (2020). McQuail's media & mass communication theory (7th ed., pp. 171–172). SAGE Publications.

[12] Rabindranath, M. (2011). New media communication technologies and its influence on journalism. International Journal of Humanities and Social Sciences, 1(1), 10–12. Research India Publications. http://www.ripublication.com/ijhss.htm

[13] Wiest, J. B. (2017). Review: Social media and media logics shape policing in the digital age [Review of the book Policing and social media: Social control in an era of new media, by C. J. Schneider & D. L. Altheide]. Symbolic Interaction, 40(2), 275–277. https://www.jstor.org/stable/10.2307/90010320

[14] McQuail, D., & Deuze, M. (2020). McQuail's media & mass communication theory (7th ed., pp. 54). SAGE Publications.

[15] **Gillmor, D.** (2004). We the Media: Grassroots Journalism by the People, for the People. O'Reilly Media.

[16] McQuail, D., & Windahl, S. (1993). Communication models for the study of mass communications (2nd ed., pp. 13–56). Routledge.

[17] Drishti IAS. (2020, May 14). *फेक न्यूज़ को रोकने हेतु दिशा-निर्देश*. Retrieved from https://www.drishtiias.com/hindi/daily-updates/daily-news-analysis/guidelines-to-stop-fake-news

[18] Banasiewicz, G. (2022, November 5). *New media technologies, fake news, and disinformation: Challenges for the society* (MPRA Paper No. 115282, pp. 1–9). Cyber Security and Policy Research Institute. https://mpra.ub.uni-muenchen.de/115282/

[19] Govt. of India. (n.d.). *Digital India Programme*. Ministry of Electronics and Information Technology. Retrieved from https://www.digitalindia.gov.in

[20] Ministry of Information and Broadcasting. (2021). *Information Technology (Intermediary Guidelines and Digital Media Ethics Code) Rules, 2021*. Government of India. Retrieved from https://mib.gov.in

[21] Narwal, B. (2018, October). Fake news in digital media. In Proceedings of the International Conference on Advances in Computing, Communication Control and Networking (ICACCCN 2018) (pp. 979–980). IEEE. https://doi.org/10.1109/ICACCCN.2018.8748586

[22] UNESCO. (2018). Journalism, 'Fake News' & Disinformation: Handbook for Journalism Education and Training (pp. 96-100). UNESCO Series on Journalism Education. https://doi.org/10.5440/1221557

# मानस एग्रो इंडस्ट्रीज एंड इंफ्रास्ट्रक्चर लिमिटेड की वित्तीय तरलता का विश्लेषण: वर्तमान अनुपात और त्वरित अनुपात के आधार पर (2019-2022)

**डॉ. रविन्द्र तु. बोरकर*** **श्रीराम बालेकर†**

**rvborkar123@gmail.com** **balekar.shreeram@gmail.com**

***सारांश (Abstract):***

*यह शोध पत्र मानस एग्रो इंडस्ट्रीज एंड इंफ्रास्ट्रक्चर लिमिटेड की अल्पकालिक वित्तीय स्थिति का विश्लेषण करता है, जिसमें मुख्य रूप से वर्तमान अनुपात (Current Ratio) और त्वरित अनुपात (Quick Ratio) के आँकड़ों के आधार पर 2019-2020 से 2021-2022 तक की वित्तीय स्थिति की समीक्षा की गई है। वर्तमान अनुपात और त्वरित अनुपात दो महत्वपूर्ण वित्तीय संकेतक हैं जो, कंपनी की तरलता (liquidity) और उसकी अल्पकालिक देनदारियों को चुकाने की क्षमता को दर्शाते हैं। अध्ययन में पाया गया कि इन तीन वर्षों के दौरान दोनों अनुपातों में लगातार गिरावट आई है, जो कंपनी की कमजोर होती तरलता की ओर संकेत करता है। इसके पीछे प्रमुख कारणों में वर्तमान परिसंपत्तियों में कमी, इन्वेंटरी पर निर्भरता, और मौजूदा देनदारियों में वृद्धि शामिल हैं। यह विश्लेषण व्यवसायिक निर्णय लेने की प्रक्रिया में सहायक हो सकता है और कंपनियों को तरलता प्रबंधन के महत्व को समझने में सहायता प्रदान करता है।*

***मुख्य शब्द (Key Words)*** *: वर्तमान अनुपात (Current Ratio), त्वरित अनुपात (Quick Ratio), वित्तीय तरलता (Financial Liquidity), अल्पकालिक देनदारियाँ (Short-term Liabilities), वर्तमान परिसंपत्तियाँ (Current Assets)*

## परिचय (Introduction)

मानस एग्रो इंडस्ट्रीज एंड इंफ्रास्ट्रक्चर लिमिटेड (Manas Agro Industries and Infrastructure Limited) विदर्भ क्षेत्र कि एक प्रमुख चीनी उत्पादक कंपनी है। कंपनी के वित्तीय स्वास्थ्य का मूल्यांकन उसके तरलता अनुपातों से किया जा सकता है, जो यह दर्शाते हैं कि कंपनी अपनी अल्पकालिक देनदारियों को चुकाने में कितनी सक्षम है। इन वित्तीय अनुपातों में प्रमुख स्थान वर्तमान अनुपात (Current Ratio) और त्वरित अनुपात (Quick Ratio) का है, जो कंपनी की लिक्विडिटी (liquidity) और अल्पकालिक वित्तीय स्थिति को मापने के लिए उपयोगी होते हैं। इस शोध का मुख्य उद्देश्य मानस एग्रो इंडस्ट्रीज एंड इंफ्रास्ट्रक्चर लिमिटेड के वर्तमान अनुपात और त्वरित अनुपात का विश्लेषण करना है, ताकि कंपनी की वित्तीय स्थिरता और तरलता स्थिति को समझा जा सके। 2019-2020 से 2021-2022 तक के वित्तीय वर्षों में इन अनुपातों में आए परिवर्तनों का अध्ययन करते हुए, यह शोध यह समझने का प्रयास करेगा कि कंपनी की तरलता में

* **एसोसिएट प्रोफेसर, वाणिज्य और प्रबंधन विभाग, म. गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा**

† **शोधार्थी, वाणिज्य और प्रबंधन विभाग, महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा**

गिरावट के कारण क्या रहे, जैसे कि मौजूदा परिसंपत्तियों में कमी, इन्वेंटरी की स्थिति, और बढ़ती देनदारियाँ। इस शोध के परिणाम न केवल मानस एग्रो इंडस्ट्रीज एंड इंफ्रास्ट्रक्चर लिमिटेड के लिए महत्वपूर्ण होंगे, बल्कि यह निवेशकों, कर्जदाताओं और अन्य स्टेकहोल्डर्स को कंपनी की वित्तीय स्थिति की बेहतर समझ प्रदान करेगा। इसके अलावा, यह शोध कंपनियों के वित्तीय प्रबंधन में सुधार के लिए उपयुक्त सुझाव प्रदान करने का प्रयास करेगा, जिससे वे अपनी तरलता स्थिति को मजबूत बना सकें और भविष्य में वित्तीय संकट से बच सकें।

**शोध के उद्देश्य (Objectives of the Research Paper):**

मानस एग्रो इंडस्ट्रीज एंड इंफ्रास्ट्रक्चर लिमिटेड की वित्तीय तरलता का विश्लेषण करना।

**शोध विधि (Research Methodology)**

इस शोध में वर्णनात्मक (Descriptive) और मात्रात्मक (Quantitative) अनुसंधान पद्धति का प्रयोग किया गया है, जिसका उद्देश्य मानस एग्रो इंडस्ट्रीज एंड इंफ्रास्ट्रक्चर लिमिटेड की वित्तीय तरलता स्थिति का विश्लेषण करना है। अध्ययन के लिए द्वितीयक डेटा (Secondary Data) का उपयोग किया गया, जो कंपनी की आधिकारिक वित्तीय रिपोर्टों, बैलेंस शीट्स, और वार्षिक रिपोर्टों से संग्रहित किया गया है। शोध की अवधि वित्तीय वर्ष 2019-2020 से 2021-2022 तक रखी गई है, जिससे कंपनी के तीन वर्षों के वर्तमान अनुपात (Current Ratio) और त्वरित अनुपात (Quick Ratio) में आए परिवर्तनों का तुलनात्मक विश्लेषण किया जा सके। इन अनुपातों की गणना निम्नलिखित सूत्रों द्वारा की गई:

- Current Ratio = Current Assets / Current Liabilities
- Quick Ratio = (Current Assets – Inventory) / Current Liabilities

डेटा का विश्लेषण तालिकाओं और अनुपातों के आधार पर किया गया है, ताकि यह स्पष्ट रूप से समझा जा सके कि समय के साथ कंपनी की तरलता स्थिति में किस प्रकार का बदलाव आया है।

**तरलता अनुपात (Liquidity Ratio)**

**Table 1. वर्तमान अनुपात (Current Ratio)**

| वर्ष (Year) | वर्तमान संपत्ती (Current Assets) | वर्तमान देनदरिया (Current liability) | वर्तमान अनुपात (Current Ratio) |
|---|---|---|---|
| **2019-2020** | 6,46,71,85,661 | 5,06,44,39,995 | 1.28 |
| **2020-2021** | 5,21,90,44,581 | 5,36,38,03,309 | 0.97 |
| **2021-2022** | 4,05,49,22,000 | 6,09,08,04,000 | 0.67 |

Table 1 ) स्रोत: चीनी उद्योग की वार्षिक रिपोर्ट (कॉर्पोरेट मामलों के मंत्रालय (MCA) की वेबसाइट और चीनी उद्योग के कॉर्पोरेट कार्यालय)

उपरोक्त तालिका "Table 1. Current Asset Ratio" में तीन वित्तीय वर्षों (2019-2020, 2020-2021, और 2021-2022) के लिए कंपनी की मौजूदा परिसंपत्तियों (Current Assets), मौजूदा देनदारियों (Current Liabilities), और करंट एसेट रेशियो (Current Asset Ratio) को दर्शाया गया है। वर्ष 2019-2020 में कंपनी का वर्तमान अनुपात 1.28 था, जो दर्शाता है कि कंपनी की मौजूदा परिसंपत्तियाँ उसकी देनदारियों से अधिक है और वह अपनी अल्पकालिक देनदारियों को आसानी से चुका सकती है। लेकिन अगले वर्षों में यह अनुपात घटता गया। 2020-2021 में वर्तमान अनुपात 0.97 हो गया, जिसका अर्थ है कि कंपनी की मौजूदा परिसंपत्तियाँ उसकी देनदारियों के लगभग बराबर हो गईं, जिससे उसकी वित्तीय तरलता पर थोड़ा प्रभाव पड़ा। 2021-2022 में तरलता और भी बिगड़ी, जब वर्तमान अनुपात घटकर 0.67 हो गया, जो यह दर्शाता है कि कंपनी के पास अपनी अल्पकालिक देनदारियों को चुकाने के लिए पर्याप्त परिसंपत्तियाँ नहीं थीं। यह एक चिंताजनक संकेत है और यह कंपनी की तरलता (liquidity) की स्थिति को कमजोर दर्शाता है। कंपनी के वर्तमान अनुपात में कमी आने के कई कारण हो सकते हैं, जो अल्पकालिक वित्तीय स्थिति को प्रभावित करते हैं। जब कंपनी की मौजूदा परिसंपत्तियाँ (जैसे नकद, इन्वेंट्री या बकाया राशि) घट जाती हैं, जैसे कि घाटे के कारण, कम बिक्री, या नकदी का उपयोग दीर्घकालिक निवेशों में करने से, तो वर्तमान अनुपात नीचे आ जाता है। वहीं, अगर कंपनी की मौजूदा देनदारियाँ (जैसे कि शॉर्ट टर्म लोन, सप्लायर्स को भुगतान, या अन्य खर्चे) तेजी से बढ़ती हैं, तो भी वर्तमान अनुपात कम हो जाता है। इसके अलावा, अगर कंपनी के पास अनावश्यक या बिकने में कठिन इन्वेंट्री जमा हो जाती है, तो वह भी परिसंपत्तियों में होते हुए भी देनदारियों को चुकाने में मदद नहीं करती। कभी-कभी कंपनियाँ अपने विस्तार या दीर्घकालिक प्रोजेक्ट्स में निवेश के लिए शॉर्ट टर्म फाइनेंसिंग का सहारा लेती हैं, जिससे नकदी की कमी होती है और देनदारियाँ बढ़ जाती हैं। इन सभी कारणों से कंपनी की तरलता कमजोर होती है और उसका वर्तमान अनुपात घटता है।

**Table 2. त्वरित अनुपात (Quick Ratio)**

| वर्ष (Year) | वर्तमान संपत्ती (Current Assets) | इन्वेंटरी (Inventory) | वर्तमान देनदरिया (Current liability) | वर्तमान अनुपात (Current Ratio) |
|---|---|---|---|---|
| **2019-2020** | 6,46,71,85,661 | 1,79,67,59,068 | 5,06,44,39,995 | 0.92 |
| **2020-2021** | 5,21,90,44,581 | 1,78,18,18,477 | 5,36,38,03,309 | 0.64 |
| **2021-2022** | 4,05,49,22,000 | 1,61,79,90,000 | 6,09,08,04,000 | 0.40 |

Table 2 ) स्रोत: चीनी उद्योग की वार्षिक रिपोर्ट (कॉर्पोरेट मामलों के मंत्रालय (MCA) की वेबसाइट और चीनी उद्योग के कॉर्पोरेट कार्यालय)

तालिका 2 "त्वरित अनुपात (Quick Ratio)" तीन वर्षों (2019-2020, 2020-2021, और 2021-2022) में कंपनी की त्वरित वित्तीय स्थिति को दर्शाती है। त्वरित अनुपात यह मापता है कि कंपनी के पास कितनी शीघ्र नकदी में बदलने योग्य परिसंपत्तियाँ (Current Assets – Inventory) हैं, जो वह अपनी

अल्पकालिक देनदारियों को चुकाने में उपयोग कर सकती है। वर्ष 2019-2020 में त्वरित अनुपात 0.92 था, जो यह संकेत देता है कि कंपनी अपनी शॉर्ट टर्म देनदारियों को लगभग पूरा चुकाने में सक्षम थी, यदि केवल तरल परिसंपत्तियों को ध्यान में रखा जाए। लेकिन 2020-2021 में यह घटकर 0.64 हो गया, और 2021-2022 में और गिरकर मात्र 0.40 रह गया, जो कंपनी की तरलता स्थिति में लगातार गिरावट को दर्शाता है। इस गिरावट का कारण यह है कि इन तीन वर्षों में न केवल वर्तमान परिसंपत्तियाँ कम हुई, बल्कि इन्वेंटरी में भी हल्की कमी आई, जबकि देनदारियाँ तेजी से बढ़ीं। चूँकि इन्वेंटरी को त्वरित परिसंपत्ति नहीं माना जाता, इसलिए इसका अनुपात में शामिल न होना कंपनी की भुगतान क्षमता को और भी कमजोर दिखाता है। लगातार घटता त्वरित अनुपात यह दर्शाता है कि कंपनी की अल्पकालिक वित्तीय स्थिति कमजोर होती जा रही है और उसे तुरंत नकद उपलब्ध कराने वाली परिसंपत्तियाँ पर्याप्त नहीं हैं।

## निष्कर्ष (Conclusion)

इस शोध पत्र में मानस एग्रो इंडस्ट्रीज एंड इंफ्रास्ट्रक्चर लिमिटेड के वर्तमान अनुपात (Current Ratio) और त्वरित अनुपात (Quick Ratio) का विश्लेषण किया गया, जिससे कंपनी की अल्पकालिक वित्तीय स्थिति और तरलता की स्थिति को समझा जा सका। तीन वित्तीय वर्षों (2019-2020 से 2021-2022) के दौरान वर्तमान अनुपात और त्वरित अनुपात में निरंतर गिरावट आई, जो यह दर्शाता है कि कंपनी की वित्तीय स्थिति में कमजोरियाँ आ रही हैं। 2019-2020 में कंपनी का वर्तमान अनुपात 1.28 था, जो संकेत करता था कि कंपनी अपनी अल्पकालिक देनदारियों को आसानी से चुकाने में सक्षम थी। लेकिन, अगले वर्षों में यह अनुपात घटकर 0.97 और फिर 0.67 हो गया, जो यह दर्शाता है कि कंपनी की तरलता स्थिति में गिरावट आई है। इसी तरह, त्वरित अनुपात भी 0.92 से घटकर 0.40 तक पहुँच गया, जिससे यह स्पष्ट हुआ कि कंपनी के पास अपनी अल्पकालिक देनदारियों को चुकाने के लिए पर्याप्त शीघ्र नकद परिसंपत्तियाँ नहीं हैं।

इस शोध से यह निष्कर्ष निकलता है कि मानस एग्रो इंडस्ट्रीज एंड इंफ्रास्ट्रक्चर लिमिटेड को अपनी वित्तीय रणनीतियों पर पुनः विचार करने की आवश्यकता है, विशेष रूप से अपनी तरलता स्थिति को सुधारने के लिए। इसके लिए कंपनी को अपनी मौजूदा परिसंपत्तियों को बढ़ाने, इन्वेंटरी को बेहतर तरीके से प्रबंधित करने और शॉर्ट-टर्म लोन की मांग को नियंत्रित करने की आवश्यकता है। इसके अतिरिक्त, कंपनी को अपनी वित्तीय योजना में सुधार करके, दीर्घकालिक निवेशों के लिए अल्पकालिक फाइनेंसिंग का उपयोग कम करना चाहिए। अंततः, यह शोध निवेशकों और वित्तीय संस्थानों के लिए एक महत्वपूर्ण संकेतक हो सकता है, जो कंपनी के तरलता स्थिति और वित्तीय स्थिरता के बारे में बेहतर जानकारी प्राप्त करने में सहायता प्रदान करेगा। यह शोध भविष्य में मानस एग्रो इंडस्ट्रीज एंड इंफ्रास्ट्रक्चर लिमिटेड और अन्य कंपनियों के लिए वित्तीय प्रबंधन और तरलता स्थिति सुधारने के उपायों पर काम करने का आधार प्रदान करता है।

## संदर्भ (References)

Bhat, M. R. (2014). Financial Management and Policy (4th ed.). S. Chand & Company Ltd.

Gupta, S. P. (2012). Statistical Methods (43rd ed.). Sultan Chand & Sons.

Hampton, J. J. (2011). Financial Decision Making: Concept, Problems, and Cases (5th ed.). Pearson Education India.

Indian Sugar Mills Association (ISMA). (Various Years). Annual Reports and Statistical Reports. https://www.indiansugar.com

Jain, P. K. (2011). Economic Analysis of Sugar Industry in India. Regal Publications.

Kothari, C. R. (2004). Research Methodology: Methods and Techniques (2nd ed.). New Age International Publishers.

Krishnaswami, O. R., & Ranganatham, M. (2010). Methodology of Research in Social Sciences. Himalaya Publishing House.

Kumar, R. (2014). Research Methodology: A Step-by-Step Guide for Beginners (4th ed.). SAGE Publications.

Prasanna Chandra. (2011). Financial Management: Theory and Practice (8th ed.). Tata McGraw-Hill Education.

Reddy, T. S., & Appannaiah, H. (2012). Financial Management (2nd ed.). Himalaya Publishing House.

Reddy, Y. V., & Yadav, K. P. (2017). Performance of Sugar Industry in India: A Study of Trends and Patterns. Lambert Academic Publishing.

Singh, R. L. (2015). Sugar Industry in India: Development and Prospects. Deep & Deep Publications.

Sudhindra Bhat, M. (2010). Financial Management (1st ed.). Himalaya Publishing House.

Tripathi, P. C. (2011). A Textbook of Research Methodology in Social Sciences. Sultan Chand & Sons.

Vohra, N. D., & Vohra, R. (2012). Financial Management: Text and Cases (2nd ed.). McGraw-Hill Education India.

# भारत में गरीबी उन्मूलन हेतु सरकारी प्रयास: योजनाओं का विश्लेषण और प्रभाव

**उपेन्द्र कुमार***

**upendrasadat@gmail.com**

**सार (Abstract):**

भारत में गरीबी एक बहुआयामी चुनौती रही है, जिसके समाधान के लिए सरकार ने स्वतंत्रता के बाद से विभिन्न योजनाएँ और कार्यक्रम शुरू किए हैं। यह शोध पत्र भारत सरकार द्वारा गरीबी उन्मूलन के लिए किए गए प्रयासों का विश्लेषण करता है जिसमें प्रमुख योजनाओं जैसे महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम (MGNREGA), प्रधानमंत्री आवास योजना (PMAY) और जन धन योजना (PMJDY) आदि का अध्ययन शामिल है। यह पत्र इन योजनाओं के उद्देश्यों, कार्यान्वयन, प्रभाव और चुनौतियों का मूल्यांकन करता है। साथ ही, यह गरीबी की दर में कमी और सामाजिक-आर्थिक विकास पर इन प्रयासों के प्रभाव को जांचता है। शोध के निष्कर्ष बताते हैं कि यद्यपि सरकार के प्रयासों ने गरीबी को कम करने में महत्वपूर्ण योगदान दिया है, फिर भी भ्रष्टाचार, संसाधनों का असमान वितरण और कार्यान्वयन में कमियां जैसे मुद्दे इन योजनाओं की प्रभावशीलता को सीमित करते हैं। यह पत्र नीति निर्माताओं के लिए अधिक समावेशी और प्रभावी रणनीतियों के लिए सुझाव भी प्रस्तुत करता है।

**बीज शब्द (Keyword):** गरीबी उन्मूलन, वित्तीय समावेशन, ग्रामीण विकास, सामाजिक सुरक्षा।

**परिचय (Introduction):**

भारत, विश्व की सबसे बड़ी अर्थव्यवस्थाओं में से एक होने के बावजूद, गरीबी की जटिल और बहुआयामी चुनौती से जूझ रहा है। गरीबी केवल आर्थिक अभाव तक सीमित नहीं है, बल्कि यह शिक्षा, स्वास्थ्य, स्वच्छता, आवास और सामाजिक समानता जैसे क्षेत्रों में कमी को भी दर्शाती है। विश्व बैंक के अनुसार, गरीबी वह स्थिति है जिसमें व्यक्ति की आय $1.90 प्रतिदिन से कम हो और 2011 में भारत की 21.9% आबादी इस रेखा से नीचे थी (World Bank, 2011)। इसके अतिरिक्त, संयुक्त राष्ट्र के वैश्विक बहुआयामी गरीबी सूचकांक (MPI) 2018 के अनुसार, 2005-06 से 2015-16 के बीच भारत में 271 मिलियन लोग गरीबी से बाहर आए जो सरकारी प्रयासों की सफलता को दर्शाता है, लेकिन यह भी संकेत

* **शोधार्थी, समाजशास्त्र विभाग, श्री दुर्गा जी पी. जी. कालेज, चण्डेश्वर, आजमगढ़ (उ.प्र.)**
**वीर बहादुर सिंह पूर्वांचल विश्वविद्यालय, जौनपुर (उ.प्र.)**

करता है कि अभी भी लाखों लोग गरीबी के दुष्चक्र में फंसे हैं (UNDP, 2018)। भारत में गरीबी के कारण ऐतिहासिक, सामाजिक और आर्थिक कारकों का मिश्रण हैं। औपनिवेशिक शासन के दौरान संसाधनों का शोषण, सामाजिक-आर्थिक असमानता और कृषि पर अत्यधिक निर्भरता ने गरीबी को गहरा किया (वर्मा, 2019)। स्वतंत्रता के बाद, भारत सरकार ने गरीबी उन्मूलन को अपनी नीतियों का केंद्र बिंदु बनाया। डॉ. रमेश कुमार (2020) के अनुसार, स्वतंत्रता के बाद शुरू की गई विभिन्न योजनाएँ और नीतियाँ, जैसे पंचवर्षीय योजनाएँ, ग्रामीण विकास और सामाजिक कल्याण पर केंद्रित थीं, जिनका उद्देश्य गरीबों की आर्थिक स्थिति को सुदृढ़ करना था (कुमार, 2020)। हालांकि, प्राकृतिक आपदाएँ, जैसे सूखा और बाढ़ और जलवायु परिवर्तन के प्रभाव ने विशेष रूप से ग्रामीण गरीबों की आजीविका को प्रभावित किया है जिससे नीतिगत हस्तक्षेपों की आवश्यकता और बढ़ गई है (कुमार, 2017)। 1950 के दशक से शुरू हुई पंचवर्षीय योजनाओं ने गरीबी उन्मूलन के लिए बुनियादी ढांचा विकास और औद्योगीकरण पर जोर दिया। प्रो. संजय शर्मा (2018) ने अपनी पुस्तक में बताया कि 1970 और 1980 के दशक में एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम (IRDP) और गाँवों में रोजगार के लिए प्रशिक्षण (TRYSEM) जैसे कार्यक्रमों ने ग्रामीण गरीबों के लिए स्वरोजगार और कौशल विकास को बढ़ावा दिया (शर्मा, 2018)। 1990 के दशक में आर्थिक उदारीकरण के बाद, सरकार ने अधिक लक्षित दृष्टिकोण अपनाया जिसमें सामाजिक सुरक्षा, खाद्य सुरक्षा और वित्तीय समावेशन पर विशेष ध्यान दिया गया। प्रो. अशोक कुमार (2016) ने इस परिवर्तन को "गरीबी उन्मूलन के लिए एक समग्र रणनीति" के रूप में वर्णित किया जो आर्थिक विकास को सामाजिक कल्याण के साथ जोड़ता है (कुमार, 2016)।

हाल के दशकों में, भारत ने गरीबी की दर में उल्लेखनीय कमी देखी है। नीति आयोग (2020) के अनुसार, 2004-05 से 2011-12 के बीच भारत में गरीबी की दर 37.2% से घटकर 21.9% हो गई (NITI Aayog, 2020)। यह प्रगति आर्थिक विकास, सरकारी योजनाओं और तकनीकी नवाचारों, जैसे प्रत्यक्ष लाभ हस्तांतरण (DBT), के संयुक्त प्रभाव का परिणाम है। फिर भी, क्षेत्रीय और सामाजिक असमानताएँ बनी हुई हैं। डॉ. मीना सिंह (2021) ने शहरी गरीबी पर अपने अध्ययन में बताया कि शहरी क्षेत्रों में झुग्गी-झोपड़ियों और बेघर आबादी के लिए विशेष हस्तक्षेपों की आवश्यकता है क्योंकि शहरी गरीबी ग्रामीण गरीबी से भिन्न चुनौतियाँ प्रस्तुत करती है (सिंह, 2021)। इसी तरह, बिहार और उत्तर प्रदेश जैसे राज्यों में उच्च गरीबी दर की तुलना में केरल और पंजाब में कम गरीबी दर नीतियों के असमान प्रभाव को दर्शाती है। यह शोध पत्र भारत में गरीबी उन्मूलन के लिए सरकार के प्रयासों का गहन विश्लेषण प्रस्तुत करता है। यह पत्र प्रमुख सरकारी योजनाओं, जैसे महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम (MGNREGA), प्रधानमंत्री आवास योजना (PMAY) और जन धन योजना (PMJDY) के उद्देश्यों, कार्यान्वयन, प्रभाव और चुनौतियों पर प्रकाश डालता है। डॉ. अंजलि वर्मा (2019) ने अपनी पुस्तक में तर्क दिया कि गरीबी उन्मूलन के लिए केवल आर्थिक नीतियाँ पर्याप्त नहीं हैं; सामाजिक समावेशन और लैंगिक समानता जैसे पहलुओं को भी नीतियों में शामिल करना आवश्यक है (वर्मा, 2019)। यह अध्ययन नीति निर्माताओं, शोधकर्ताओं और

सामाजिक कार्यकर्ताओं के लिए उपयोगी अंतर्दृष्टि प्रदान करने का प्रयास करता है ताकि भारत 2030 तक संयुक्त राष्ट्र के सतत विकास लक्ष्य (SDG) के पहले लक्ष्य सभी रूपों में गरीबी को समाप्त करना।

**उद्देश्य (Objectives):**

- भारत में गरीबी की स्थिति और इसके कारणों का अध्ययन करना।
- गरीबी उन्मूलन के लिए भारत सरकार द्वारा शुरू की गई प्रमुख योजनाओं का विश्लेषण करना।
- इन योजनाओं के कार्यान्वयन और प्रभाव का मूल्यांकन करना।
- गरीबी उन्मूलन कार्यक्रमों की चुनौतियों और सीमाओं की पहचान करना।
- भविष्य में अधिक प्रभावी नीतियों के लिए सुझाव देना।

**प्रमुख सरकारी योजनाएँ (Major Government Schemes):**

भारत सरकार ने गरीबी उन्मूलन के लिए एक समग्र और बहुआयामी दृष्टिकोण अपनाया है जिसके तहत ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों में गरीबों की आर्थिक, सामाजिक और बुनियादी जरूरतों को संबोधित करने वाली कई योजनाएँ शुरू की गई हैं। ये योजनाएँ रोजगार सृजन, खाद्य सुरक्षा, वित्तीय समावेशन, आवास और सामाजिक सुरक्षा जैसे क्षेत्रों पर केंद्रित हैं। प्रत्येक योजना का डिज़ाइन और कार्यान्वयन गरीबी के विभिन्न पहलुओं को लक्षित करता है, जिससे लाखों परिवारों का जीवन स्तर बेहतर हुआ है। निम्नलिखित कुछ प्रमुख योजनाओं का वर्णन है जो भारत के गरीबी उन्मूलन प्रयासों की आधारशिला हैं:

**राष्ट्रीय सामाजिक सहायता कार्यक्रम (NSAP) 1995:**

NSAP समाज के सबसे कमज़ोर वर्गों, जैसे वृद्ध, विधवाओं और विकलांग व्यक्तियों को सामाजिक सुरक्षा प्रदान करने के लिए डिज़ाइन किया गया है। यह योजना विभिन्न पेंशन योजनाओं, जैसे इंदिरा गांधी राष्ट्रीय वृद्धावस्था पेंशन योजना और इंदिरा गांधी राष्ट्रीय विधवा पेंशन योजना, के माध्यम से वित्तीय सहायता प्रदान करती है। उदाहरण के लिए, एक वृद्ध व्यक्ति जो अपनी आजीविका के लिए बच्चों पर निर्भर था, अब NSAP के तहत मासिक पेंशन प्राप्त करके सम्मानजनक जीवन जी सकता है। यह योजना सामाजिक समावेशन और मानव गरिमा को बढ़ावा देती है।

**लक्षित सार्वजनिक वितरण प्रणाली (TPDS) 1997:**

खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए शुरू की गई TPDS गरीबी रेखा से नीचे (BPL) के परिवारों को रियायती दरों पर खाद्यान्न, जैसे चावल, गेहूं और मोटे अनाज प्रदान करती है। यह योजना सार्वजनिक वितरण प्रणाली (PDS) के माध्यम से संचालित होती है जिसमें राशन की दुकानों के माध्यम से गरीबों को आवश्यक खाद्य पदार्थ उपलब्ध कराए जाते हैं। TPDS ने ग्रामीण और शहरी दोनों क्षेत्रों में भुखमरी और कुपोषण को

कम करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। उदाहरण के लिए, एक गरीब परिवार जो पहले भोजन की कमी से जूझ रहा था अब TPDS के तहत रियायती दरों पर 35 किलोग्राम अनाज प्राप्त कर सकता है जिससे उनकी खाद्य आवश्यकताएँ पूरी होती हैं।

**स्वर्णजयंती ग्राम स्वरोजगार योजना (SGSY) 1999:**

ग्रामीण क्षेत्रों में स्वरोजगार को बढ़ावा देने के लिए शुरू की गई SGSY का उद्देश्य गरीब परिवारों को आय-सृजन पर संपत्तियाँ, जैसे पशुपालन, कुटीर उद्योग या छोटे व्यवसाय प्रदान करना है। यह योजना स्वयं सहायता समूहों (SHGs) के गठन पर विशेष जोर देती है जिसमें गरीब ग्रामीण, विशेष रूप से महिलाएँ छोटे समूह बनाकर बचत करती हैं और ऋण प्राप्त करती हैं। उदाहरण के लिए, एक ग्रामीण महिला SHG के माध्यम से सिलाई मशीन खरीदकर अपने घर से कपड़े सिलने का व्यवसाय शुरू कर सकती है जिससे वह अपनी आय बढ़ा सकती है। SGSY ने ग्रामीण उद्यमिता को प्रोत्साहित किया और सामुदायिक सहयोग को बढ़ावा दिया। बाद में, इस योजना को राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन (NRLM) में एकीकृत किया गया लेकिन इसने ग्रामीण भारत में स्वरोजगार की नींव रखी।

**अंत्योदय अन्न योजना (AAY) 2000:**

AAY सबसे गरीब परिवारों, जैसे भूमिहीन मजदूरों, विधवाओं और वृद्ध व्यक्तियों, को लक्षित करती है। यह योजना प्रति माह 35 किलोग्राम खाद्यान्न रियायती दरों पर प्रदान करती है ताकि समाज के सबसे कमज़ोर वर्गों को खाद्य असुरक्षा से बचाया जा सके। AAY ने उन परिवारों के लिए एक सुरक्षा जाल प्रदान किया है जो अन्य योजनाओं के लाभ से वंचित रह जाते हैं। उदाहरण के लिए, एक वृद्ध विधवा जिसके पास आय का कोई स्रोत नहीं है AAY के तहत नियमित खाद्यान्न प्राप्त करके अपने जीवन को बनाए रख सकती है।

**महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम (MGNREGA), 2005:**

MGNREGA भारत की सबसे महत्वाकांक्षी और क्रांतिकारी योजनाओं में से एक है जिसे ग्रामीण भारत में बेरोजगारी और गरीबी से निपटने के लिए शुरू किया गया। इस योजना का मूल उद्देश्य प्रत्येक ग्रामीण परिवार को प्रति वर्ष कम से कम 100 दिनों का गारंटीकृत मज़दूरी रोजगार प्रदान करना है। यह योजना न केवल आर्थिक सहायता प्रदान करती ह, बल्कि ग्रामीण बुनियादी ढांचे, जैसे सड़कों, तालाबों और सिंचाई प्रणालियों के निर्माण के माध्यम से दीर्घकालिक विकास को भी बढ़ावा देती है। ग्रामीण परिवारों को जॉब कार्ड जारी किए जाते हैं और वे स्थानीय पंचायतों के माध्यम से मज़दूरी कार्यों में भाग लेते हैं। इस योजना ने विशेष रूप से महिलाओं और हाशिए पर रहने वाले समुदायों को सशक्त बनाया है क्योंकि यह समान वेतन और सामाजिक समावेशन को प्रोत्साहित करती है। उदाहरण के लिए, एक ग्रामीण महिला जो पहले अपनी आजीविका के लिए पूरी तरह से कृषि पर निर्भर थी, अब MGNREGA के तहत सड़क निर्माण या जल संरक्षण परियोजनाओं में काम करके नियमित आय अर्जित कर सकती है। हालांकि, इस योजना को कार्यान्वयन में देरी

और धन के दुरुपयोग जैसी चुनौतियों का सामना करना पड़ता है, फिर भी इसने ग्रामीण भारत में लाखों परिवारों की आर्थिक स्थिति को स्थिर करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

**राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन (NRLM) 2011:**

NRLM, जिसे "आजीविका" मिशन के रूप में भी जाना जाता है, ग्रामीण गरीबों की आजीविका को सशक्त बनाने के लिए एक महत्वपूर्ण पहल है। यह योजना स्वयं सहायता समूहों और सामुदायिक संगठनों के माध्यम से ग्रामीण परिवारों को वित्तीय सेवाओं, कौशल प्रशिक्षण और बाजार तक पहुंच प्रदान करती है। NRLM का दृष्टिकोण "गरीबों को सशक्त बनाना" है, ताकि वे अपनी आय को बढ़ा सकें और गरीबी से बाहर निकल सकें। उदाहरण के लिए, एक NRLM समूह के सदस्य हस्तशिल्प उत्पाद बनाकर स्थानीय और राष्ट्रीय बाजारों में बेच सकते हैं जिससे उनकी आय में स्थिरता आती है। यह योजना विशेष रूप से ग्रामीण महिलाओं के लिए लाभकारी रही है क्योंकि इसने उनकी सामाजिक और आर्थिक स्थिति को मजबूत किया है।

**प्रधानमंत्री जन धन योजना (PMJDY) 2014:**

वित्तीय समावेशन को बढ़ावा देने के लिए शुरू की गई PMJDY ने भारत के गरीब और हाशिए पर रहने वाले समुदायों को बैंकिंग प्रणाली से जोड़ने में क्रांतिकारी बदलाव किया है। इस योजना के तहत गरीब परिवारों के लिए शून्य-शेष बैंक खाते खोले गए जिनमें मुफ्त डेबिट कार्ड, दुर्घटना बीमा और ओवरड्राफ्ट सुविधा जैसी सुविधाएँ शामिल हैं। PMJDY का सबसे महत्वपूर्ण योगदान प्रत्यक्ष लाभ हस्तांतरण (DBT) को लागू करना है जिसके माध्यम से सरकारी सब्सिडी और लाभ सीधे लाभार्थियों के बैंक खातों में हस्तांतरित किए जाते हैं। उदाहरण के लिए, एक ग्रामीण किसान जो पहले सब्सिडी प्राप्त करने के लिए बिचौलियों पर निर्भर था, अब अपने खाते में सीधे LPG सब्सिडी या MGNREGA की मज़दूरी प्राप्त कर सकता है। इस योजना ने 50 करोड़ से अधिक बैंक खाते खोलने का कीर्तिमान स्थापित किया है जिससे गरीबों की बचत की आदत को बढ़ावा मिला और वित्तीय सुरक्षा में सुधार हुआ। PMJDY ने विशेष रूप से महिलाओं को सशक्त बनाया है क्योंकि कई खाते महिलाओं के नाम पर खोले गए हैं जिससे उनकी आर्थिक स्वतंत्रता बढ़ी है।

**प्रधानमंत्री आवास योजना (PMAY) 2015:**

"सबके लिए आवास" के दृष्टिकोण को साकार करने के लिए शुरू की गई प्रधानमंत्री आवास योजना ग्रामीण और शहरी गरीबों के लिए किफायती और पक्के मकान प्रदान करने का एक अभूतपूर्व प्रयास है। इस योजना का लक्ष्य 2022 तक सभी बेघर परिवारों और कच्चे मकानों में रहने वाले लोगों को पक्के मकान उपलब्ध कराना था, जिसे बाद में बढ़ाकर 2024 तक किया गया। PMAY दो हिस्सों में कार्य करती है: PMAY-ग्रामीण और PMAY-शहरी। ग्रामीण क्षेत्रों में, यह योजना गरीब परिवारों को वित्तीय सहायता जैसे सब्सिडी और कम ब्याज दरों पर ऋण, प्रदान करती है ताकि वे अपने घर बना सकें। शहरी क्षेत्रों में, यह स्लम पुनर्वास और किफायती आवास परियोजनाओं पर केंद्रित है जिसमें निजी क्षेत्र की भागीदारी को भी प्रोत्साहित

किया जाता है। एक गरीब परिवार जो पहले झुग्गी-झोपड़ी या टूटे-फूटे मकान में रहता था, अब PMAY के तहत एक पक्का मकान प्राप्त कर सकता है, जिसमें शौचालय, बिजली और स्वच्छ पेयजल जैसी बुनियादी सुविधाएँ शामिल हैं। यह योजना न केवल जीवन स्तर को बेहतर करती है बल्कि स्वास्थ्य और शिक्षा जैसे क्षेत्रों में अप्रत्यक्ष लाभ भी प्रदान करती है क्योंकि सुरक्षित आवास बच्चों के लिए बेहतर पढ़ाई के अवसर और परिवारों के लिए स्वास्थ्य सुधार लाता है।

**विश्लेषण (Analysis):**

सरकारी योजनाओं ने गरीबी उन्मूलन में महत्वपूर्ण योगदान दिया है, लेकिन कई चुनौतियाँ भी हैं।

1. **सकारात्मक पहलू:**

**रोजगार सृजन:** MGNREGA जैसे कार्यक्रमों ने ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार के अवसर बढ़ाए हैं। उदाहरण के लिए, इसने औसतन प्रति वर्ष 55 दिन का रोजगार प्रदान किया, हालांकि 100 दिनों का लक्ष्य पूरी तरह हासिल नहीं हुआ।

**वित्तीय समावेशन:** PMJDY ने गरीबों को बैंकिंग सेवाओं से जोड़ा और DBT के माध्यम से लाभ के रिसाव को कम किया। खाद्य सुरक्षा: TPDS और AAY ने खाद्य असुरक्षा को कम करने में मदद की है, विशेष रूप से ग्रामीण क्षेत्रों में।

**आवास:** PMAY ने ग्रामीण और शहरी गरीबों के लिए आवास की उपलब्धता बढ़ाई है जिससे जीवन स्तर में सुधार हुआ है।

2. **चुनौतियाँ:**

**भ्रष्टाचार:** कई योजनाओं में धन का दुरुपयोग और लाभार्थियों की गलत पहचान जैसी समस्याएँ हैं।

**असमान संसाधन वितरण:** कुछ राज्यों को अधिक संसाधन मिलते हैं जबकि अन्य में कमी रहती है।

कार्यान्वयन में कमियाँ: नौकरशाही की देरी, धन का देर से वितरण और स्थानीय संस्थानों की कम भागीदारी योजनाओं की प्रभावशीलता को कम करती है।

**योजनाओं का अतिव्यापी होना:** कई योजनाएँ समान उद्देश्यों को लक्षित करती हैं जिससे भ्रम और संसाधनों की बर्बादी होती है। दीर्घकालिक स्थिरता: सामाजिक सुरक्षा योजनाओं की दीर्घकालिक वित्तीय स्थिरता एक चिंता का विषय है।

**प्रभाव (Impact):**

सरकारी योजनाओं का प्रभाव भारत में गरीबी की दर और जीवन स्तर पर स्पष्ट रूप से दिखाई देता है।

**गरीबी में कमी:** 2005-06 से 2015-16 के बीच भारत में गरीबी की दर 55% से घटकर 28% हो गई। विश्व बैंक के अनुसार, 2011 से 2015 के बीच 90 मिलियन लोग गरीबी से बाहर आए।

**सामाजिक-आर्थिक विकास:** MGNREGA ने ग्रामीण परिवारों की आय और गैर-वित्तीय परिसंपत्तियों को बढ़ाया। PMJDY और DBT ने सब्सिडी और लाभों के रिसाव को कम किया जिससे गरीबों तक अधिक संसाधन पहुंचे। PMAY ने ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों में आवास की गुणवत्ता में सुधार किया जिससे स्वास्थ्य और शिक्षा जैसे क्षेत्रों में अप्रत्यक्ष लाभ हुआ।

**चुनौतियों का प्रभाव:** भ्रष्टाचार और नौकरशाही देरी के कारण कई योजनाओं का लाभ पूर्ण रूप से गरीबों तक नहीं पहुंचता। उदाहरण के लिए, MGNREGA के तहत धन का 50% से कम हिस्सा ही लाभार्थियों तक पहुंचता है। ग्रामीण क्षेत्रों में गरीबी शहरी क्षेत्रों की तुलना में अधिक है जिसके लिए अधिक लक्षित हस्तक्षेप की आवश्यकता है।

## निष्कर्ष (Conclusion):

भारत सरकार द्वारा चलाए जा रहे गरीबी उन्मूलन कार्यक्रमों ने बीते वर्षों में उल्लेखनीय प्रगति की है। योजनाएँ जैसे MGNREGA, PMAY, PMJDY और TPDS ने रोजगार सृजन वित्तीय समावेशन, खाद्य सुरक्षा और आवास उपलब्धता के क्षेत्र में सकारात्मक प्रभाव डाला है। 2004-05 से 2011-12 के बीच गरीबी दर में आई कमी और वैश्विक बहुआयामी गरीबी सूचकांक में सुधार, इन योजनाओं की प्रभावशीलता को दर्शाते हैं। फिर भी, इन प्रयासों को भ्रष्टाचार, प्रशासनिक अक्षमता, क्षेत्रीय असमानता और संसाधनों के असमान वितरण जैसी चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। कई योजनाएँ अल्पकालिक राहत तक सीमित हैं और दीर्घकालिक स्थिरता सुनिश्चित करने में असफल रहती हैं। सामाजिक सुरक्षा योजनाओं की कवरेज और वित्तीय स्थिरता को सुदृढ़ करने की आवश्यकता है।

भविष्य में, पारदर्शिता बढ़ाने के लिए तकनीकी उपायों का विस्तार, स्थानीय समुदायों की भागीदारी, कौशल विकास और सामाजिक समावेशन जैसे क्षेत्रों में ठोस सुधार अनिवार्य होंगे। गरीबी उन्मूलन केवल आर्थिक लक्ष्य नहीं, बल्कि यह सामाजिक न्याय, समानता और मानव गरिमा की स्थापना का प्रयास है। सरकार, निजी क्षेत्र और नागरिक समाज के संयुक्त प्रयासों से भारत 2030 तक सतत विकास लक्ष्य (SDG) "सभी रूपों में गरीबी का अंत" को प्राप्त करने की दिशा में तेज़ी से अग्रसर हो सकता है।

## संदर्भ (Reference):

कुमार, रमेश. (2020). *गरीबी उन्मूलन: नीतियाँ और कार्यक्रम*. नई दिल्ली: एकेडमिक पब्लिकेशन्स.

शर्मा, संजय. (2018). *भारत में सामाजिक कल्याण योजनाएँ*. जयपुर: राजस्थान पब्लिशिंग हाउस.

वर्मा, अंजलि. (2019). *आर्थिक विकास और गरीबी*. नई दिल्ली: साहित्य भवन पब्लिकेशन्स.

कुमार, राजेश. (2017). *ग्रामीण विकास और गरीबी उन्मूलन*. लखनऊ: प्रगति पब्लिकेशन्स.

सिंह, मीना. (2021). *शहरी गरीबी और सरकारी हस्तक्षेप*. मुंबई: हिंदुस्तान बुक डिपो.

कुमार, अशोक. (2016). *गरीबी उन्मूलन: एक समीक्षा*. दिल्ली: इंडिया बुक कंपनी.

Press Information Bureau. (2024). *10 Years of Garib Kalyan: Empowering India's Poor and Marginalized*. Government of India.

Directorate General of Employment. (2024). *Employment Generation Schemes/Programmes of Government of India.*

International Growth Centre. (2020). *Poverty Eradication in India: Successes and Shortcomings of Social Protection.*

BYJU'S. (2015). *Critical Assessment of Poverty Alleviation Programmes*.

NITI Aayog. (2020). *India's Progress in Reducing Poverty.* Government of India.

Dreze, J., & Sen, A. (2013). *An Uncertain Glory: India and its Contradictions*. Princeton University Press.

Panagariya, A., & Mukim, M. (2014). A Comprehensive Analysis of Poverty in India. *Asian Development Review*, 31(1), 1-52.

Planning Commission. (2002). *Tenth Five Year Plan (2002-2007).* Government of India.

World Bank. (2011). *Poverty & Equity Data Portal*. Retrieved from https://povertydata.worldbank.org.

Dreze, J., & Khera, R. (2017). Recent Social Security Initiatives in India. *World Development*, 98, 555-572.

UIDAI. (2020). *Aadhaar Enabled Service Delivery: Reducing Leakages and Enhancing Efficiency*. Unique Identification Authority of India.

# सामाजिक समस्याओं से शांति की चुनौतियों के समाधान में गांधी जी का दर्शन : शैक्षिक मानसिक चुनौतियों के विशेष संदर्भ में

**शिखा यादव*** **रोहित शर्मा†**

**yshikha318@gmail.com** **rohitsadotrasharma@gmail.com**

**शोध सार**

आज समाज में कई समस्याएँ हमारे सामने हैं और जिससे कहीं-न-कहीं समाज में शांति के लिए भी चुनौतियाँ उत्पन्न होती हैं और कुछ समस्याएँ समय के साथ-साथ विकराल रूप लेती जा रही हैं। आज की कुछ इन्हीं समस्याओं के संदर्भ में गांधी जी ने अपना एक व्यावहारिक दर्शन समाज के समक्ष बहुत पहले ही रख दिया था जिसके मार्ग पर चलकर इन आज की सामाजिक समस्याओं, शैक्षिक मानसिक आदि चुनौतियों व से कुछ हद तक निजात पा सकते हैं। गांधी जी भारत के महान महापुरुषों में से एक थे जिन्होंने भारत के स्वतंत्रता संग्राम में बहुत अहम भूमिका निभाई। गांधी जी का योगदान भारतीय समाज में केवल स्वतंत्रता संग्राम के क्षेत्र तक ही सीमित नहीं रहा अपितु गांधी जी ने समाज की भलाई, शांति एवं विकास के लिए समाज का मार्गदर्शन भी किया और अपना दर्शन सर्वोदय, रचनात्मक कार्यक्रमों, ग्राम स्वराज्य आदि के माध्यम से समाज के समक्ष रखा जो कि आज के समय में व्याप्त सामाजिक समस्याओं के समाधान में बहुत अहम है। गांधी जी ने समाज में व्याप्त उस समय की तथा भविष्य में सामने आने वाली करीब-करीब सभी समस्याओं पर अपना व्यावहारिक दर्शन दिया और एक उत्तम मार्गदर्शक के रूप में समाज को तथा आने वाली पीढ़ी को एक दिशा प्रदान की।

आज के युग को विज्ञान का युग कहा जाता है लेकिन समस्याएँ तो आज भी हैं और पहले भी थी परंतु आज कि समस्याएँ पहले के समाज की समस्याओं से कुछ हद तक कहीं-न-कहीं भिन्न हैं। क्योंकि आज तो समस्याएँ भी है और चुनौतियाँ भी और गांधी जी का हर समस्या पर प्रस्तुत दर्शन बिलकुल व्यावहारिक है और देखा जाए तो वह भविष्य में भी रहेगा। आज के समय में हम देखें तो समाज समस्याओं से ग्रसित है और आज का समाज बहुत सी नई-नई समस्याओं में लिप्त होता जा रहा है जिससे समाज में शांति व्यवस्था के लिए भी चुनौतियाँ देखी जा रही और आज की यह समस्याएँ गांधी जी के समय में व्याप्त समस्याओं से बहुत अधिक एवं व्यापक हैं और इन समस्याओं ने आज के समाज के सामने ही नहीं अपितु आने वाली पीढ़ी के लिए भी

* **पी-एच. डी. शोधार्थी, शिक्षा विभाग, महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा**

† **अथिति अध्यापक, बौद्ध अध्ययन विभाग, जम्मू विश्वविद्यालय, जम्मू व कश्मीर**

कई नई-नई चुनौतियाँ उत्पन्न कर दी हैं। वर्तमान समय में जो मुख्य समस्याएँ हैं वह - खाद्यापूर्ति की समस्या, महँगाई, बेरोजगारी, अशिक्षा, चिकित्सा का अभाव, भ्रष्टाचार एवं राजनीतिक समस्या, महिलाओं की दुर्दशा, हिंसक गतिविधियां एवं दंगे आदि हमारे सामने हैं। इन समस्याओं से समाज में कई चुनौतियाँ भी उत्पन्न हो जाती है। जिनमें शैक्षिक-मानसिक चुनौतियाँ भी आती है, अगर गांधी जी के दर्शन की बात करें तो उक्त सभी समस्याओं पर गांधी जी ने अपना दर्शन समाज के समक्ष रखा और वह दर्शन आज के समय में कहीं-न-कहीं बिलकुल व्यावहारिक सा प्रतीत होता है। **मुख्य शब्द :** समाज, दर्शन, शांति, समस्या, चुनौतियाँ।

**सामाजिक समस्याओं से शांति की चुनौतियों के समाधान में गांधी जी का दर्शन**

गांधी जी के व्यावहारिक दर्शन का एक उदाहरण अगर प्रस्तुत करना हो तो सबसे पहले उत्तम उदाहरण के रूप में गांधी जी द्वारा लिखित पुस्तक 'रचनात्मक कार्यक्रम' एक उत्तम उदाहरण है इस पुस्तक में गांधी जी ने 18 सूत्रीय कार्यक्रमों की बात की है तथा समाज में व्याप्त समस्याओं के सुधार और समाज के कल्याण व उन्नति के लिए रचनात्मक कार्यक्रम को चलाने के लिए अपने पाठकों एवं साथियों को प्रेरित करते हैं और गांधी जी कहते है "कि भारत की हर चीज़ मुझे आकर्षित करती है सर्वोच्च आकांक्षाएँ रखने वाले किसी व्यक्ति को अपने विकास के लिए जो कुछ चाहिए वह सब उसे भारत से उसे मिल सकता है अत: भारत अपने मूल स्वरूप में कर्मभूमि है, भोग भूमि नहीं" और आज की उत्पन्न समस्याएँ तथा पूर्व की सामाजिक समस्याएँ कहीं-न-कहीं व्यक्ति के स्वार्थ, अज्ञान एवं भोग की ही निश्चय रूप से उपज है। यही समस्याएँ व्यक्ति के मस्तिष्क को भी प्रभावित करती हैं और व्यक्ति के स्वयं व परिवार की शैक्षिक मानसिक चुनौतियाँ उत्पन्न होती है।

जिन समस्याओं व चुनौतियों का वर्णन यहाँ करने का प्रयास किया गया है उक्त उन समस्याओं पर गांधी जी का व्यावहारिक दर्शन पर प्रस्तुत शोध/चिंतन इस प्रकार है-

**खाद्यापूर्ति की समस्या -** आज के समय में तथा पूर्व के समय में भी अर्थात गांधी जी के समय में भी खाद्यापूर्ति की समस्या एक व्यापक समस्या के रूप में थी तब बहुत लोगों को भर-पेट खाना नसीब नहीं होता था और यह समस्या आज भी विद्यमान है और अगर यह समस्या यूँ ही बनी रहेगी तो निश्चित तौर पर यह समाज की शांति के लिए भी चुनौतियाँ उत्पन्न कर सकती है। खाद्यापूर्ति की समस्या पर कुछ विद्वानों का मत है कि हरित क्रांति से तथा बड़े-बड़े जल संरक्षण डैम बनाने से खेती और फसलों की पैदावार बड़ी है अर्थात वृद्धि हुई है जिससे खाद्यापूर्ति की समस्या बहुत अधिक नहीं है परंतु वास्तव में अगर हम अपने आस-पास के समाज पर दृष्टि डालें तो पाएंगे कि यह समस्या आज भी वैसी ही है जैसी पहले थी और जनसंख्या में वृद्धि होने से यह निरंतर कहीं-न-कहीं बढ़ती जा रही है। इस समस्या के समाधान हेतु गांधी जी के व्यावहारिक दर्शन की बात करें तो गांधी जी कहते हैं "कि महान प्रकृति की इच्छा तो यही है कि हम अपनी रोटी पसीना बहाकर कमाएं और रोटी के लिए हर एक मनुष्य को मेहनत जरूर करनी चाहिए यही ईश्वर का कानून भी है यह मूल खोज टोल्स्तोय की है, लें उससे बहुत कम मशहूर रशियन गांधी जी टी॰ एम॰ बोंदरहव की है। टोल्स्तोय ने उसे रोशन किया और अपनाया और मेरी आँखें इसकी झांकी भागवदगीता के तीसरे अध्याय में करती हैं जिसमें लिखा है जो

यज्ञ किए बिना खाता है वह चोरी का अन्न खाता है अर्थात यज्ञ का अर्थ मेहनत है"। आगे गांधी जी खेती को महत्वपूर्ण मानते हैं और कहते हैं कि खेती के साथ अगर बुद्धि भी मिले तो खेती से संबंध रखने वाली बहुत सी समस्याएँ/मुसीबतें आसानी से हल हो जाएंगी और गांधी जी कहते हैं कि "व्यक्ति को कम-से-कम अपनी जरूरत का अन्न, साग, सब्जियाँ उगा ही लेनी चाहिए और जिसके पास अपनी जमीन नहीं है वह दूसरे की जमीन में मेहनत करके अपने गुजारे लायक साग, सब्जियाँ उगानी चाहिए इससे खाद्यापूर्ति की समस्या का कुछ हद तक समाधान निकाला जा सकता है और यदि सब लोग अपने ही परिश्रम की कमाई खावे तो दुनिया में अन्न की कमी न रहे और सबको अवकाश का काफी समय भी मिलेगा"। अत: यह कहा जा सकता है की खाद्यापूर्ति की समस्या गांधी जी के व्यावहारिक दर्शन से कुछ हद तक हल की जा सकती है। उक्त समस्या से अगर समाज में बढ़ती समस्याओं व उससे अगर शांति के लिए चुनौती उत्पन्न होती है तो उसका समाधान भी गांधीवादी दृष्टि से बहुत हद तक हल किया जा सकता है।

**महंगाई-** महंगाई की समस्या एक बहुत ही गंभीर समस्या के रूप में सामने आ रही है। जिसने व्यक्ति के मानसिक क्षितिज को भी प्रभावित किया है। आज के समय में हर वस्तु के दाम बहुत अधिक बढ़ते जा रहें हैं जिसका मुख्य कारण है दिन-प्रतिदिन जनसंख्या में विस्फोटक वृद्धि होना और उपलब्ध संसाधनों की कमी आना। समाज का हर व्यक्ति इतना सक्षम नहीं होता की वह अपने परिवार की हर एक जरूरत को पूरा कर सके व उन्हें बेहतर शैक्षिक अवसर प्रदान कर सके और कभी-कभी व्यक्ति अपनी या अपने परिवार की इच्छाओं की पूर्ति करने के लिए गलत कदम भी उठा लेता है जिससे समाज की शांति को भी प्रभाव पड़ता है। समाज में उपयोगी वस्तुओं की बात करें तो अगर किसी एक वस्तु के दाम बढ़ते हैं तो उसका असर दूसरी वस्तुओं के दाम पर भी पड़ता है जिससे स्पष्ट तौर पर महंगाई बढ़ती है। गांधी जी के व्यावहारिक दर्शन को अगर महंगाई की समस्या के समाधान में देखें तो गांधी जी का कथन है "कि प्रकृति के पास हमारे अर्थात मनुष्य की जरूरत पूरी करने के लिए बहुत कुछ है और ईश्वर मनुष्य की जरूरतें पूरी करने के लिए प्रकृति में रोज़ बहुत सी चीज़ें उत्पन्न करते हैं और वह आगे भी प्रकृति से हमें देते रहेंगे परंतु प्रकृति के पास हमारे भोग के लिए कुछ नहीं भी नहीं है" अर्थात गांधी जी का कथन है कि मनुष्य की जरूरतें प्रकृति पूरी करने में समर्थ है लेकिन भोग को पूरा करने में असमर्थ है और यही कारण है कि मनुष्य अपने भोग को पूरा करने के लिए आज प्रकृति का शोषण एवं दोहन ही कर रहा है जिससे प्रकृति के नियम बिगड़ रहे हैं और प्राकृतिक संसाधनों की भी कमी हो रही है जिससे महंगाई भी बढ़ रही है। इसके सुधार एवं समस्या के समाधान में गांधी जी स्वदेशी की बात करते हैं तथा व्यक्ति को अपनी आवश्यकताओं के नियंत्रण पर बल देने को कहते हैं और मानते हैं कि एक वस्तु की मांग का संबंध दूसरी वस्तु से होता है और व्यक्ति को अपनी आवश्यकताओं को सीमित करने का प्रयास करना चाहिए और जीवन यापन को जितना सरल हो सके बनाने के प्रयास मात्र करना चाहिए।

**बेरोजगारी-** आज के समय में बेरोजगारी की समस्या एक गंभीर समस्या के रूप में उभर कर सामने आ रही है। इस समस्या का प्रभाव समाज की शांति पर भी कभी-कभी पड़ता है और युवा आक्रोश, आंदोलन भी देखने को मिलते हैं जिससे शांति के लिए चुनौती भी उत्पन्न होती है। युवा वर्ग को रोजगार उपलब्ध करा

पाने में सरकारें काफी हद तक सफल नहीं हो पा रही हैं जिसके कई कारण हैं जैसे कि जनसंख्या का अधिक होना, एक ही क्षेत्र में शिक्षित युवाओं की संख्या अधिक होना और रोजगार की संभावनाएं कम होना तथा कई रोजगार क्षेत्रों में सीमित अवसरों का होना भी है जिससे सबको रोजगार दे पाना बहुत जटिल कार्य है। इस कारण गांधी जी के व्यावहारिक दर्शन से बेरोजगारी की समस्या का हल निकालने में बहुत अहम है। गांधी जी अपने रचनात्मक कार्यक्रमों में ग्राम उद्योगों, खादी के कार्यक्रम की बात करते हैं इन छोट्टे-छोट्टे उद्योगों जैसे- खादी बनाना, चमड़ा बनाना, डेयरी, कागज़ बनाना, तेल पेरना, आट्टा पीसना आदि है। इन ग्राम उद्योगों के कार्यक्रमों को चलाने से बेरोजगारी की समस्या का कुछ हद तक हल निकाला जा सकता है जिससे बेरोजगार युवा एवं प्रोढ़ भी अपनी रोज़ी-रोटी कमा सकते हैं।

**अशिक्षा-**

समाज में शांति के लिए चुनौती तब उत्पन्न होती है जब समाज के लोग शांति के महत्व को समझ नहीं पाते या एक शांति के विषय में अल्प ज्ञान रखते हैं या ज्ञान नहीं रखते। समाज में कई समस्याओं के उदय एवं विकास का मुख्य कारण अशिक्षा या अज्ञान ही होता है। "जो समाज शिक्षित है वह विकासशील है और यहाँ शिक्षा का अभाव है वहाँ विकास भी रेंग रहा है"। गांधी जी का व्यावहारिक दर्शन शिक्षा के क्षेत्र में भी व्यापक है। गांधी जी शिक्षा को समाज के विकास के लिए अहम मानते हैं गांधी जी शिक्षा के साथ कौशल भी हो ऐसी शिक्षा प्रणाली/व्यवस्था की बात करते हैं और गांधी जी द्वारा स्थापित नई तालीम इसका एक स्पष्ट उदाहरण है। शिक्षा ही एकमात्र ऐसा दीपक है जिससे कई प्रकार की समस्याओं का समाधान पाया जा सकता है।

**चिकित्सा का अभाव-** हमारे देश की जनसंख्या बहुत अधिक है और आज के समय में नई-नई बीमारियाँ हमारे सामने आने लगी हैं और कुछ बीमारियों के तो इलाज बहुत कम हैं और कुछ बीमारियों के इलाज अगर उपलब्ध हैं भी, तो वह बहुत महंगे हैं इस संदर्भ में गांधी जी के व्यावहारिक दर्शन की बात करें तो गांधी जी पानी एवं मिट्टी के प्रयोग द्वारा सभी बीमारियों के इलाज की बात करते हैं और साथ ही गांधी जी भोजन को केवल स्वस्थ रहने और शरीर को काम, मेहनत करने के लिए बनाए रखने के लिए करना चाहिए न की भोग के लिए और साथ ही गांधी जी भोजन को ओषधि के रूप में समझने को कहते हैं न कि भोग के लिए खाने की चीज़। अगर हम अपने भोजन एवं जीवन यापन के तरीकों पर नियंत्रण करें तो निश्चयन ही हम स्वस्थ जीवन जी सकते हैं और आज के समय में चिकित्सा क्षेत्र ने बहुत विकास कर लिया है पर फिर भी आज नई-नई बीमारियाँ हमारे सामने हैं जिनका समाधान प्राकृतिक ढंग से किया जा सकता है जिसका उल्लेख गांधी जी अपनी पुस्तक "key to health" "स्वास्थ्य की कुंजी" में करते हैं।

**भ्रष्टाचार-**

आज के समय में भ्रष्टाचार एवं राजनीतिक समस्या एक अहम समस्या के रूप में समाज में विद्यमान है। इस समस्या से समाज में आज अशांति बढ़ रही है ऐसा कहा जा सकता है और साथ-ही-साथ भ्रष्टाचार के कारण ही आज समाज में शांति के लिए कहीं-न-कहीं चुनौतियाँ भी उत्पन्न हो रही हैं। जिसमें अगर कोई यह

कहता है कि राजनीति कोई समस्या नहीं बल्कि समस्या का हल है लेकिन वास्तव में आज की राजनीति एक समस्या के समान है जिससे कि भ्रष्टाचार का भूत प्रकट हुआ है इसलिए भ्रष्टाचार एवं राजनीति की समस्या को मैंने एक ही वर्ग में रखकर स्पष्ट करने का प्रयास किया है। भ्रष्टाचार एवं राजनीति की समस्या का समाधान गांधी जी के दर्शन से बिल्कुल संभव है, गांधी जी "राजनीति को साँप की एक कुंडली के समान मानते हैं जिसने हमें जकड़ा हुआ है इससे छूटने के लिए हमें इससे संघर्ष करना ही पड़ेगा"। गांधी जी राजनीति के क्षेत्र में ऐसे लोगों के आने की बात करते हैं जो कि साफ छवि के हों और जिनमें सेवा की भावना हो । गांधी जी राजनीति को पावर गेम से हटाकर सेवा की साधना बनाने की बात कहते हैं इससे अगर अच्छी छवि के लोग राजनीति में आएंगे तो भ्रष्टाचार की समस्या भी हल हो जाएगी और राजनीति से सामाजिक कल्याण का रास्ता नहीं खुल जाएगा और देश का उत्तम विकास हो सकेगा जिसको आज हमारे देश को जरूरत भी है।

**महिलाओं पर अत्याचार-**

आज समाज में महिलाओं की स्थिति में बदलाव आया है परंतु तब भी महिलाओं की स्थिति देश में बहुत अच्छी नहीं है। महिलाओं के शोषण, घरेलू हिंसा, ऑनर किललिंग आदि की घटनाएँ हमें देखने सुनने को मिलती रहती हैं जो की किसी भी राष्ट्र की शांति के लिए कहीं-न-कहीं चुनौतियाँ उत्पन्न करती है। गांधी जी महिलाओं के उत्थान के लिए काफी प्रयासरत थे और अपने रचनात्मक कार्यक्रमों में उन्होंने एक कार्यक्रम का नाम 'स्त्रियाँ' भी रखा जिसमें उन्होंने महिलाओं की शिक्षा पर खासा ज़ोर दिया और साथ ही पुरुषों को यह समझने के लिए प्रेरित किया की महिलाओं को वह अपने भोग की केवल वस्तु न समझे बल्कि अपना साथी या दोस्त समझे और उनका आदर एवं सम्मान भी करें। गांधी जी के आंदोलनों में महिलाओं की काफी अहम भूमिका थी और अगर हम गांधी जी के दर्शन को पालन में लाये तो महिलाओं पर होने वाला अत्याचार बहुत हद तक रोका जा सकता है जिससे धीरे-धीरे इस समस्या का समाधान निकाल सकता है।

**हिंसक गतिविधियाँ एवं दंगे –**

हमारे आज के समय में हिंसा या हिंसक विचारधारा व हिंसक घटनाएँ बढ़ती देखने को मिलती हैं। आज के समय में हिंसक गतिविधियाँ जैसे कि- हिंसक झड़पें, आंदोलन, दंगे आदि देखने को मिलते रहते हैं जो कि किसी भी समाज की शांति को खासा प्रभावित करते हैं और समाज में शांति के लिए चुनौतियाँ उत्पन्न भी करता है। गांधी जी स्वयं को अहिंसा एवं शांति का शोधक कहते हैं' और वह किसी भी प्रकार की हिंसा को गलत मानते हैं और वह हिंसा का समर्थन नहीं करते। गांधी जी कौमी एकता को बहुत महत्वपूर्ण मानते हैं और कहते हैं कि "राजनीतिक एकता तो जोर जबरदस्ती से लादी जा सकती है मगर एकता के सच्चे मायने तो दिली दोस्ती से हैं जो किसी के तोड़े नहीं टूटते"। गांधी जी सभी कौमो को एकता से रहने की बात कहते हैं और कहते हैं कि अगर हम सब एकता के साथ भाईचारे से रहेंगे तो हिंसा या दंगों आदि की घटनाओं की सम्भावना नहीं रह जाएगी। अत: आपसी एकता रखने से और सभी धर्मों के सम्मान करने की बात भी गांधी जी करते हैं जोकि इस समस्या का एक समाधान ही है।

**निष्कर्ष :**

समाज की कई समस्याएँ हमारे सामने हैं जिससे समाज में शांति व्यवस्था और विकास में चुनौतियाँ समय-समय पर उत्पन्न होती रहती हैं। समाज समस्याओं से ग्रसित होता जा रहा है। आज के समाज की समस्याएँ जिनमें खाद्य पूर्ति की समस्या, बेरोजगारी, अशिक्षा, चिकित्सा का अभाव, महिलाओं पर अत्याचार, हिंसक गतिविधियों का बढ़ाने आदि जो भी आज के समय में समस्याएँ हमारे सामने दिखाई देती हैं केवल इतनी ही नहीं है बल्कि बहुत सी और भी कई समस्याएँ हैं और सम्पूर्ण समाज एवं दुनिया समस्याओं से उलझी पड़ी है और सभी विचारक उन समस्याओं के समाधान अपनी-अपनी दृष्टि से खोजने का प्रयास करते हैं और गांधी जी एक ऐसे विचारक थे जिन्होंने समाज की हर समस्या पर अपने विचार दिये और समस्या के निदान का रास्ता एवं मार्ग भी दिखाने का प्रयास किया।

**संदर्भ :**


1. महात्मा गांधी. (1946). *रचनात्मक कार्यक्रम*. अहमदाबाद, भारत: नवजीवन प्रकाशन.
2. महात्मा गांधी. (1945). *सत्य के प्रयोग अथवा आत्मकथा*. अहमदाबाद, भारत: नवजीवन प्रकाशन.
3. महात्मा गांधी. (1996*). स्वास्थ्य की कुंजी*. अहमदाबाद, भारत: नवजीवन प्रकाशन.
4. महात्मा गांधी. (1960). *मेरे सपनों का भारत*. अहमदाबाद, भारत: नवजीवन प्रकाशन.
5. Bose, Nirmal Kumar. (1972). *Studies in Gandhiaism.* Ahmedbad: Navajivan Trust.

# Exploring the Role of Caste Identity in Shaping the Tamas Dimension of Personality in Indian Women

**DR. MAHESH KUMAR TIWARI***

**tiwari141mahesh@gmail.com**

**Abstract**

*This study set out with one question: how does caste identity shape the inner life of women? Using the Triguna framework—specifically the Tamas dimension, which reflects passivity, confusion, and low motivation—we explored how women across caste lines experience the world differently. 450 women from Uttar Pradesh participated. 150 from each category. The Trigunatmak Personality Schedule (Tripathi, 2009) employed. One-way ANOVA showed significant differences. SC women scored highest on Tamas, followed by OBC, then General. Post hoc tests backed it up—SC women were significantly more tamasic. But these numbers aren't just data points. They reflect lived hardship. The emotional weight of social exclusion, of generational disadvantage. For many SC women, Tamas may not be a flaw—it's a survival state. This study sheds light on that reality. It shows how caste doesn't just mark status—it shapes psychology. And it urges us to act. To build mental health and empowerment programs that meet these women where they are. Because healing starts with being seen.*

## Introduction

Personality, in Indian psychology, isn't just a neat checklist of traits. It's messy. Fluid. Alive. It's shaped by the ancient idea of Triguna—Sattva, Rajas, and Tamas. These three aren't just concepts from the Bhagavad Gita—they live inside us. Constantly shifting. Tugging at our decisions, moods, thoughts (Das, 1991). Sattva? That's clarity,

* **Counselor, Jawahar Navodaya Vidyalaya, Chandauli (UP)**

balance, calm. Rajas? Drive, hunger, action. And Tamas? The fog. The weight. The stillness that sometimes won't move. Everyone's got all three. Nobody escapes. But the mix? That depends. On life. On pain. On what the world gives—or withholds. In India, where caste and gender still script so much of one's journey, these gunas don't develop in isolation. They grow inside social frameworks. And sometimes, they bend under pressure.

Think of a woman from a Scheduled Caste (SC) background. She's not just dealing with work or family stress. She's pushing through years—generations—of exclusion. Being unseen. Being unheard. That kind of weight doesn't just sit on the shoulders. It sinks into the mind. Slows the body. Shapes the soul. That's Tamas rising (Nair, 2010). Quietly. Steadily.

She's not lazy. She's tired. Not unmotivated—just unheard too long. Meanwhile, a woman from a General category? She has a different road. Education. Maybe a desk job. Leadership roles. Choices. Sattva has space to breathe there (Rao, 2011). It flourishes in safe environments. Where you can pause. Think. Decide. And then there's the OBC woman. She's somewhere in the middle. Some wins, some walls. Rajas maybe. A drive to move, but with limits. This isn't just about psychology. It's about lived reality. It's about how personality gets built from pain, possibility, and place. So, when someone hesitates. Or shut down. Or say nothing at all. It may not be them. It may be the world they've had to survive. And Tamas? It's not a flaw. Sometimes, it's just the mind's way of saying—enough. Understanding that? That's step one. Maybe the most important one (Misra, 2009; Sinha, 1990).

**Research Questions**

1. Are there significant differences in the Tamas personality trait among women from different caste categories (General, OBC, SC)?
2. How does caste identity influence the manifestation of Tamas guna in homemakers, working women, and women leaders?
3. What is the psychological implication of higher Tamas levels on women's decision-making and mental health across caste groups?

**Aims of the Study**

1. To assess and compare the levels of the Tamas guna among women from General, OBC, and SC caste categories.
2. To explore the psychological effects of caste-based social positioning on women's personality development, particularly with respect to inertia, passivity, and emotional disengagement.
3. To contribute to indigenous psychological theory by applying the Triguna framework to understand contemporary social disparities.

**Rationale of the Study**

Understanding personality isn't just about ticking boxes on a scale. Not here. Not in India. It's tangled in culture. In centuries of thought. In how life feels from the inside. In Indian philosophy, there's this old but powerful idea—*Triguna*. Three forces. Always there. Always shifting. Sattva is light. Clarity. Peace. Rajas is fire. Drive. Movement. Tamas? That's the fog. Stillness. The slow slide into confusion. Tamas shows up when the world gets too heavy. When motivation fades, and you just… stop. Not because you want to. Because it hurts to keep moving. High Tamas has been linked to poor mental health, indecision, and withdrawal (Rao, 2011). But we don't talk about it enough. Especially not when it comes to women. Indian women. That's the gap. Psychology has looked at personality for decades but usually through a Western lens. The *Triguna* framework? Still underused. Especially in research about the lives of Indian women navigating caste, gender, and social class. And their reality is not easy. Women from Scheduled Castes (SC) or Other Backward Classes (OBC) often live on the margins. Fewer chances. Less voice. More silence. They carry a quiet kind of exhaustion. The kind that doesn't always speak—but shows. In how they withdraw. In how they doubt. That's Tamas too. Not a flaw. A response. To systemic exclusion. To years of being told "you don't belong" (Deshpande, 2011). This study? It steps into that silence. It asks: how does caste, how does gender—together—shape the inner world of Indian women? And it uses *Triguna* as the lens. A culturally rooted way. Our way. Because understanding personality here means understanding the pain, the power, and the possibilities that shape it.

**Hypotheses**

1. H1: There will be a significant difference in Tamas scores among women belonging to General, OBC, and SC categories.
2. H2: SC women will exhibit significantly higher Tamas levels compared to General and OBC women.

**Methodology**

This study followed a between-group design. A total of 450 women took part—150 from each group. They came from everyday places across Uttar Pradesh. All of them were women. Aged 25 to 50. The average age was 35.27 years (SD = 5.89). To understand their inner world, we focused on one key aspect: **Tamas**. For that, we used the *Trigunatmak Personality Schedule*—crafted and validated by Dr. R.R. Tripathi in 2009. It's 37-item tool—30 direct, 7 reversed. Data were analysed through one-way ANOVA, followed by Tukey's HSD and Scheffé's post hoc tests.

**Procedure** –

Participants were informed about the study's purpose and the time required to complete the questionnaire. After obtaining informed consent, the Tamas scale was administered under standardized instructions, ensuring confidentiality and voluntary participation.

**Limitations** –

This study is limited to women from Uttar Pradesh, which may affect the generalizability of the findings. Additionally, while the study focuses on the Tamas dimension, interactions with other dimensions of Triguna (Sattva and Rajas) were not explored in detail.

**Result**

The study's findings reveal significant caste-based disparities in the Tamas dimension of personality among women, with Scheduled Caste (SC) women exhibiting the highest levels ($M = 34.68$, $SD = 12.17$), followed by General ($M = 25.75$, $SD = 11.80$) and Other Backward Classes (OBC) women ($M = 24.65$, $SD = 13.04$). The ANOVA results ($F = 125.72$, $p < .001$) confirmed that these differences were statistically significant.

Table 1. *Mean, SD and analysis of variance for the different occupations of tamas.*

| **Variables** | ***Tamas*** | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|---|
| **Category** | **Mean** | ***SD*** | **df** | ***SS*** | ***MS*** | ***F*** |
| *General* | 25.75 | 11.800 | 2 | 9071.47 | 4535.73 | 125.72** |
| *OBC* | 24.65 | 13.040 | | | | |
| *SC* | 34.68 | 12.170 | | | | |

*Figure 1. the mean tamas score of general, OBC, and SC women.*

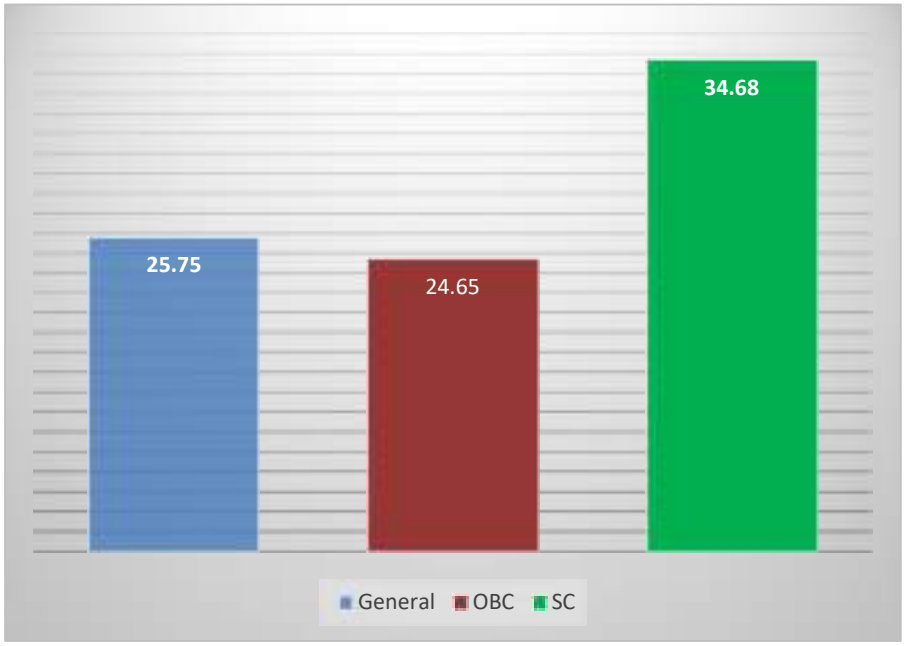


Post hoc Tukey HSD analysis further revealed that SC women scored significantly higher in Tamas than both General (Mean Difference = 8.93, $p < .001$) and OBC women (Mean Difference = 10.03, $p < .001$), while the difference between General and OBC women was not significant (Mean Difference = 1.10, $p > .05$). These results highlight a clear caste-based stratification in tamasic tendencies.

*Table 2. Summary of Post-Hoc Comparison of different occupation women*

| Test | Category (I) | Category (J) | MD (I-J) |
|---|---|---|---|
| **Tukey HSD** | General | OBC | 1.10 |
| | | SC | -8.93* |
| | OBC | General | -1.10 |
| | | SC | -10.03* |
| | SC | General | 8.93* |
| | | OBC | 10.03* |
| **Scheffe** | General | OBC | 1.10 |
| | | SC | -8.93* |
| | OBC | General | -1.10 |
| | | SC | -10.03* |
| | SC | General | 8.93* |
| | | OBC | 10.03* |

**Discussion**

The numbers didn't just sit quietly. They told a story. One that aligns—almost too clearly—with what Triguna has always said. Tamas isn't random. It doesn't just happen. It builds. Slowly. With every door shut. Every voice silenced. Every opportunity missed. And that's what showed up here. Women from the Scheduled Castes (SC) scored higher on Tamas. Not by chance. But by weight—of history, of exclusion, of never quite being let in. Tamas, remember, is about inertia, confusion, emotional disengagement (Das, 1991; Rao, 2011). These aren't just internal states. They're reflections of a world that's been unfair. For too long. Deshpande (2011) said it clearly systemic oppression wears people down. Especially women. Especially those already pushed to the edge. And that's exactly what this data seems to whisper. Learned helplessness. Low agency. Emotional numbness. All part of the tamasic pattern. But it wasn't the same for everyone. Women from General and OBC backgrounds showed significantly lower Tamas levels. Why? Maybe because they had more to stand on. More access. More education. More say in their own lives. According to Srivastava and

Misra (2007), women in professional roles—many from these groups—report less emotional burnout. They cope better. They lead. They speak up. Nair (2010) and Venkatesan & Subramanian (2012) found similar things—more support, more autonomy, more resilience. And less Tamas. Not because they're stronger by default. But because the system gave them room to grow. So, what does this mean? It means caste and gender aren't just checkboxes in demographics. They shape the soul. They shape personality. And Tamas, in many SC women, isn't failure—it's survival. A quiet protest. A tired response to a society that hasn't always made space for them.

Recent studies echo this. Sharma and Tripathi (2022) saw how high Tamas links to low self-esteem. Poor life satisfaction. Especially among marginalized groups. Rao and Menon (2023) pushed for more culturally grounded models—like Triguna—in mainstream psychology. And they're right. Because these frameworks don't just explain personality. They explain pain. In the end, what this study shows is clear: higher Tamas scores among SC women are not just numbers. They are the psychological imprint of caste-based struggle. Of structural silence. Of being last in line, again and again. But they also point to something else—a need. For support. For change. For spaces where women—especially those pushed to the margins—can finally breathe, lead, and heal. Because when we reduce Tamas, we don't just lift a trait—we lift a life.

**Conclusion**

This study didn't just measure traits—it uncovered patterns. Real ones. The kind that grow out of lived experience. Women from the SC group showed the highest Tamas levels. Not surprising. Not random. Just reality. Followed by women from the General and OBC categories. And it wasn't just caste—occupation mattered too. Homemakers, especially, carried more Tamas. Maybe because their worlds are smaller. Less choice. Less voice. Compared to working women and women leaders, they felt more stuck. More quiet. These results say something big: personality isn't just personal—it's political. It's shaped by caste, by work, by the roles we're allowed—or denied. And so, if we want to understand mental health in India, especially for women, we can't ignore context. Triguna gives us a language for this. Our language. And the findings here don't

just sit in journals—they point to action. To better mental health support. To empowerment programs that actually reach the women who need them most. Especially those who've been told, too often, to stay silent.

**References**

Crenshaw, K. (1991). Mapping the margins: Intersectionality, identity politics, and violence against women of color. *Stanford Law Review, 43*(6), 1241–1299.

Das, R. C. (1991). The Gita typology of personality: An inventory. *Journal of Indian Psychology, 9*(1), 47–54.

Deshpande, A. (2011). *The grammar of caste: Economic discrimination in contemporary India*. Oxford University Press.

Misra, G. (2009). Psychology and psychoanalysis: The Indian discourse. *Indian Journal of Psychology, 64*(2), 173–187.

Nair, N. (2010). Women and leadership in India: Barriers and facilitators. *Psychological Studies, 55*(4), 356–364.

Rao, K. R. (2011). Positive mental health: A Gandhian perspective. *Psychological Studies, 56*(2), 177–183.

Rao, K. R., & Menon, S. (2023). Indigenous approaches to personality: Relevance of Triguna in contemporary psychological assessment. *Journal of Indian Psychology, 41*(1), 25–39.

Sharma, A., & Tripathi, R. (2022). Triguna and psychological well-being among socially disadvantaged women. *Indian Journal of Mental Health, 9*(2), 101–109.

Sinha, J. B. P. (1990). The psychology of the Indian mindset. *Indian Journal of Industrial Relations, 25*(4), 399–409.

Srivastava, A. K., & Misra, G. (2007). Work stress and health: A study of women managers. *Indian Journal of Industrial Relations, 43*(1), 21–33.

Venkatesan, S., & Subramanian, M. (2012). Occupational stress and coping among Indian women executives. *Indian Journal of Health and Wellbeing, 3*(3), 722–726.

# Introducing Annai Meenambal Sivaraj from South India

**DR. MOHINI JAGDISH GAWAI***

**mohiniscientistmgims@gmail.com**

**Abstract**

*This paper introduces and examines the life and contributions of Annai Meenambal Sivaraj, a pioneering Dalit woman leader from South India, within the larger framework of anti-caste movements such as the Dravidian movement and the Self-Respect movement. It contextualizes her work in relation to prominent socio-political movements and reformers like Periyar E.V. Ramasamy, Dr. B.R. Ambedkar, and Shree Narayan Guru, all of whom laid the foundation for anti-caste discourse and women's emancipation in South India. Meenambal Sivaraj emerged as a critical voice advocating for Dalit women's representation, education, and rights, at a time when both caste and gender hierarchies were deeply entrenched in Indian society. The paper highlights her active engagement in public service, political representation, and her leadership roles in various organizations, including the Scheduled Caste Federation. Despite the scarcity of written records on her work—especially in non-Tamil sources—this study seeks to recover and recognize her contributions as essential to understanding the intersection of caste, gender, and regional politics in colonial and postcolonial India.*

***Key words:***

*Annai Meenambal Sivaraj, Dravidian Movement, Self-Respect Movement, Anti-Caste Politics, Periyar E.V. Ramasamy, B.R. Ambedkar, Dalit Feminism, South Indian Social Reform, Women's Political Participation, Tamil Nadu, Caste and Gender, Scheduled Caste Federation, Social Justice, Devadasi Reform*

* **Research Consultant, Department of Community Medicine, DSNSPH**

**Mahatma Gandhi Institute of Medical Sciences, Sewagram, Wardha.**

South India played a significant role in anti-caste movements like Dravidian movement, self- respect movement in Tamil Nadu, Nadar movement in Karnataka and Aravippuram movement (1888) began with consecration of a Shiva temple in Aravippuram Kerala, defying Brahmanical restrictions on temple entry and rituals and SNDP Yogam (1902-03) by Shree Narayan Guru from Ezhava community struggled for depressed classes and Ezhava community with the slogan as 'one caste, one religion, one God for all' in Kerala . Nadar Mahajan Sangam (1910) in Tamil Nadu called as Shanans oppressed caste of agricultural labours focused on social welfare, education, imitating upper caste customs; Dr. B.R. Ambedkar extensively uses the concept of imitation to explain the caste genesis, mechaism in India (1916) referring French sociologist Gabriel Tarde and his 'Laws of Imitation.

Neo Saivite movement in late 19th century and early 20th century in Tamil Nadu Maraimalai Adigal promoted Tamil identity and resisted Brahmanical and Aryan influencer, this laid as basement for the Dravidian Ideology. In 1890 Iyothee Thass the Tamil Dalit intellectual founded Sakya Buddhist society and fostered Buddhism in Tamil Nadu. Hence, forth Tamil Nadu is one of the known states in India for long history of anti-caste politics and legislation. Dravidian Movement worked on upliftment of lower castes through education. Autonomous mobilisation by Dalit groups coincided with an increase in casteist violence designed to keep the Dalits in a subordinate position (Gorringe 2006). The alienation of a growing class of affluent merchants and landowners gave rise to the Justice party. Sir P.T. Thiagaraya Chettiar, Sir P.T. Rajan, and V.V. Ramaswamy Nadar were a few of the prominent leaders of the party (Seshadri 2008).

Periyar E V Ramaswamy, Shree Narayan Guru and all the others mentioned above were the most prominent anti-caste movement leaders, they raised voices to eradicate the traditional Brahmanical hegemony, advocated equality and solidarity. The Self-respect movement enlightened the Tamils (non-Brahmins) their ethnic identity with intense enthusiasm. The foreground of self-respect movement gave women a platform to speak openly in public to resist the patriarchy, the advocacy of women 's autonomy; sexually, economically and socially. Education in women will lead to liberation, independency, becoming decision maker. Particularly, in India between

1935-1945 women played an important role in participating in the Dravidian movements and Self-respect movement for political and social activism, campaigns and protest, promoting women rights; rights over their body, use of contraception, property inheritance and right to remarry (widow remarriage). E V Ramaswamy was greatly inspired by non-cooperation movement of Gandhiji and immensely participated into the movement's activities. One of the instances like in boys' school food prepared by non-Brahmin would pollute the food for the Brahmin-boys urged Periyar to established self-respect movement to abolish such untouchability and concept of impurity. Movalur Ramamirthammaiyar, a former devadasi, abolished the devadasi system and stimulated remarriage. A number of former devadasis, inspired by Periyar's concerns for gender and caste equality, joined the Self-Respect Association and became important activists for the Dravidian Movement (Suganya 2018). Dr. Muthu Lakshmi presided over the epoch-making Self Respect women's conference in 1930 and she brought many devadasis to Mayawaram in 1925 and had their remarriages, she translated many Sanskrit slogans into Tamil. The self-respect movement started the marriages without any rituals and presence of priest in similar way it happened in Maharashtra by Mahatma Jyotirao Phule the key figure of Satyashodak Samaj (1873) in the social reform movement (1827-1891), established the first girls school in Pune in 1848 and made education accessible to the traditionally excluded lower caste community. Phule's book named 'Gulamgiri' (1873) was a critical approach to caste system inspired South Indian social reforms. Such type of broader vision and ideas were attracted by the women social reformer, leader having numerous prestigious positions Pandithai Ranganayaki Meenambal Sivaraj, from South India. The limitation of this paper is that there is less written source available on the works of Annai Meenambal Sivaraj, may it is available in Tamil language but the author is unable to read or write Tamil.

Annai Meenambal Shivraj is one of the most important figures in Indian Dalit history where she fought towards the inclusion of Dalit women at the national forefront. She was born on 26 December 1904 in Rangoon at Burma in a family of an Adi-Dravida social and political leader and married to renowned leader N. Sivaraj. Her family migrated from Tamil Nadu to escape from oppression of the dominant caste system prevailing in colonial India. Though her family belong from renowned Dalit

leaders like her grandfather P. M. Madurai Pillai served as a well-known benefactor and father had been first elected person to the corporation from the aboriginal people even, he was the member of Tamil Nadu assembly and had been involved in Adi- Dravida movement from an early age. Annai Meenambal Shivraj completed her bachelors in fine arts at Rangoon and shifted to Madras to gain an insight on the political scenario of the country and to put forward a Dalit woman's perspective within the existing political framework of the Indian struggle against caste system.

In terms of entering in political arena she made her entry in 1928 by giving a speech in favour and welcoming publicly Simon Commission and made appeal to the commission with a respect for the recognition and implementation of affirmative actions for the Dalits.

She stood up like a huge pillar with Babasaheb and EV Ramaswamy in spreading the Dalit consciousness and the message of anti -caste revolution in Tamil Nadu. Meenambal was known fondly as the be- loved sister of Babasaheb.

Remembering Dr Babasaheb Ambedkar Annai Meenambal says that 'Ambedkar was a skilled at cooking. Once I participated in a meeting of the schedule caste Federation at Bombay, returning from the meeting we were really hungry..... Ambedkar took some of us who had participated in the meeting to his Rajgriha home and served as food with his own hands the important thing here is, he had cooked the food himself! When he came to Chennai, the Chettinad Raja Sir Muthiah Chettiar would ask him teasingly, 'do you have any dear ones in Chennai to which Ambedkar would reply, 'but my sister Meenambal is in Madras'.

She was the first schedule caste woman to become member of the Madras Corporation representing Madras University Senate. She presided over Scheduled Caste Federation (SCF) women's conference on 23rd September 1944 in Madras which was attended by Babasaheb. Then she presided in 1945 on 6th May over the All India scheduled caste Federation (AISCF) women conference held at Bombay.

She served as Senate member of Madras University, honorary magistrate of Madras province, member of post-war rehabilitation committee, director of schedule castes Cooperative Bank leader of Nellikuppam Parry company labourers and many

more. Her activism was intersectional targeting both caste discrimination and internalized patriarchy within communities.

In 1945's All India Scheduled Caste federation session she laid her strong emphasis on articulating the need for women's education. She was the member of censor board, chief of women's entrepreneurs' association, head of selection committee of lady Wellington college, first Dalit women appointed deputy Mayor of Chennai corporation, Senate member of Annamalai University. At Tirunelveli Adi- Dravida conference she said on 31st June 1937 'it is said that a family without Unity will perish. For this reason, it must be known that a society, nation or anything else needs the strength of Unity to gain its progress. Although it will take a long time to do away with this sin of case consciousness from our country all the people of our community must unite together with each other to prove that we are too human beings.

Addition to this she was the strongest proponent of self-respect movement which was started by E.V Ramasamy in 1925. The main objective of self-respect movement was casteless society and complete equality for the masses, equality of women in education employment and property rights. This movement worked for reservation in educational institutions and in government jobs for previously excluded communities. The title Periyar the Great one is given by her, at that time E V Ramasamy was in jail, but on hearing this it is said that Periyar laughed and accepted it as a sister's gift, even when Babasaheb wrote her he mentions to Meenambal as 'my dear sister'. She was active in public service till 1980 leaving behind her legacy of struggles which still serve as a beacon for the contemporary fight against caste oppression and she expired on 30th November 1992 and fondly referred to as Annai which means mother. Role of Meenambal in Ambedkarite politics is incomparable to any male participation because of Babasaheb's movement she could centre the depressed class women and brought in focus. Her dedication and participation in emerging Ambedkarite politics served as a vital role in South India that too a prominent Dalit women's participation.

## References: -

**Ambedkar, B. R.** (2008). *The Untouchables*. Gautam Book Center.

**Ambedkar, B. R.** (2014). *Annihilation of Caste*. Navayana Publishing.

**Ambedkar, B. R.** (2022). *Castes in India: Their Mechanism, Genesis and Development*. DigiCat.

**Marutha Publication.** (2006). *Anti-Conversion Act: History, Socio-Political Background and Its Impact*.

**Gorringe, H.** (2013). Interview with Gowthama Sannah, Propaganda Secretary of the VCK, Chennai, 26th September 2012. *The South Asianist*, 2(1). http://www.southasianist.ed.ac.uk/article/view/147

**Kannabiran, K., Ramamirthammal, M., & Kannabiran, V.** (2003). *Web of Deceit: Devadasi Reform in Colonial India*. Zubaan.

**Phule, J. G.** (2017). *Gulamgiri*. Vani Prakashan.

**Raman, C. G.** (n.d.). Role of Dalit Intellectuals in Transforming Tamil Society.

**Seshadri, S.** (2008). Women's Participation in the Dravidian Movement, 1935–1945. *The Pragjna Trust*, 1–7.

**Suganya, K.** (2018). Contribution of Women Activists in the Self-Respect Movement of Tamil Nadu. *IOSR Journal of Humanities and Social Science*, 23(8), 19–23. https://doi.org/10.9790/0837-2308081923

**Vidya, N. G., & Selvaraj, M. J. S.** (1928). *Why Are Women Enslaved?*

# THE EVOLUTION OF WEB SERIES IN INDIA: TRENDS, IMPACT, AND FUTURE PROSPECTS

**Dr. Shachindra Shekhar Shakunt***

**shachindrashakunt@kmclu.ac.in**

## Abstract:

The entertainment landscape in India has undergone a significant transformation with the advent of web series and Over-The-Top (OTT) platforms. Traditionally, Indian television was dominated by daily soap operas and family dramas, catering to a broad audience. However, the rise of digital streaming services such as **Netflix, Amazon Prime Video, Disney+ Hotstar, and Sony Liv** has introduced a new era of content consumption, particularly among the youth.

This study explores the **past, present, and future of web series in India**, examining how shifting audience preferences and technological advancements have shaped the digital entertainment industry. Initially, web series emerged as an alternative to mainstream television, providing fresh narratives and diverse themes, including **crime thrillers, LGBTQ+ representation, horror, and documentary-style storytelling**. The **present scenario** highlights how web series have become a mainstream entertainment option, competing with traditional television and films while significantly influencing cultural discourse. Additionally, the **dubbing and localization** of international content have further expanded viewership in India.

The research also delves into the impact of OTT platforms on Indian audiences, particularly young viewers, analyzing factors such as accessibility, affordability, content diversity, and user engagement. Furthermore, it investigates whether Hindi-language web series on these platforms provide meaningful and healthy content for youth.

Looking ahead, the **future of web series in India** is expected to be shaped by increasing digital penetration, advancements in artificial intelligence-driven content recommendations, and growing investments in original Indian productions. As OTT platforms continue to evolve, they are likely to introduce **regional content, interactive**

*Assistant Professor, KMC Language University, Lucknow

**storytelling, and personalized viewing experiences**, further revolutionizing the entertainment industry.

This study aims to provide insights into the evolution of digital media consumption, highlighting the role of web series in redefining the entertainment experience in India. By examining the **trends, challenges, and potential growth of the industry**, the research contributes to a deeper understanding of the digital transformation in India's media landscape.

**Introduction:**

In the late 1990s, web series emerged as a new form of entertainment, gaining significant popularity in the early 2000s. One of the earliest examples, *Last Word* or *The Spot.com*, was the first episodic online story, integrating photos, videos, and what later became known as "blogs" into its storyline. Created by Scott Zakarin in 1995, this innovative format set the foundation for web series as a collection of scripted videos released in episodic form on the Internet, forming part of web television. A single installment of a web series is commonly referred to as an episode.

Traditional Indian television shows, which have dominated the entertainment landscape for decades, continue to hold a loyal audience. However, contemporary Indian youth are increasingly drawn to more dynamic and unconventional forms of entertainment. Web series have gained significant prominence in urban India, offering fresh and diverse content. In recognition of this growing medium, several prestigious awards were introduced in 2016 to honor excellence in web series production, including the Streamy Awards, Webby Awards, EW TV Awards, and Indie Series Awards. Additionally, dedicated web series festivals, such as those in Los Angeles and Vancouver, further highlight the growing importance of digital content. Major award ceremonies, including the Emmy Awards and the Canadian Screen Awards, have also added categories for web series and digital media.

Web series have gradually started to replace traditional movies and television shows, particularly among younger audiences. The trend of dubbing foreign content into regional Indian languages initially began with children's programming and later expanded to Hollywood blockbuster films in Hindi. The remarkable success of dubbed content encouraged television networks and streaming platforms to capitalize on this trend. Today, web series have become the heart of digital entertainment, with major OTT (Over-the-Top) platforms such as Netflix, Amazon Prime Video, Disney+ Hotstar, and SonyLIV leading the industry.

The rise of Hindi web series has provided an engaging alternative to traditional television serials, which are often criticized for their repetitive storylines and melodrama. Indian audiences, particularly the younger generation, are shifting their preferences towards web-based content that offers diverse narratives and relatable themes. In 2013, Netflix made history by securing its first Primetime Emmy Award nominations for online-only television at the 65th Primetime Emmy Awards, with three of its web series—*House of Cards*, *Arrested Development*, and *Hemlock Grove*—earning recognition.

Web series, in general, consist of episodic scripted or non-scripted videos released exclusively on the Internet. They are accessible across multiple devices, including desktops, laptops, and mobile phones. Unlike conventional television dramas, web series take a more innovative and experimental approach. Their success is not only driven by engaging content but also by their ability to explore bold, unconventional themes that traditional television often avoids. These include live-in relationships, horror, documentaries, comedies, LGBTQ+ love stories, sci-fi thrillers, and crime dramas. Web series creators are continuously pushing boundaries, introducing topics that resonate with a modern and progressive audience.

Urban viewers particularly connect with this content as it often reflects real-life issues and contemporary societal themes. The rise of mobile applications (apps) in 2008 further transformed digital entertainment by expanding accessibility and convenience. The demand for smartphones, tablets, and other smart devices led to an explosion in the app industry, revolutionizing how audiences consume content. The evolution of apps can be traced back to early Personal Digital Assistants (PDAs) and the simple yet addictive *Snake* game on the Nokia 6110. The increasing variety and availability of streaming apps have cemented the role of web series as a dominant force in India's entertainment industry.

This study explores the evolution of web series in India, examining their impact on audience preferences and the broader entertainment ecosystem. By analyzing trends, content preferences, and audience reception, this research aims to provide a comprehensive understanding of the rise of web series and their potential trajectory in the future.

## Review of Literature:

The rise of the Internet and digital platforms has significantly influenced media consumption patterns worldwide. India has witnessed a similar transformation, with

web series emerging as a dominant form of entertainment. Several studies have explored the adoption, impact, and future trajectory of web series in India.

A study by **Doctor Subway, Socci Dasgupta, and Dr. Priya Grover** highlights that Indian audiences prioritize quality content and are increasingly willing to pay for unrestricted access. The study notes that pricing strategies influence consumer behavior, as data consumption costs remain a crucial factor for viewers. Indian audiences spend an average of **6.2 hours daily** consuming digital content, with **21% dedicated to audiovisual entertainment**. The study also indicates a shift in preference from traditional television to web-based content, emphasizing the demand for flexible, on-demand viewing.

Research by **Sidneyeve Matrix on Netflix** suggests that younger audiences are no longer passive consumers but active curators of content. Unlike traditional television viewers, who relied on predetermined programming, web series audiences engage with content dynamically. The study emphasizes that social media platforms play a pivotal role in shaping viewer preferences, as discussions and reviews influence content production and distribution. This shift highlights a paradigm change where audience interactions contribute to content creation.

A report by the **MICA Center for Media and Entertainment Studies** underscores the exponential growth of web series consumption in India, particularly among the **15 to 35 age group**. The report projects that India will witness a surge in digital subscribers, from **350 million to 500 million by 2023**. Disney+ Hotstar leads the market with **43 million subscribers**, followed by **Amazon Prime Video (17 million) and Netflix (5 million)**. The report also notes that urban audiences dominate digital content consumption, while rural participation remains limited, albeit growing. Male viewers, particularly in the **15 to 30 age group**, form the largest segment of web series consumers.

An analysis by **Ritu (2021)** explores the impact of digital media on traditional television and advertising industries. The study argues that digital media has become an indispensable part of daily life, influencing information dissemination, socialization, entertainment, and marketing. The increasing shift to digital platforms is attributed to factors such as **better internet connectivity, regional content availability, competitive data pricing, and evolving consumer preferences**. The study further highlights that during the COVID-19 pandemic, digital content consumption surged, solidifying the dominance of web series over traditional television formats.

Collectively, these studies indicate that web series are reshaping India's entertainment landscape. Viewers prefer digital content for its accessibility, diversity, and interactive nature. The increasing reliance on over-the-top (OTT) platforms and mobile applications further strengthens the web series market. However, challenges such as data affordability, regional accessibility, and audience segmentation remain crucial areas for further research.

This review provides a foundation for analyzing the trends, impact, and future potential of web series in India, positioning them as a transformative force in the digital entertainment industry.

**Research Objectives:**

1. To analyze the genres and themes of Hindi web series and their appeal to audiences.
2. To examine the popularity of OTT platforms and youth content preferences in India.
3. To assess the user experience and engagement with OTT platforms in India.

**Research Questions:**

1. How do different genres of web series impact audience engagement and preferences?
2. What is the level of popularity of major OTT platforms (Disney+ Hotstar, Amazon Prime, Netflix, and Sony Liv) among Indian youth?
3. How does Hindi content on OTT platforms influence the perspectives and behavior of young viewers?

**Research Methodology**

This study adopts a **descriptive research design** aimed at exploring the impact and content trends of Hindi web series available on OTT platforms such as Amazon Prime Video, Netflix, Disney+ Hotstar, and SonyLIV. The intent of the study is to examine the nature of content and its influence on viewers, particularly students, through both **quantitative** and **content analysis** methods.

To understand the audience perception and engagement with Hindi web series, a **survey** was conducted using a structured questionnaire comprising close-ended questions. The questionnaire was created using **Google Forms** and disseminated to

respondents via digital platforms such as **Messenger, Instagram, and WhatsApp**. This approach ensured convenience and accessibility in data collection.

In addition to the survey, **content analysis** was conducted on four selected Hindi web series available on the mentioned OTT platforms. The web series were purposively chosen based on specific parameters relevant to the study, such as themes, language use, representation, and societal impact.

**Sampling Technique**

A **purposive sampling technique** was employed to select participants for the study. The sample included **undergraduate and postgraduate students** from **KMC Language University**, selected based on their familiarity and engagement with web series content.

**Sample Size**

Using the purposive sampling method, a total of **100 students** were approached to participate in the study. However, **only 93 valid responses** were received and subsequently analyzed. The data gathered from this sample helped in drawing meaningful conclusions relevant to the research objectives.

**Research Tools**

A **questionnaire** was used as the primary instrument for data collection in this study. The use of a questionnaire was considered appropriate due to its efficiency in gathering specific, concise, and relevant information from the respondents. According to Black (1976), a quality questionnaire is brief, focused, and capable of extracting clear and meaningful data from participants.

For this research, a structured questionnaire comprising **20 close-ended questions** was developed. These questions were designed to obtain essential and relevant information aligned with the objectives of the study.

**Content Analysis:**

***Human***

*Human* delves into the ethically fraught terrain of human drug trials, exposing the sinister intersections of science, corporatism, and vulnerable populations. Set in Bhopal, a city with its own historical baggage of industrial catastrophe, the series mirrors real-world anxieties about unchecked pharmaceutical power. At its core, *Human* critiques

the commercialization of medicine, illustrating how the poor often become unwitting subjects in the pursuit of scientific glory and corporate profits.

Dr. Gauri Nath is portrayed as a renowned neurosurgeon driven by her own dark past and complex motivations. Her character unfolds as a chilling embodiment of the blurred lines between medical heroism and villainy. Through her and Dr. Saira Sabharwal, the series introduces nuanced female protagonists who navigate power, trauma, and complicity within patriarchal and institutional frameworks.

The narrative further challenges class hierarchies and systemic corruption. It raises pressing ethical questions: Who bears the cost of medical progress? Whose lives are considered expendable? While *Human* is dramatized for effect, it grounds its dystopian vision in plausible realities, particularly in countries where regulatory oversight is often weak or compromised.

Stylistically, the show employs a hauntingly clinical aesthetic and a gripping non-linear structure that amplifies its psychological intensity. Overall, *Human* functions not just as a medical thriller but also as a potent social commentary on the commodification of life and the fragile boundary between care and control.

***Rocket Boys***

The eight-episode series *Rocket Boys* pragmatically explores themes of patriotism, pacifism, and the perils of the arms race. Anchored in meticulous research, the series integrates scientific and political jargon seamlessly into the dialogues, matching the grand scale of the historical figures whose stories it narrates. It effectively transports viewers to a time when a nascent nation, still reliant on bullock carts, was struggling to take a technological leap. The classrooms, laboratories, equipment, and overall ambiance evoke the scent of chalk and the spirit of scientific adventure. The enthusiasm with which "the big boys play with their toys" generates a palpable energy—subtle yet undeniable.

Set against a vast canvas spanning the decades before and after India's independence in 1947, the narrative centers on two pioneering scientists—Dr. Homi Bhabha (Jim Sarbh) and Dr. Vikram Sarabhai (Ishwak Singh). The evolution of their relationship from a student-teacher dynamic to a lifelong intellectual partnership forms the crux of the storyline. Through this bond, Bhabha gradually sheds his individualistic outlook, while Sarabhai, influenced by Bhabha, gains a more confident and worldly perspective. Their casual yet intellectually charged conversations open a window into the role of scientists in shaping society.

The series also introduces the philosophical tension between man and machine, portraying it as a respectful and evolving dialogue. Alongside this, elements of politics, espionage, and betrayal naturally seep into the otherwise scholarly universe. Contemporary political debates are subtly contextualized through the dilemmas faced by Prime Minister Jawaharlal Nehru (Rajit Kapoor), particularly concerning China and the atomic bomb.

Jim Sarbh brings a mercurial charm to the role of Bhabha, captivating viewers even in his absence from the screen. His portrayal of the charismatic scientist—capable of quoting Einstein and Shakespeare in the same breath—blends erudition with audacity. Ishwak Singh, as the soft-spoken yet resolute Sarabhai, offers a compelling counterbalance. His honest smile and composed demeanor lend authenticity to the character's complexity.

Creative liberties and fictional characters do not detract from the storytelling. Instead, they add emotional depth, humanizing these scientific legends by portraying their personal flaws and inner struggles. Sarabhai's difficulty in balancing art and science, and his inability to understand the ambitions of his talented wife, Mrinalini Sarabhai (Regina Cassandra), reveal the vulnerabilities behind the public persona. Similarly, Bhabha's fragile relationship with Parvana Irani (Saba Azad) reflects the social and emotional undercurrents of the time.

Although some dialogues—penned by Abhay Koranne and Kausar Munir—feel modern in tone, they remain sharp and laced with wit, effectively highlighting the differing philosophies of the two protagonists as they work toward a shared goal.

The series benefits immensely from immaculate casting and restrained performances, which help maintain engagement despite occasional pacing issues in the mid-episodes. Rajit Kapoor delivers a balanced portrayal of Nehru, while Regina Cassandra brings magnetic grace to Mrinalini Sarabhai—a character deserving of her own biopic. Dibyendu Bhattacharya, as the fictional disillusioned scientist Mehdi Raza, provides a compelling counterpoint to Bhabha, adding texture and depth to the narrative. Arjun Radhakrishnan may not physically resemble Dr. A.P.J. Abdul Kalam, but his sincere performance compensates for the disparity.

In much the same way that human intervention shaped the real-life trajectories of Bhabha and Sarabhai, Abhay Koranne's thoughtful writing and direction guide *Rocket Boys* into a successful orbit—making it a significant addition to the genre of science-based historical drama.

**Yeh Kaali Kaali Ankhein**

"There are three things that can corrupt you—money, power, and women," declares the opening of *Yeh Kaali Kaali Ankhein*, a title that evokes both the Orwellian imagery of a watchful Big Brother and the alluring, oceanic depth of a woman's obsessive gaze. This series is an audacious blend of romantic pulp, psychological thriller, and noir melodrama—complete with musical montages, homage-laden filmy sequences, sun-kissed danger, riverside romancing, and a profusion of guns and roses.

The show revels in the excesses of pulp fiction, its hinterland setting brimming with familiar archetypes—ruthless dons, corrupted systems, and ill-fated lovers—but injects a fresh vitality into these tropes. Its world is sordid, stylized, and unapologetically over-the-top, yet it remains engrossing throughout. Like a risqué poem recited by a foul-mouthed comedian, its narrative is riddled with innuendo, wit, and unspoken truths that audiences can't help but register and relish. This is precisely the tonal territory *Haseen Dillruba* aspired to occupy, but *Yeh Kaali Kaali Ankhein* executes it with finesse.

The plot spirals through unexpected twists, forming an intricate, rhythmically chaotic symphony of events. Just when the viewer anticipates a predictable turn, the story veers sharply in the opposite direction, consistently surprising with its manic pacing and emotional volatility. With a perfect cocktail of sex, violence, comedy, heartbreak, and jealousy, the series allows no respite across its eight intense episodes.

At the center is Vikrant (Tahir Raj Bhasin), a hardworking, middle-class man from a small town who yearns for a modest life. His ambitions are brutally upended when Purva (Anchal Singh), the daughter of the town's most feared and powerful man—who also happens to be his father's employer—develops an obsessive infatuation with him. The result is a blood-soaked love triangle that oscillates between domestic intimacy and brutal street warfare, taking place across the desolate but dramatic backdrops of rural India.

The characters are pitch-perfect in both writing and performance. Scenes between Vikrant and his family—especially his father (Brijendra Kala), mother, and sister—are layered with comic timing and familial chemistry, offering moments of levity amidst the chaos. Brijendra Kala's understated brilliance is reliably on display, while Saurabh Shukla embodies the archetype of the corrupt political patriarch with familiar yet fresh menace.

However, it is Anchal Singh's portrayal of Purva that leaves a lasting impression. As the obsessive tempter with deep-seated issues, she is at once mysterious, magnetic, and dangerous. Her layered performance, oscillating between vulnerability and ferocity, elevates the tension in every frame she occupies. The narrative's production design and

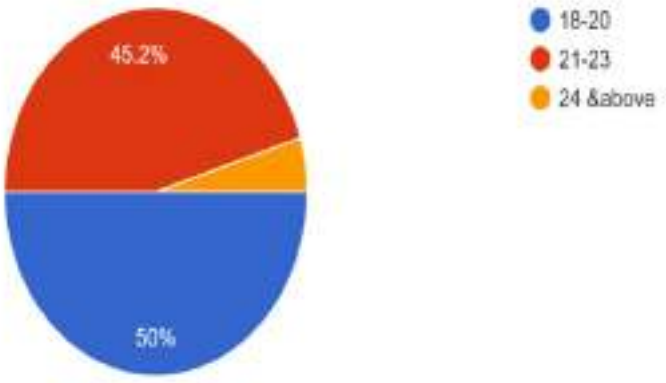


aesthetic choices complement her character's duality—seductive and destructive in equal measure.

Though a few plot holes and unresolved questions remain, they are overshadowed by the sheer energy and immersive storytelling. The flaws are almost imperceptible amidst the dense narrative layers, visceral tension, and psychological complexity.

Director Siddharth Sengupta, along with a diverse creative team, delivers a genre-bending masterpiece that successfully combines romance, comedy, thriller, and pulp fiction. *Yeh Kaali Kaali Ankhein* is an exhausting yet exhilarating marathon—an unrelenting exploration of obsession, desire, and corruption. With its cliffhanger ending, the series leaves the audience desperately wanting more, making it not just a binge-worthy thriller but a cultural phenomenon waiting to unfold further.

## Data Analysis

**Age:**

The majority of respondents are between the ages of 18–20 and 21–23 years, comprising 45.2%. Only 5% of respondents are above 24 years of age.

**Gender:**

When categorizing the respondents based on gender, it is observed that 62.8% were male and 37.2% were female.

**Do you have a smartphone?**

The above question illustrates that currently, more than half of the population has access to smartphones. The majority of respondents own a smartphone.

**Which OTT platforms have you used?**

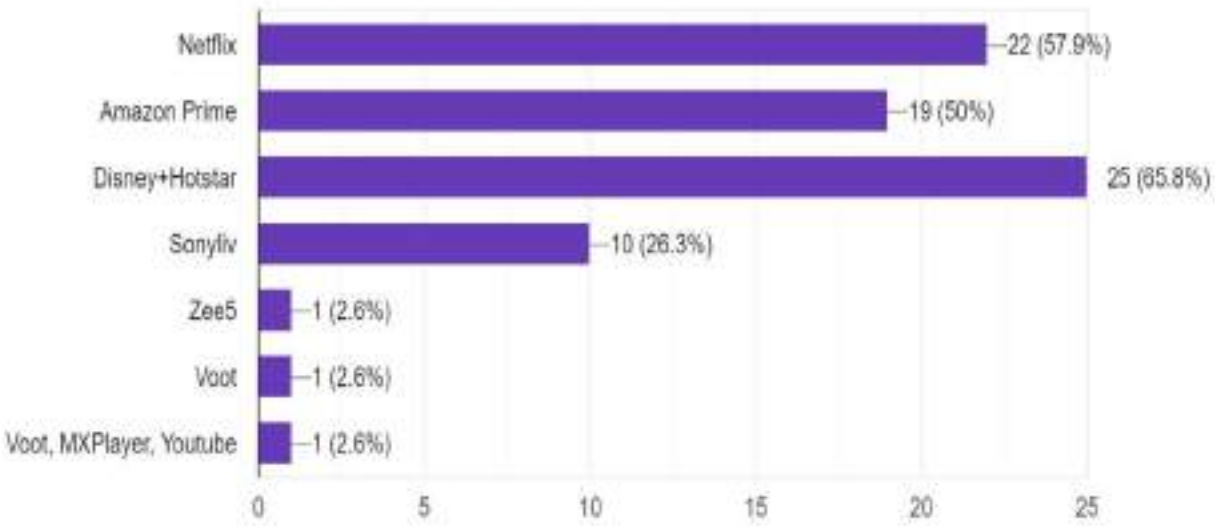


Disney+ Hotstar emerged as the most popular OTT platform, followed by Netflix. Amazon Prime is used by 50% of the respondents, while SonyLIV is used by 26.3%. Voot, MX Player, and YouTube are each used by 2.6% of the respondents.

**How often do you use these platforms?**

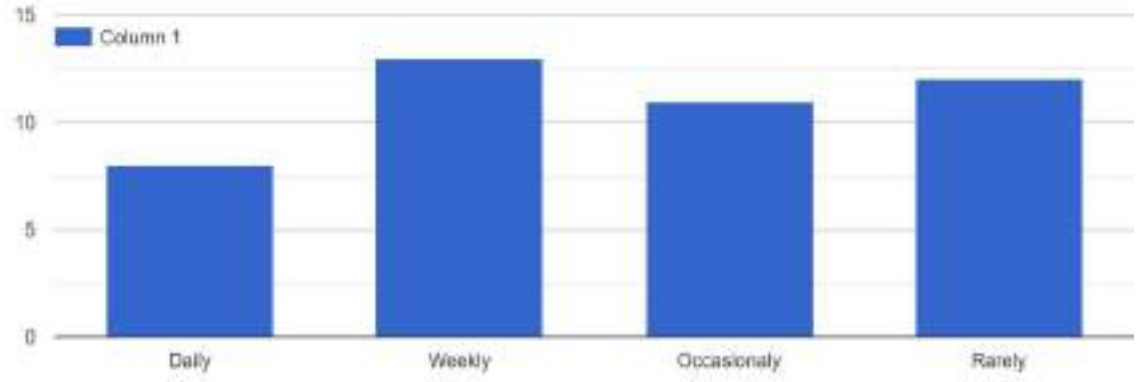


It shows that most students watch web series once a week.

**Since when have you started using OTT platforms?**

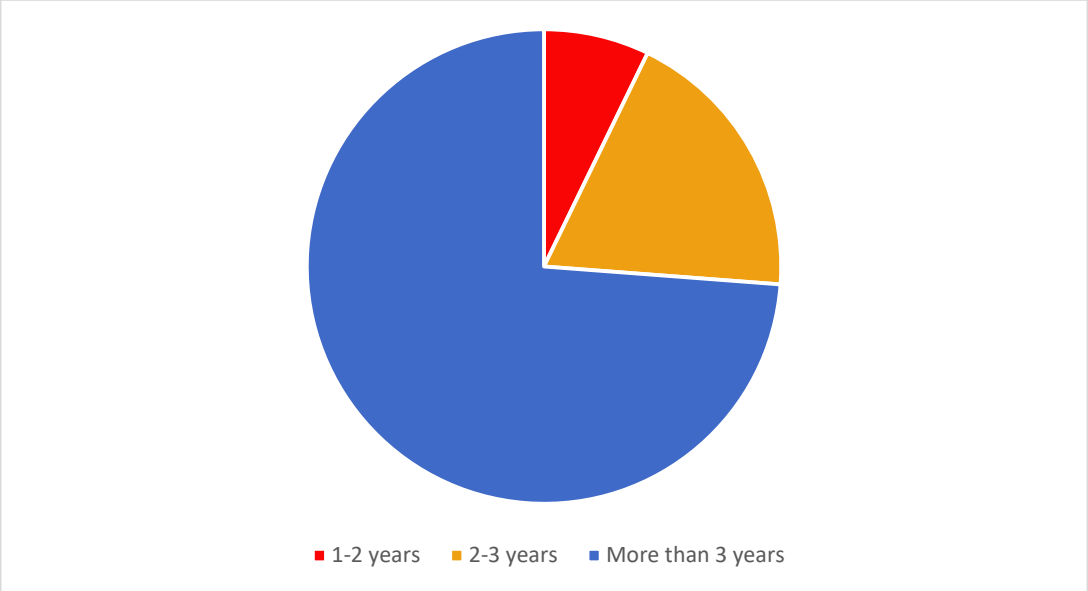


It shows that 73.8% of students started watching web series during the COVID period.

**Which of these influenced you to use OTT platforms?**

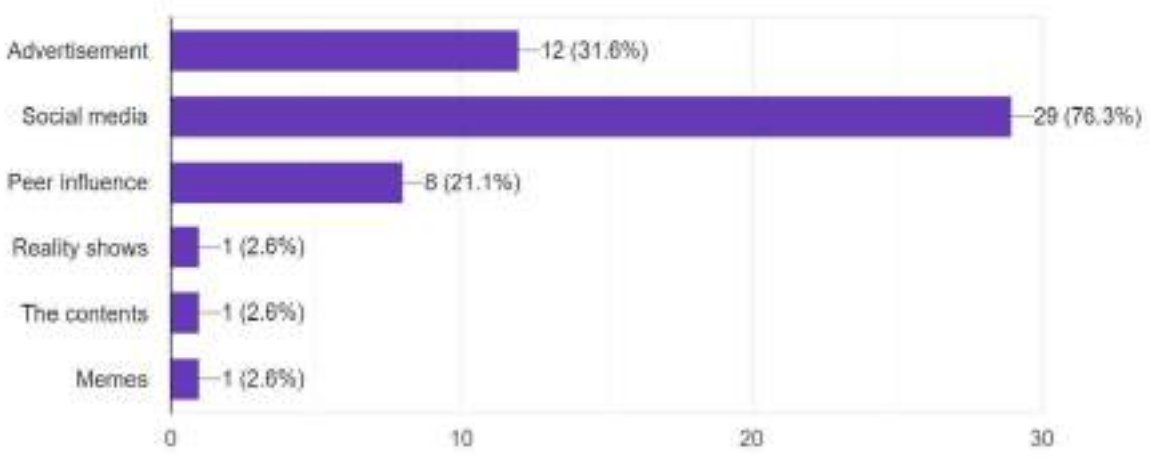


followed by advertisements (31.6%) and peer influence (21.1%). Other factors like reality shows, content, and memes have minimal impact (2.6% each).

**Do you think web series influence society?**

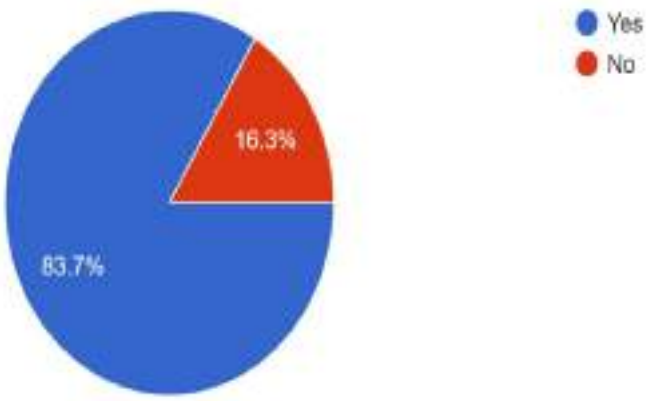


83.7% of students agree that web series influence society, while 16.3% do not.

**What is your preferable language in OTT platforms?**

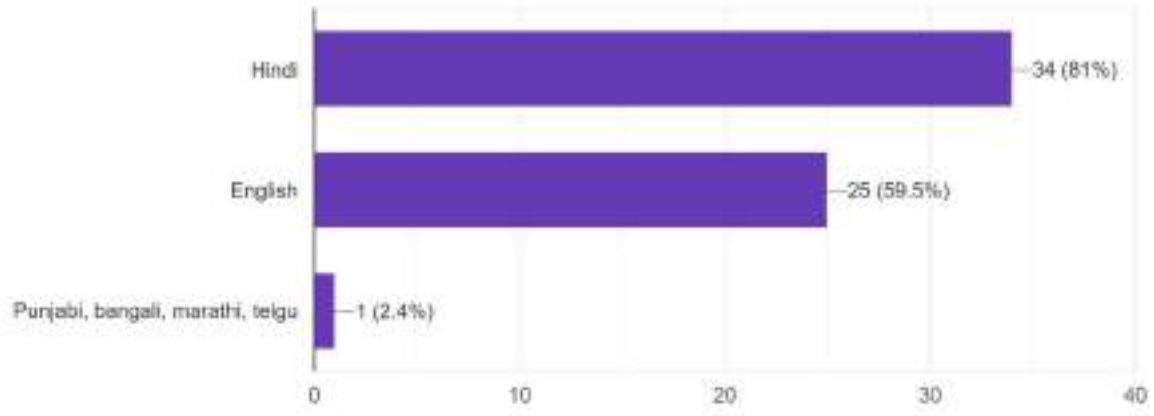


Hindi is the most preferred language for watching web series (81%), followed by English (59.5%), while regional languages like Punjabi, Bengali, Marathi, and Telugu are least preferred (2.4%).

**What is your preferred or favourite genre?**

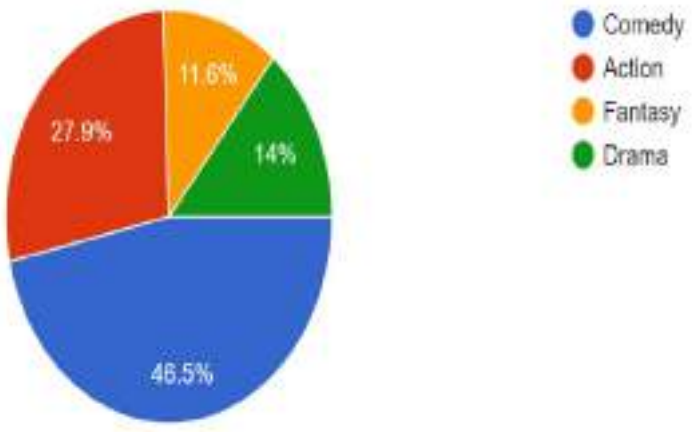


The majority stated that their favourite genre is comedy, with 46.5% of responses. About 27.9% of respondents enjoy action on these platforms, 11.6% prefer fantasy, and for 14%, drama is their favourite genre in web series.

**Do you think the use of objectionable content have a negative impact on youth?**

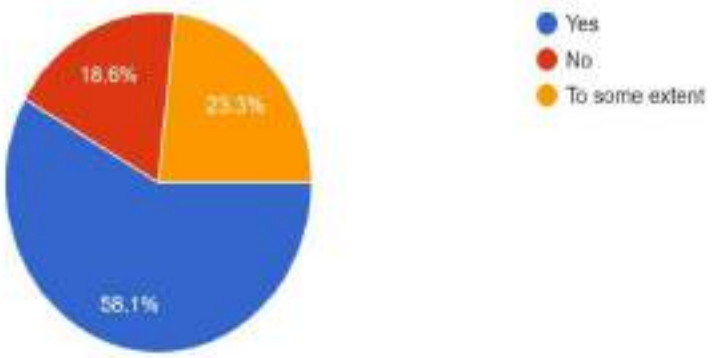


A majority of students (58.1%) believe that it does have a negative impact, while 23.3% feel it affects youth to some extent, and 18.6% do not believe it has any impact.

**Do you find language and content of web series objectionable?**

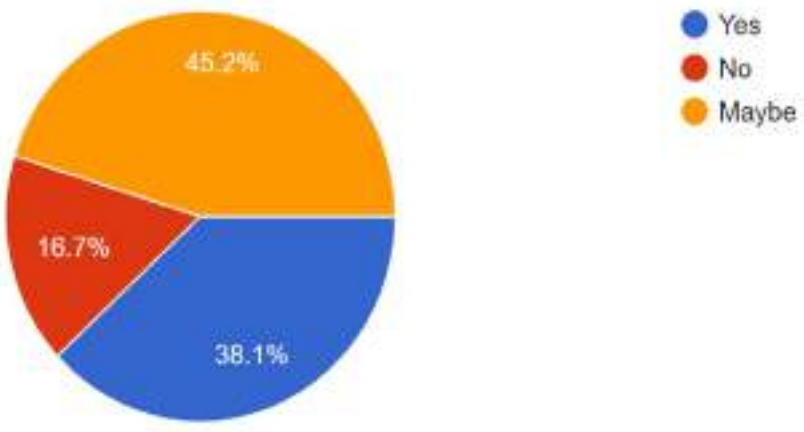


38.1% of respondents believe that the language and content used in web series is objectionable, while 45.2% are not sure, and 16.7% think that web series on OTT platforms do not contain objectionable content.

**Do you think web series have changed the language of youth?**

34.9% of respondents agreed that the content of web series has affected their language, whereas 27.9% of respondents disagreed.

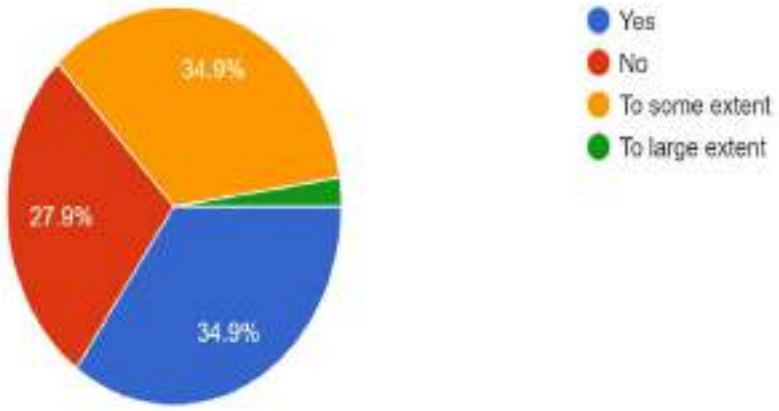


**Do you think web series should be censored for positive and healthy entertainment?**

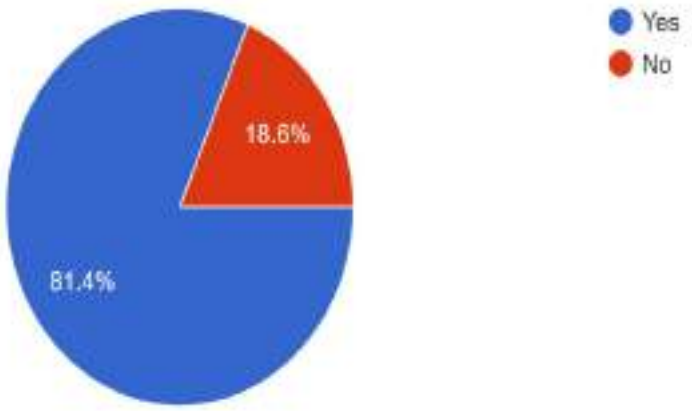


81.4% of respondents agree with the imposition of censorship, while 18.6% disagree, believing that government regulation may restrict the freedom to create original content.

**Your future usage of OTT platforms will?**

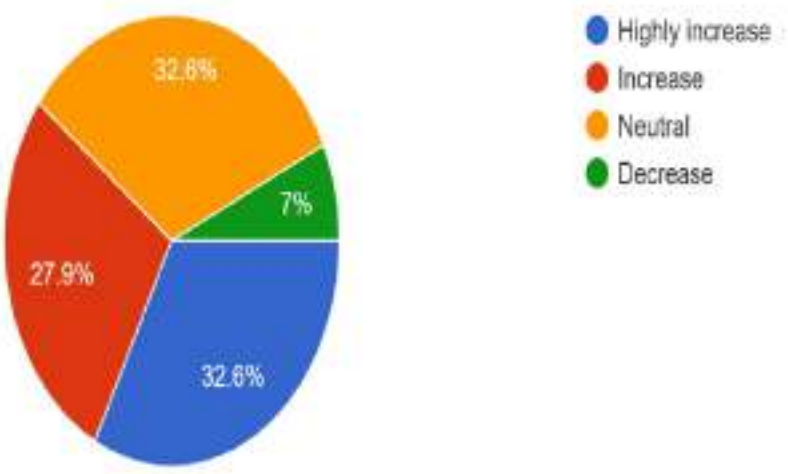


32.6% of respondents plan to significantly increase their OTT platform consumption, while another 32.6% intend to remain neutral. Additionally, 27.9% wish to increase their usage, and 7% plan to decrease it.

**Will you suggest others to use OTT platforms?**

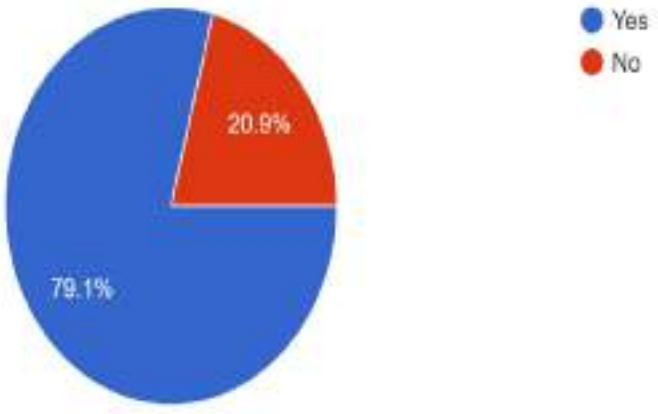


79.1% of respondents are confident that they would recommend OTT platforms to others, while 20.9% are opposed to suggesting them.

## Findings

### RQ1: How do different genres of web series impact audience engagement and preferences?

The study reveals that web series across various genres—such as **comedy, action, fantasy, and drama**—significantly contribute to audience engagement. Comedy emerged as the most preferred genre, with **46.5%** of respondents selecting it as their favorite, followed by action (**27.9%**), drama (**14%**), and fantasy (**11.6%**). The narrative structures, character development, and emotional depth of these genres often leave a lasting impression on the audience. Many respondents noted that web series often provoke thought, influence perspectives, and in some cases, impact cognitive and emotional patterns. While the content may not always reflect reality, its immersive storytelling can shape the viewer's thinking and behavior over time.

### RQ2: What is the level of popularity of major OTT platforms (Disney+ Hotstar, Amazon Prime, Netflix, and Sony Liv) among Indian youth?

The findings show that **Disney+ Hotstar is the most popular OTT platform**, with **65.8%** of the youth favoring it. **Netflix** follows closely with **57.9%**, and **Amazon Prime Video** is preferred by **50%** of the respondents. **Sony Liv**, while still used, lags behind in comparison. These platforms have gained prominence due to their accessibility, diverse content libraries, and alignment with youth preferences. The majority of respondents access these platforms weekly, indicating sustained engagement.

### RQ3: How does Hindi content on OTT platforms influence the perspectives and behavior of young viewers?

The study indicates that while OTT platforms provide creative freedom and cater to diverse viewer interests, certain Hindi web series include content that may negatively influence young audiences. Respondents expressed concern about the portrayal of **explicit language**, **sexual content**, and the **glorification of substance abuse** (alcohol, drugs, smoking). These elements, according to many, have the potential to shape **unethical behavior**, **alter communication patterns**, and **weaken academic focus**. A significant portion of respondents believe such content affects youth behavior and promotes values that may not align with societal or cultural expectations.

## Conclusion

The study confirms that web series have emerged as a dominant form of entertainment among Indian youth, largely replacing the traditional appeal of melodramatic, formulaic films and television soaps. Fueled by the digital revolution and increasing access to OTT platforms, youth audiences are drawn to the diverse content, relatable storytelling, and flexible viewing formats these platforms offer.

However, this rise in popularity comes with critical concerns. The study finds that while web series often engage audiences through innovative narratives and bold themes, a significant portion of content includes objectionable material—such as explicit language, sexual content, and the glorification of alcohol, drugs, and violence. Although many young viewers do not perceive such content as objectionable or in need of censorship, there is a concurrent acknowledgment that it can influence behavior, shape psychological responses, and affect spoken language.

The findings also reveal that the popularity of platforms like Disney+ Hotstar, Netflix, and Amazon Prime has grown substantially among youth, providing them with a wide range of choices tailored to their interests. Nevertheless, this freedom comes with responsibility. The cultural implications of web series are profound, influencing not only entertainment habits but also societal values and individual conduct.

In conclusion, while web series offer a progressive and engaging alternative to conventional media, their impact on youth cannot be overlooked. As the genre continues to grow, content creators, platforms, educators, and policymakers must work together to promote responsible storytelling that entertains without compromising ethical and cultural standards. The future of web series in India is promising, but its sustainability hinges on a balanced approach between creative freedom and social responsibility.

## References

1. Wagh, V. W., Deshpande, R. G., & Kiran, S. P. (2022). *A Study of Impact of Web Series and Streaming Content on Youth of India*. Journal of Positive School Psychology, 6(2), 392–397.

2. Kumar, S., & Mohapatra, A. K. (2020). *An Analytical Study of Content and Language of Indian Web Series*. Journal of Xi'an University of Architecture & Technology, 12(5), 919–930.

3. Shukla, M., & Waghmode, M. (2019). *A Study of Youth's Engagements in Watching Web Series*. BVIMSR's Journal of Management Research, 11(2), 131–136.

4. Upadhyay, A. (2024). *Impact of Web Series on Youth*. International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology (IJARSCT), 4(5), 84–90.IJARSCT

5. MICA. (2020). *The Indian OTT Landscape: Consumer Trends and Content Preferences*. MICA Insights Report.

6. Deloitte. (2019). *OTT Platforms in India: A Glimpse into the Future*. Deloitte Insights.Commencement+3IJRPR+3Academia+3

7. KPMG India. (2020). *Unravelling the Digital Video Consumer: Trends in Online Content Consumption*. KPMG India.

8. Kothari, C. R. (2004). *Research Methodology: Methods and Techniques* (2nd ed.). New Age International Publishers.

# कुँवर चंद्र प्रकाश सिंह के गीतों में राष्ट्रीय-सांस्कृतिक चेतना
## ('शम्पा' काव्य के संदर्भ में)

**अविरल पटेल***

**aviralhindi33@gmail.com**

**सारांश**

*यह शोध पत्र प्रसिद्ध छायावादी कवि कुँवर चंद्र प्रकाश सिंह की राष्ट्रीय-सांस्कृतिक चेतना को उनके काव्य 'शम्पा' के माध्यम से उद्घाटित करता है। शोध में यह स्पष्ट किया गया है कि सिंह की कविताएँ छायावाद की काव्य-शैली के भीतर रहकर भी भारतीय राष्ट्रीयता, संस्कृति, इतिहास और आत्मगौरव को मुखर रूप से अभिव्यक्त करती हैं।*

*छायावाद यद्यपि रहस्यवाद, स्वच्छंदता और आत्मचिंतन की प्रवृत्तियों से जुड़ा था, परंतु इसमें राष्ट्रीय चेतना का भी प्रभाव रहा है। कुँवर चंद्र प्रकाश सिंह इसी परंपरा में एक विशिष्ट स्थान रखते हैं, जिन्होंने अपने लगभग 60 वर्षों के साहित्यिक जीवन में ग्राम्य जीवन, प्रकृति, देशप्रेम, ऐतिहासिक गौरव और सांस्कृतिक महत्ता को काव्यात्मक अभिव्यक्ति दी।*

*'शम्पा' काव्य संग्रह, जिसमें 26 कविताएँ संकलित हैं, भारत की सांस्कृतिक विरासत, ऐतिहासिक स्थलों, स्वतंत्रता सेनानियों और राष्ट्र की महिमा का गान करता है। "मातृ-मूर्ति", "हल्दीघाटी", "विजया", "श्री प्रताप स्मृति", आदि कविताओं में भारतमाता, भारतीय इतिहास और वीरता की भावनाएँ ओज और श्रद्धा के साथ चित्रित हैं। सिंह की काव्य-शैली में प्रतीकवाद तो है, परंतु राष्ट्रप्रेम को उन्होंने प्रत्यक्ष, स्पष्ट और ओजस्वी रूप में प्रस्तुत किया है।*

*यह शोध निष्कर्ष देता है कि कुँवर चंद्र प्रकाश सिंह को छायावाद के राष्ट्रीय-सांस्कृतिक पक्ष का सशक्त प्रतिनिधि माना जाना चाहिए और उन्हें माखनलाल चतुर्वेदी, सुभद्राकुमारी चौहान, और सियाराम शरण गुप्त की परंपरा में रखा जाना समीचीन है।*

***मुख्य शब्द (Keywords):***

*छायावाद, कुँवर चंद्र प्रकाश सिंह, राष्ट्रीय चेतना, सांस्कृतिक चेतना, देशभक्ति, भारतीय इतिहास, प्रतीकवाद, हल्दीघाटी, मातृ-मूर्ति, हिंदी कविता, स्वतंत्रता संग्राम, शम्पा, आधुनिक हिंदी साहित्य, ओजकाव्य*

---

* **पी-एच. डी. शोधार्थी, हिंदी विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली**

**प्रस्तावना** –

छायावाद हिंदी साहित्य के आधुनिक काल का तृतीय चरण है, जिसकी पृष्ठभूमि में प्रथम विश्व युद्ध की विभीषिका, कालावधि में गांधी, टैगोर, भारतीय जनांदोलनों का संपर्क और उत्तरार्ध में स्वातंत्र्य युयुत्सा की जिजीविषा का प्रभाव है। यह समय सन् 1918 से सन् 1936 का है, जिसने हिंदी साहित्य को अलौकिक गाथाओं के केंद्र से मोड़कर आम जनों की मानसिक मुक्ति की ओर किया। **छायावाद** नामक संज्ञा पूर्ववर्ती विद्वानों द्वारा किया गया एक व्यंग थी परंतु मानव मुक्ति के आकांक्षी इन कवियों ने इसे मील का वह पत्थर बनाया जिसके बिना हिंदी साहित्य का पथ दिशाहीन है। छायावादी कवि और कविता अपनी वेदना को भी आत्मगौरव से स्वीकार करते हैं। छायावाद पर मिस्टिसिज्म अर्थात रहस्यवाद, रोमांटिसिज़्म अर्थात स्वच्छंदतावाद, रवींद्रनाथ टैगोर की कविताओं की प्रतिगूंज और अस्पष्टता का आरोप लगाया गया। कई आलोचकों और स्वयं छायावादी कवियों द्वारा इसे अन्योक्ति शैली, कबीर का रहस्यवाद, वेदांत के प्रतिबिंबवाद का नूतन संस्करण और प्राचीन काव्यशास्त्र के भ्रूण के आधुनिक स्वरूप आदि में परिभाषित किया गया। परंतु छायावाद इनमें से किसी एक रूप में न समा सका। यह रूढ़ियों से विद्रोह का कम अपितु मुक्ति का स्वर अधिक है। छायावादी कविता में आकर्षण है, अस्पष्टता के स्थान पर गूढ़ता है, मानों एक ही सूत्र में भाव रूपी मोती एक साथ पिरोए गए हैं जो पाठक की मनःस्थिति और परिस्थिति के अनुसार अनेक रंगों में परिलक्षित होते हैं।

यूं कहने को तो छायावाद में राष्ट्रीय चेतना प्रकृति के अनेक आयामी चित्रशिल्प, आत्ममुक्ति का स्वर और अज्ञात की जिज्ञासा आदि प्रवृत्तियां उपस्थित हैं परंतु खंडों में बांटकर छायावाद की प्रवृत्तियों को आसानी से समझा जा सकता है। सर्वप्रथम उत्थान में स्वच्छंदतावाद की झलक श्रीधर पाठक की कविताओं में मिलती है। उन्हें, स्वच्छंदतावादी कवियों में रामनरेश त्रिपाठी, मुकुटधर पांडेय के साथ सम्मिलित किया गया। द्वितीय उत्थान में प्रसाद, पंत, निराला और महादेवी हैं,जो छायावाद को प्रौढ़ बनाते हैं। राष्ट्रीय सांस्कृतिक जागरण चेतनायुक्त कवियों में बालकृष्ण शर्मा नवीन, माखनलाल चतुर्वेदी,सुभद्रा कुमारी चौहान और सियारामशरण गुप्त हैं। उसके पश्चात हरिवंश राय बच्चन छायावाद उत्तरार्ध के समानांतर हालावाद का प्रवर्तन किया और लोगों में उनकी मधुशाला के प्रति विलक्षण आकर्षण देखा जा सकता था।

हिंदी साहित्य में छायावाद, आधुनिक युग का वह महत्वपूर्ण चरण है, जिसने कविता को एक नया दृष्टिकोण दिया। इस काल ने भारतीय साहित्य को एक विशिष्ट दिशा प्रदान की, जो आत्मचिंतन, स्वच्छंदता, और रहस्यवाद से भरी हुई थी। छायावाद न केवल काव्यात्मकता की ऊँचाइयों को छूने वाला एक आंदोलन था, बल्कि यह भारतीय राष्ट्रीयता और सांस्कृतिक पुनर्जागरण का एक गहरा अभिव्यक्ति था। इस दौर के कवियों ने अपने शब्दों में मानवता, राष्ट्रप्रेम, और आध्यात्मिकता के भावों को मूर्त रूप दिया। इस धारा के प्रमुख कवियों में जयशंकर प्रसाद, सुमित्रानंदन पंत, महादेवी वर्मा, और सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' जैसे नाम

प्रमुख हैं। लेकिन इन्हीं के समकालीन रचनाकारों में एक प्रमुख नाम कुँवर चंद्र प्रकाश सिंह का भी था, जिन्होंने छायावादी परिप्रेक्ष्य में रहकर राष्ट्रीय-सांस्कृतिक चेतना को अभिव्यक्त किया।

उत्तर प्रदेश के सीतापुर जनपद में इसी दौर के आस-पास कुँवर चंद्रप्रकाश सिंह रचनात्मक कर्म में प्रवृत्त हुए। कुँवर जी के लगभग 60 वर्षों(1930-1990) के रचनाकाल में उनकी छायावादी एकरूप तारतम्यता उल्लेखनीय है। उनकी भाषा की प्रांजलता और तत्सम प्रधानता, विविध और बहुआयामी विषयों को अपनी परिधि में समायोजित कर लेती है। उनके गीतों में जागरण की चेतना है, प्रकृति का मधुमासी वर्णन है, ग्रामों की आंचलिकता है और अनन्य देशप्रेम है।

कुँवर चंद्र प्रकाश सिंह के काव्य में राष्ट्रीय और सांस्कृतिक चेतना का विशेष स्थान है। उनका काव्य विशेष रूप से छायावादी धारा से प्रभावित होते हुए भी अपने आप में अनूठा है। **शम्पा** काव्य इस बात का उत्कृष्ट उदाहरण है कि कैसे उन्होंने अपनी रचनाओं के माध्यम से भारतीय इतिहास, संस्कृति, और राष्ट्रप्रेम को संवारा है। कुँवर चंद्र प्रकाश सिंह का साहित्यिक योगदान उनके गीतों में स्पष्ट रूप से दिखाई देता है, जिनमें जागरण की चेतना, प्रकृति का अलौकिक वर्णन, ग्राम्य जीवन की सजीवता और देशप्रेम की अद्भुत भावना निहित है।

**छायावाद: ऐतिहासिक और साहित्यिक परिप्रेक्ष्य**

छायावाद हिंदी साहित्य का वह युग है जो राष्ट्रीय पुनर्जागरण और सांस्कृतिक चेतना के प्रसार से जुड़ा हुआ था। छायावाद को मूल रूप से रहस्यवाद और स्वच्छंदतावाद की शैली के रूप में देखा गया। यह वह समय था जब प्रथम विश्व युद्ध की विभीषिका से भारत भी प्रभावित हुआ था। उसी समय पर महात्मा गांधी के नेतृत्व में स्वतंत्रता संग्राम तेज़ी से चल रहा था। छायावादी कवियों ने अपने काव्य में न केवल प्रेम और करुणा की अभिव्यक्ति की, बल्कि भारतीय जनमानस में राष्ट्रीय चेतना को भी जागृत किया।

छायावाद की प्रमुख विशेषता यह है कि यह व्यक्ति के भीतर के संघर्ष, उसके आत्म-प्रेम, और उसके व्यक्तिगत अनुभवों को राष्ट्रीय चेतना और सांस्कृतिक तत्वों से जोड़ता है। छायावाद का प्रारंभिक स्वरूप वेदांत, रहस्यवाद, और रामायण-महाभारत की गाथाओं से प्रेरित था। इसमें मिस्टिसिज्म (रहस्यवाद) और रोमांटिसिज्म (स्वच्छंदतावाद) के तत्व भी विद्यमान थे। छायावादी कवियों के लिए यह आंदोलन आत्मा की मुक्ति और स्वत्व की खोज का माध्यम था। इसी भाव में छायावादी काव्य को समाज और संस्कृति से जोड़ा गया, जहाँ राष्ट्रीय चेतना ने गहन महत्व प्राप्त किया। कुँवर चंद्र प्रकाश सिंह का साहित्यिक जीवन इसी छायावादी परिप्रेक्ष्य में आकार ग्रहण करता है,जहाँ उन्होंने अपनी रचनाओं के माध्यम से भारतीय राष्ट्रीयता और सांस्कृतिक धरोहर को अपनी कविता में स्थान दिया। कुँवर चंद्र प्रकाश सिंह इसी छायावादी धारा का एक अभिन्न अंग थे, उनकी रचनाओं में राष्ट्रप्रेम और सांस्कृतिक चेतना का गहन प्रभाव देखने को मिलता है।

**कुँवर चंद्र प्रकाश सिंह का साहित्यिक योगदान :**

कुँवर चंद्र प्रकाश सिंह का काव्यिक योगदान छायावाद के भीतर होते हुए भी अपने अनूठे रूप में विकसित हुआ। उनके काव्य का विशेष आकर्षण उनका राष्ट्रीय प्रेम और सांस्कृतिक प्रतीकवाद है। उनका साहित्यिक सफर सन् 1930 से शुरू हुआ, जिसमें उन्होंने लगभग 60 वर्षों तक साहित्य की सेवा की। उनके काव्य में छायावादी तत्वों के साथ-साथ राष्ट्रीय जागरण और सांस्कृतिक समृद्धि के विचारों की गहनता स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर होती है।

कुँवर चंद्र प्रकाश सिंह की प्रमुख रचनाएँ जैसे **शम्पा** और **मेघमाला** उनकी सांस्कृतिक और राष्ट्रीय चेतना की साक्षी हैं। 'शम्पा' काव्य संग्रह का प्रकाशन सन् 1943 ई. उनके 'मेघमाला' गीत संग्रह के प्रकाशन के एक वर्ष पश्चात हुआ। इसमें उनकी राष्ट्रीय-सांस्कृतिक चेतना संबंधी रचनाओं का संकलन किया गया है। काव्य संग्रह में **26** कविताएं, **वंदना, मातृ-मूर्ति, पाटलिपुत्र, श्री प्रताप स्मृति, स्वागत, कांग्रेस, डौंड़ियाखेरा, हल्दी घाटी, हल, अयोध्या, दीन देश, अमीनाबाद, भारतीय मुसलमानों के प्रति, हिमालय, अविभाज्य अखंड अनादि देश, विजया, करबाल, वीरबाहु, श्री प्रताप जयंती, राना बेनीमाधव, बंदा बैरागी और छह स्फुट गीत** संकलित हैं। इन कविताओं में भारत देश के प्रति अखंड देशभक्ति, निष्ठा और प्रेम का दर्शन होता है। इनमें राष्ट्र और संस्कृति के प्रति गहन प्रेम और समर्पण की भावना है। यह काव्य संग्रह भारतीय संस्कृति की महानता और राष्ट्र के प्रति कवि की अटूट श्रद्धा का प्रतीक है। छायावाद के अन्य कवियों में राष्ट्रप्रेम की अभिव्यक्ति इतनी मुखर और स्पष्ट नहीं है। देश के प्रति उनका भाव प्रतीकों और अन्योक्तियों के माध्यम से व्यक्त हुआ है। चंद्र प्रकाश सिंह देश की अनेक विभूतियों और स्मारकों पर कविताएं लिख रहे थे, अतः उन्हें माखन लाल चतुर्वेदी, सुभद्राकुमारी चौहान, सियाराम शरण गुप्त जैसे राष्ट्रीय-सांकृतिक धारा के रचनाकारों की श्रेणी में गिना जाना चाहिए।

**'शम्पा' में राष्ट्रप्रेम और सांस्कृतिक गौरव की अभिव्यक्ति :**

कुँवर चंद्र प्रकाश सिंह की रचनाओं में छायावाद की मूल विशेषताएँ तो विद्यमान हैं ही, किंतु उनका राष्ट्रीयता के प्रति दृष्टिकोण छायावाद से अलग और अधिक मुखर है। जहाँ छायावादी कवियों ने प्रतीकों और अन्योक्तियों के माध्यम से अपने विचार व्यक्त किए, वहीं कुँवर चंद्र प्रकाश सिंह ने राष्ट्रप्रेम और सांस्कृतिक चेतना को प्रत्यक्ष रूप से व्यक्त किया। कुँवर चंद्र प्रकाश सिंह का काव्य छायावाद के समग्र प्रभाव में राष्ट्रीयता और सांस्कृतिक चेतना को अभिव्यक्त करता है। उनके काव्य का प्रमुख तत्व उनकी राष्ट्रप्रेम की भावना और भारतीय संस्कृति के प्रति उनकी अटूट निष्ठा है। उनके काव्य में छायावाद की शैली के साथ-साथ राष्ट्रीयता और सांस्कृतिक प्रतीकवाद का गहरा मिश्रण दिखाई देता है, जो उनके साहित्य को विशिष्ट बनाता है। शम्पा काव्य इस बात का प्रमाण है कि कैसे उन्होंने साहित्य को राष्ट्रीयता के साथ जोड़ा और भारतीय जनमानस में सांस्कृतिक गौरव को स्थापित किया।

शम्पा काव्य का मंगलाचरण नैमिषारण्य की पावन भूमि को समर्पित है। ऐसी मान्यता है कि नैमिषारण्य इस संसार का प्रथम तीर्थ है। महर्षि दधीचि जैसे त्याग-प्रतीक नैमिषारण्य में ही हुए हैं। वेद व्यास, ऋषि शौनक और 88,000 ऋषियों की तपस्थली का वर्णन करते हुए कवि भारत की प्राचीन वेद और ज्ञान परंपरा को नमन करते हैं। कविता की पंक्तियाँ भारतीय आध्यात्मिकता और स्वधर्म के प्रति कवि के गहन सम्मान को दर्शाती हैं। कवि ने यहाँ नैमिषारण्य की महानता और उसकी पवित्रता का वर्णन किया है, जो भारतीय संस्कृति का एक प्रमुख अंग है। किसी काव्य के मंगलाचरण हेतु **वंदना** करते हुए वे भारतभूमि के अक्षुण्ण गौरवमयी इतिहास का अभिवादन करते हैं

**यह सांस्कृतिक समृद्धि-वृद्धि का पावन उपक्रम,**
**यह स्वधर्म उत्थान हेतु भवदीय महा श्रम!**[1]

"**मातृ-मूर्ति**" कविता में कुँवर चंद्र प्रकाश सिंह ने भारत माता की महिमा का गुणगान किया है। इस कविता में उन्होंने भारत के भूगोल, हिमालय, नदियों, और महासागर को मानवीकृत करते हुए उन्हें मातृ रूप में प्रस्तुत किया है। इसके अतिरिक्त, उनकी कविताओं में हल्दी घाटी, अयोध्या, और श्री प्रताप स्मृति जैसे ऐतिहासिक स्थानों और घटनाओं का भी महिमामंडन किया गया है। मातृ-मूर्ति कविता भारत माता के श्रृंगार की कविता है। कवि ने भारत भूमि की प्राकृतिक आभा, किरीट हिमालय, जीवनदायिनी स्रोतस्विनी नदियां, कश्मीर घाटी और हिन्द महासागर को मानवीकृत किया है। यह कविता भारत की महानता और उसके सांस्कृतिक वैभव का प्रतीक है। यह प्रतीकात्मकता भारतीय संस्कृति की व्यापकता और उसके अतीत की गौरवशाली घटनाओं को दर्शाती है। कवि ने यहाँ भारतीय सभ्यता के गौरवशाली अतीत और उसकी ऐतिहासिक महत्ता को उभारने का प्रयास किया है। भारत माता हिन्द महासागर रूपी शेषनाग के सिंहासन पर विराजती हैं और उनके चरणों में शतदल कमल पुष्प की भाँति लंका का द्वीप शोभायमान होता है :

**गर्ज्जित लहरों के शत शत फन,**
**यह सिंधु शेष का सिंहासन,**
**आसीन सहज जिस पर अविचल,**
**माँ चरणों में लंका शतदल।**[2]

शम्पा भारतीय हिंदी साहित्य की एक अनमोल धरोहर है। इसमें राष्ट्रप्रेम, वीरता, बलिदान, प्रकृति, और आध्यात्मिकता का अद्भुत मिश्रण देखने को मिलता है। कुँवर चंद्र प्रकाश सिंह ने इस काव्य में भारतीय संस्कृति और परंपराओं को जीवन्त किया है। यह काव्य न केवल साहित्यिक दृष्टिकोण से महत्वपूर्ण है, बल्कि यह भारतीय राष्ट्रीयता और सांस्कृतिक चेतना का भी प्रतीक है।

उनकी कविता **विजया** में कवि ने राष्ट्र की विजय और उसकी स्वतंत्रता के लिए किए गए बलिदानों को ऐतिहासिक ऊर्जस्विता के दृष्टिकोण से चित्रित किया है। इस कविता में कवि ने उसी ओज को आध्यात्मिक आमंत्रण दिया है, जिसमें प्रत्येक व्यक्ति का आवाहन महत्वपूर्ण है :

**जागो जन जन में तन मन में नयनों में उल्का सी जागो**
**उर उर का विजड़ित तंद्रा में नयनों में उल्का सी जागो**
**इन ज्वलित क्षणों में जीवन के ओ अनलमयी तेरा स्वागत**
**शत-धूमकेतु सी स्मृतियों का संसार लिए तेरा स्वागत।**[3]

कवि ने अपनी कविताओं के माध्यम से भारतीय समाज के उन आदर्शों को पुनः जागृत किया है, जिनसे भारतीय संस्कृति सदियों तक संपन्न रही थी। उनकी कविता **अविभाज्य अखंड अनादि देश** में कवि ने भारतीय संस्कृति के विभिन्न पहलुओं को सजगता से वर्णित किया है। इस कविता में कवि ने भारतीय धर्म, संस्कृति, और परंपराओं का गुणगान किया है। यह कविता भारतीय संस्कृति और उसकी धरोहर को नमन करते हुए उसकी महत्ता को उजागर करती है :

**यह हिन्दू धर्म का धाम प्रथम, यह आर्य सभ्यता का उद्गम,**
**यह वेदों का संगीत चरम, उपनिषदों का वाणी विभ्रम,**
**ऋषि मुनियों का संचित तप श्रम, संसृति का मंगलमय उपक्रम,**
**यह निखिल धर का तीर्थ परम, अपहृत इससे जाग का भ्रम तम।**[4]

**'शम्पा' काव्य में राष्ट्रीय चेतना और देशभक्ति का स्वर :**

कुँवर चंद्र प्रकाश सिंह की रचनाएँ, विशेषकर शम्पा काव्य, उनके गहन राष्ट्रप्रेम और भारतीय इतिहास के प्रति उनकी गहरी निष्ठा को अभिव्यक्त करती हैं। यह काव्य संग्रह स्वतंत्रता संग्राम के दौरान लिखा गया था, इसलिए इसमें राष्ट्रीयता और देशभक्ति की भावना प्रमुखता से उभरकर आती है। शम्पा में संकलित कविताएँ न केवल भारतीय वीरों और स्वतंत्रता सेनानियों को समर्पित हैं, बल्कि यह कविताएँ भारत की सांस्कृतिक और ऐतिहासिक धरोहरों की भी महत्ता को उजागर करती हैं।

शम्पा काव्य में **हल्दी घाटी** कविता एक विशेष स्थान रखती है। इस कविता में हल्दी घाटी के युद्ध का चित्रण किया गया है, जो भारतीय वीरता और बलिदान की अद्वितीय घटना है। महाराणा प्रताप और उनके सेनानायकों के बलिदान को कवि ने इस कविता में महिमा मंडित किया है। हल्दी घाटी का युद्ध भारतीय इतिहास का वह महत्त्वपूर्ण प्रसंग है, जहाँ महाराणा प्रताप ने अकबर की विशाल सेना का सामना किया और अपने देश की रक्षा के लिए अपना सब कुछ न्योछावर कर दिया। कविता में वीरता और बलिदान का जो भाव है, वह भारतीय वीरता की परंपरा को स्मरण दिलाता है। कवि ने महाराणा प्रताप के साहस और अदम्य इच्छा शक्ति को प्रस्तुत किया है, जो न केवल उनकी वीरता का प्रतीक है, बल्कि यह भारतीय स्वाभिमान और स्वतंत्रता की भावना का भी चित्रण है:

**हल्दीघाटी राजपूत शोणित से रंजित**

**पुण्य तीर्थ बन गई अमरता की निधि वंदित**
**झाला की बलिदान भूमि ओ हल्दीघाटी**
**जगा, जगा फिर क्षात्रधर्म की नव परिपाटी।**[5]

**श्री प्रताप स्मृति** कविता भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के नायकों को समर्पित है। इस कविता में कवि ने उन स्वतंत्रता सेनानियों को श्रद्धांजलि दी है, जिन्होंने अपने जीवन को देश की स्वतंत्रता के लिए समर्पित कर दिया। यह कविता उनके बलिदान, संघर्ष, और अद्वितीय योगदान का सम्मान करती है। कवि ने इस कविता के माध्यम से उन अनगिनत वीरों को याद किया है, जिन्होंने अपने प्राणों की आहुति देकर स्वतंत्रता का मार्ग प्रशस्त किया। कविता का यह अंश विशेष रूप से उल्लेखनीय है जिसमें कवि ने वीरता को भारतीय इतिहास की चेतना के रूप में प्रस्तुत किया है, जो भविष्य के लिए प्रेरणा का स्रोत है:

**ये किरणें आलोक यही उतरे उर उर में**
**जागे, जागे जाति मुक्ति-निष्ठा हो स्वर में**
**हँस हँस दे दें शीश करें शोणित का तर्पण**
**हो अपना सर्वस्व देश हित हेतु समर्पण**[6]

**प्रकृति और राष्ट्रीयता का मिश्रण :**

शम्पा काव्य में केवल राष्ट्रीयता और इतिहास ही नहीं, बल्कि प्रकृति और आध्यात्मिकता का भी विशेष मिश्रण दिखाई देता है। यह काव्य संग्रह प्रकृति के विभिन्न रूपों और तत्वों को मानवीकृत करके प्रस्तुत करता है। हिमालय, गंगा, यमुना, और अन्य प्राकृतिक तत्वों का मानवीकरण करते हुए कवि ने उनके आध्यात्मिक और सांस्कृतिक महत्त्व को दर्शाया है।

हिमालय को कवि ने भारतीय संस्कृति के अविचल स्तंभ के रूप में चित्रित किया है। यह पर्वत भारत की भौगोलिक सीमाओं का प्रतीक है, लेकिन कवि ने इसे आध्यात्मिकता और राष्ट्रीयता के साथ जोड़ा है। हिमालय को माँ का मुकुट बताया गया है, जो भारतीय संस्कृति और सभ्यता का अभिन्न अंग है। यह न केवल भारतीय भूगोल का प्रतीक है, बल्कि यह भारतीय संस्कृति के धैर्य, साहस, और आध्यात्मिकता का भी प्रतीक है। उनकी कविता "**हिमालय**" में हिमालय पर्वत को संस्कृति और आध्यात्मिकता के प्रतीक के रूप में प्रस्तुत किया गया है। यह कविता हिमालय की महत्ता को दर्शाते हुए भारतीय सभ्यता की स्थिरता और अनंतता को प्रतीकात्मक रूप में प्रकट करती है। कवि ने हिमालय को केवल एक पर्वत नहीं , बल्कि भारतीय संस्कृति के स्थायित्व और उसकी अनंतता का प्रतीक माना है। "हिमालय" में कवि ने लिखा है :

**अचल तुम्हारे सानुदेश पर,**
**अरुणकेतु वह लहराया,**

**जिसकी छाया में धरणी ने,**
**अविचल राम राज्य पाया**[7]

गंगा और यमुना नदियाँ भारतीय संस्कृति में जीवनदायिनी नदियों के रूप में जानी जाती हैं। कवि ने इन नदियों को केवल भौगोलिक तत्व के रूप में नहीं, बल्कि जीवनदायिनी स्रोतस्विनी के रूप में चित्रित किया है। गंगा और यमुना का जल भारतीय जीवन का पोषण करता है, और यह भारतीय आत्मा का प्रतीक हैं :

**बहती नदियां श्रुति सुख कल कल**
**फैला जीवन का कोलाहल**
**गंगा यमुना कल कंठ-हार**
**श्रुति-प्रथित पंचनद छवि अपार।**[8]

यह काव्य केवल राष्ट्रप्रेम और स्वतंत्रता संग्राम की घटनाओं का ही चित्रण नहीं करता, बल्कि इसमें भारतीय संस्कृति और परंपराओं का भी महिमा मंडन किया गया है। कवि ने अपनी कविताओं में भारतीय संस्कृति के विभिन्न तत्वों जैसे वेद, पुराण, और प्राचीन ज्ञान परंपरा को स्थान दिया है।

**शम्पा काव्य में सांस्कृतिक और सामाजिक चिंतन :**

शम्पा काव्य, कुँवर चंद्र प्रकाश सिंह के राष्ट्रप्रेम और भारतीय सांस्कृतिक मूल्यों को समर्पित एक अद्वितीय कृति है। यह काव्य संग्रह न केवल भारतीय इतिहास की गाथाओं को दर्शाता है, बल्कि इसमें गहरी सांस्कृतिक और आध्यात्मिक धारणाएँ भी निहित हैं। कवि ने अपने काव्य में भारतीय परंपराओं, धार्मिक प्रतीकों, और ऐतिहासिक स्थलों को प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत किया है।

कविता "**अयोध्या**" में अयोध्या नगरी का वर्णन किया गया है, जो भारतीय संस्कृति और इतिहास का प्रमुख स्थल है। इस कविता में कवि ने भगवान राम के आदर्शों और अयोध्या की धार्मिक महत्ता को उभारा है। यह कविता अयोध्या के सांस्कृतिक और धार्मिक गौरव का प्रतीक है। अयोध्या केवल एक ऐतिहासिक नगरी नहीं है, बल्कि यह भारतीय संस्कृति की आत्मा का प्रतीक है, जिसे कवि ने बखूबी अभिव्यक्त किया है। "अयोध्या" कविता में कवि ने अयोध्या की धार्मिक महत्ता का उल्लेख करते हुए कहा:

**राम राज्य का केतु दिवाकर वह फहराया,**
**राम राज्य का धर्म सेतु सागर पर छाया**
**राम राज्य के केंद्र धन्य इस पुण्य धरा पर,**
**आए हो यदि बंधु आज श्रद्धा के पग पर।**[9]

कुँवर चंद्र प्रकाश सिंह ने अपने काव्य में भारतीय धार्मिक और सांस्कृतिक प्रतीकों का व्यापक उपयोग किया है। उदाहरण के लिए, शम्पा की कविता "**दीन देश**" में कवि ने भारत के गरीब और पीड़ित जनों

की दशा का वर्णन किया है और समाज की उदासीनता के प्रति चिंता व्यक्त की है। इस कविता में कवि ने दीन-हीन किसानों की ओर ध्यान दिलाया है, जो समाज के अन्नदात्री वर्ग का प्रतिनिधित्व करते हैं :

**देश की ये विविध छाया मूर्तियाँ**
**मृण्मरण जो प्राण उनकी स्फूर्तियाँ**
**दुर्दलित पीड़ित यही अपने किसान,**
**दीन हैं ये, और इनका इनका दीन देश।**[10]

## निष्कर्ष :

कुँवर चंद्र प्रकाश सिंह का काव्य भारतीय सांस्कृतिक और आध्यात्मिक आदर्शों का प्रतीक भी है। शम्पा काव्य संग्रह में कवि ने भारतीय इतिहास, धर्म, और संस्कृति को जीवंत किया है। उनकी कविताओं में न केवल राष्ट्रप्रेम और बलिदान का भाव है, बल्कि उनमें आध्यात्मिक गहराई और सांस्कृतिक धरोहरों की पुनर्स्थापना का संदेश भी निहित है। साथ ही कवि ने उन सामाजिक और सांस्कृतिक मुद्दों को भी उठाया है, जिनसे तत्कालीन समाज जूझ रहा था। शम्पा की कविताओं में भारतीय संस्कृति की समृद्धि और उसकी गहनता का सुंदर चित्रण किया गया है, जो न केवल साहित्यिक दृष्टिकोण से बल्कि राष्ट्रीय, सांस्कृतिक और आध्यात्मिक दृष्टि से भी अत्यंत महत्वपूर्ण है।

## संदर्भ :-


1. सिंह, डॉ. रवि प्रकाश. (2022). घनमाला (शिवमोहन सिंह, सं.). (प्रथम संस्करण) प्रयागराज: भारती प्रकाशन. पृ. 112
2. वही, पृ. 114
3. वही, पृ. 164
4. वही, पृ. 159
5. वही, पृ. 141
6. वही, पृ. 121
7. वही, पृ. 155
8. वही, पृ. 114
9. वही, पृ. 144
10. सिंह, डॉ. रवि प्रकाश. (2022). घनमाला (शिवमोहन सिंह, सं.). (प्रथम संस्करण) प्रयागराज: भारती प्रकाशन, पृ. 146

# बुकानन के नजरों में गया

**राहुल कुमार***

**rahulsatuahi@gmail.com**

**शोध-सार**

फ्रांसिस बुकानन एक चिकित्सक और सर्वेक्षक थे, जिन्होंने 19वीं सदी की शुरुआत में ब्रिटिश ईस्ट इंडिया कंपनी के लिए भारत के विभिन्न क्षेत्रों का सर्वेक्षण किया था। उनके द्वारा किए गए सर्वेक्षणों में गया क्षेत्र भी शामिल था। बुकानन के नजरों में गया का विवरण उनके विस्तृत सर्वेक्षण और अध्ययन का हिस्सा था, जिसमें उन्होंने इस क्षेत्र की भौगोलिक, सामाजिक और आर्थिक स्थितियों का विश्लेषण किया था। बुकानन के अनुसार गया क्षेत्र में कृषि, वनस्पति, खनिज संसाधन और स्थानीय जनजातियों की स्थिति पर विस्तृत जानकारी दी गई थी। उन्होंने इस क्षेत्र के प्राकृतिक संसाधनों और उनकी संभावनाओं का भी अध्ययन किया था। बुकानन के सर्वेक्षणों का उद्देश्य ब्रिटिश शासन के लिए राजस्व और प्रशासनिक सुधारों के लिए आवश्यक जानकारी एकत्रित करना था।

**शब्दकुंजी**- बुकानन, कृषि, वनस्पति, खनिज संसाधन, ब्रिटिश शासन, गया क्षेत्र

**बुकानन कौन था?**

फ्रांसिस बुकानन एक चिकित्सक था जो भारत आया और बंगाल चिकित्सा सेवा में (1794 से 1815 तक) कार्य किया। कुछ वर्षों तक, वह भारत के गवर्नर जनरल लार्ड वेलेज्ली का शल्य-चिकित्सक रहा। कलकत्ता (वर्तमान में कोलकत्ता) के अपने प्रवास के दौरान उसने कलकत्ता में एक चिड़ियाघर की स्थापना की, जो कलकत्ता अलीपुर चिड़ियाघर कहलाया। वे थोड़े समय के लिए वानस्पतिक उद्यान में प्रभारी रहे। बंगाल सरकार के अनुरोध पर उन्होंने ब्रिटिश ईस्ट इंडिया कंपनी के अधिकार क्षेत्र में आरे वाली भूमि का विस्तृत सर्वेक्षण किया। 1815 में वह बीमार हो गए और इंग्लैण्ड चले गए। अपनी माता की मृत्यु के पश्चात् वे जायदाद के वारिस बने और उन्होंने उनके वंश के नाम 'हैमिल्टन' को अपना लिया। इसलिए उन्हें अक्सर बुकानन-हैमिल्टन भी कहा जाता है।

**परिचय**

बिहार के सबसे बड़े शहरों में से एक गया का गौरवशाली और समृद्ध इतिहास है जो न केवल सदियों पुराना है बल्कि इसका राजनीतिक और धार्मिक महत्व भी है। यह वह भूमि है जहाँ गौतम बुद्ध से ज्ञान प्राप्त किया और बौद्ध धर्म की स्थापना की। गया अपने सुरम्य परिदृश्य और सुंदर मंदिरों के लिए जाना जाता है, इस

* **पीएच. डी. शोधार्थी, इतिहास विभाग, मगध विश्वविद्यालय, बोधगया (बिहार)**

शहर का उल्लेख हिंदू महाकाव्यों रामायण और महाभारत में भी मिलता है। कभी मगध क्षेत्र का हिस्सा रहे इस प्राचीन शहर पर कई राजवंशी ने सदियों तक शासन किया और इसकी संस्कृति सिर्फ बुद्धिजीवियों तक ही सीमित नहीं है बल्कि आम लोगों की वित्तीय गतिविधियों, धार्मिक विचारों, नैतिक सिद्धांतों और राजनीतिक व्यवस्था को भी शामिल नहीं करती है। इस अध्ययन में गया को एक सामाजिक-सांस्कृतिक केंद्र के रूप में खोजने और उन पहलुओं को तलाशने का प्रयास किया गया है जिन्होंने इस शहर को नहान साहित्य, कला और वास्तुकला की भूमि और एक समृद्ध अर्थव्यवस्था बनाया जिसने शासकों और तीर्थयात्रियों को भी आकर्षित किया।

अबुल फजल से लेकर ई. एम. फॉस्टर तक सभी ने अपने लेखन में गया का उल्लेख किया है। यह ईस्ट इंडिया कंपनी के भी एक आँख का तारा था। इसलिए उन्होंने समय-समय पर अपने सर्वेक्षक को गया और आसपास के स्थानों पर भेजा। रेनेल (1742-1830), कनिंघम (1814-1893), वाल्टर हैमिल्टन (1856-1879) और किट्टो (एक पुरातत्व सर्वेक्षक) को ब्रिटिश ईस्ट इंडिया कंपनी द्वारा इस स्थान के बारे में अधिक जानने के लिए भेजा गया था।

एक प्रसिद्ध सुधारक चैतन्य ने भी 1508 ई॰ में पिंडों की पेशकश करने के लिए एक हिंदू तीर्थयात्री के रूप में इस स्थान का दौरा किया था। प्राचीन से मध्यकालीन काल में राजनीतिक परिवर्तनों के बावजूद बुकानन ने गया के सामाजिक सांस्कृतिक परिदृश्य में निरंतरता और प्रगति पाई। गया की यात्रा करने वाले शुब्जाती विद्वानों और तीर्थयात्रियों में से एक चीनी बौद्ध भिक्षु फाहियान (337-422) और चीनी विद्वान ह्वेन त्सांग (630-645) शामिल हैं, एक चीनी विद्वान इ-त्सिंग (635-713) ने भी इस स्थान का दौरा किया और इस पवित्र शहर के बौद्ध मार्गों का पता लगाने की कोशिश की।

अंग्रेजी ईस्ट इंडिया कंपनी ने ब्रिटिश विस्तार के आर्थिक हित को पूरा करने के उद्देश्य से बुकानन को अन्वेषण के लिए भेजा था। बुकानन ने 1811 में रिकॉर्ड करने के लिए गवर्नर जनरल इन काउंसिल के कुछ निर्देशों के साथ इस स्थान का दौरा किया था, जो 11 सितंबर 1807 को इस निर्देश के साथ जारी किए गए थे कि ''आपकी जांच फोर्ट विलियन प्रेसीडेंसी के तत्काल अधिकार के अधीन पूरे क्षेत्र में बाहरी है।''[1]

इसलिए बुकानन ने 16 अक्टूबर 1811 से 6 मर्च 1812 तक पटना और गया की अपनी यात्रा जारी रखी और शाहाबाद की ओर बढ़ गए। मोनियर ने 1876 में इस स्थान का दौरा किया और क्षेत्र की धार्मिक मान्यताओं से संबंधित अपने विचारों का विस्तार किया।

गया की यात्रा के दौरान बुकानन को किस बात ने आश्चर्यचकित किया? उनकी यात्रा को यादगार बनाने वाली क्या बात है? हम पिछले अध्यायों में जान चुके हैं। बेलम पहाड़ी के पूर्वी और पश्चिमी हिस्से में खदानों में काम करते हुए बुकानन को तब आश्चर्य हुआ जब उन्होंने देखा कि लोगों को इसके अंदर ले जाने के लिए सीढ़ी की आवश्यकता होती है। खदानों के अवलोकन के बाद उन्होंने कहा कि यह काम करना बहुत खतरनाक है और इसे 'ईश्वर का प्रकोप कहा और इसके लिए वैज्ञानिक तकनीक का उपयोग नहीं कर रहे थे।

फिर जब उन्होंने देखा कि लोग श्राद्ध के दौरान भगवान के नाम पर खर्च करते हैं और उनकी पौराणिक कथाओं से जुड़ी मान्यताएँ उन्हें आश्चर्यचकित करती है। अगर सामाजिक महत्व की बात करें तो भी उन्हें आश्चर्य होता है। कुछ अनुष्ठानों के नाम पर, जैसे कि सगाई, जो विशेष रूप से शूद्रों में प्रचलित थी, जिसमें युवा विधवा अपने पति के छोटे भाई से विवाह करती थी। इतना ही नहीं, वह समाज में विवाह की विभिन्न शैलियों से भी आश्चर्यचकित थे। सबसे अधिक प्रचलित बात जो उन्होंने देखी वह थी कि लोग अपने जूते पहनने के बजाय हाथ में लेकर चलते थे और उन्होंने इसे 'विलासिता की वस्तु' कहा। जब वे वनस्पति वृक्ष की खोज में व्यस्थ थे तो उनमें से कुछ को देखकर वे आश्चर्यचकित हो गए। एक ओर उन्हें रंगगोपुर की अपीन पिछली यात्रा का स्मरण करके ग्लानि हुई कि लोगों ने उन्हें बरगद के पेड़ या फाइकस बंगालेंसिस के बारे में गुमराह किया था जिसे सामान्यतः बार और बरकत के नाम से जाना जाता था और कहा गया था कि गया (अक्षयबट) का वृक्ष पवित्र है। परन्तु उन्होंने इसे सामान्य बरगद से भिन्न पाया। दूसरी ओर कैसिया (फिस्टुला या अमलतास या बंदरलौरी) या विलायती जैती की एक प्रजाति ने उन्हें उलझन में डाल दिया कि क्या इसे कलकत्ता के वनस्पति उद्यान से किसी ने लाया है, क्योंकि उन्हें यह किसी वनस्पति विज्ञान की पुस्तक में नहीं मिला।[2]

भारत में उनका कार्यकाल विभिन्न जिम्मेदारियों और उपलब्धियों से भरा हुआ था। एशिया और वेस्टइंडीज की यात्रा के बाद उन्हें 1794 में बंगाल में नियुक्ति मिली। लेकिन उन्होंने इससे भी अधिक किया, उन्होंने क्षेत्र का सर्वेक्षण किया और मिट्टी की स्थिति, वनस्पति विषयों, फसल पैटर्न, सामाजिक संस्थाओं और क्षेत्र के समाज और अर्थव्यवस्था से संबंधित कई अन्य पहलुओं का अवलोकन किया।[3] बुकानन ने सर्वेक्षण के दौरान लिशा कि ''आगे लगभग एक मील चलने के बाद में (मैं) चट्टानों के एक शिलाफलक पर आ गया; जिसका कोई यह एक छोटा दानेदार ग्रेनाइट है जिसमें लाल-लाल फेल्डस्पार, क्वाटर्ज और काला अबरक लगा है... वहाँ से आधा मील से अधिक दूरी पर मैं एक अन्य चट्टान पर आया वह भी स्तरहीन थी और उसमें बारीक दानों वाला ग्रेनाइट था जिसमें पीला-सा फेल्डस्पार, सफेद-सा क्वार्ट्ज और काला अबरक था।''

''गयालियों में से कोई भी मुझसे संवाद नहीं करता था, क्योंकि उन्हें डर था कि उनके साथी उन्हें दोषी ठहराएँगे।[4]

बुकानन के इस कथन से स्पष्ट है कि गया के लोग अंग्रेजी से जुड़ने में बिल्कुल भी रुचि नहीं रखते थे। वे उसे अजनबी समझते थे और शर्म भी महसूस करते थे। कुल मिलाकर वे बुकानन से बात करने में सहज नहीं थे। गया एक प्रसिद्ध स्थान है। वह अपने मंदिरों और आध्यात्मिकता के लिए जाना जाता है। यह बौद्धों के लिए उतना ही पवित्र तीर्थस्थल है, जितना मुसलमानों के लिए मक्का, हिंदुओं के लिए काशी और प्रयाग और ईसाइयों के लिए यरुशलम। यह अलग-अलग लोककथाओं और इतिहास का स्थान है। यही इसे अन्य स्थानों से अलग बनाता है।

**पौराणिक कथा और इतिहास**

गया अमृतयेस का पुत्र था। गया के प्राचीन शहर की स्थापना उसने की थी जो समय के साथ एक धार्मिक शहर बन गया। वह एक बहादुर और शक्तिशाली राजा था। गया ने सात अश्वमेघ यज्ञ किए ताकि वह अपने दुश्मनों पर सात बार विजय प्राप्त कर सके।

**वायु पुराण में गया**

गया को पवित्र स्थलों में से एक रहस्यमय स्थान कहा जाता है। ऐसा कहा जाता है कि जो व्यक्ति यहां पिंडदान करता है, उसका दोबारा जन्म नहीं होता। जो व्यक्ति अपने जीवनकाल में एक बार भी गया जाता है और पिंडदान करता है उसके पितरों को मुक्ति मिलती है। ऐसा माना जाता है कि अगर कोई व्यक्ति जो गया जाने के योग्य है, वहां नहीं जाता है, तो पितर उसे दुःखी करते हैं और उसके प्रयास व्यर्थ हो जाते हैं।

**मत्स्य पुराण के अनुसार**

पितृ तीर्य गयानाम सुर्व तीर्थ बरं शुभम्।
यत्र यस्ते देव देवेशः देवेशः स्वमेव पितामह।[5]

**श्लोक का अर्थ-** गया सभी तीर्थों में सबसे श्रेष्ठ है। भगवान ब्रह्मा, जो संसार के पितामह हैं, देवों के प्रमुख के स्वामी हैं, यहीं रहते हैं।

**विष्णु संहिता के अनुसार**

एष्टव्य बहवः पुत्र गुणवंतो बहुश्रुतः।

तेसां वै समावितानां अपि कश्चिद् गयाम ब्रजेत।[6]

**श्लोक का अर्थ-** इस आशा में अनेक पुत्रों की कामना करनी चाहिए कि उनमें से कम से कम एक गया जाए या श्राद्ध करे।

गयासुर नारद पुराण के अनुसार गया के बारे में एक महान पौराणिक कथा। गयासुर नाम का एक अत्यंत शक्तिशाली राक्षस था। उसने एक अत्यंक भयानक तपस्या की, जिससे सभी जीव जल गए। बुकानन के अनुसार- ''गयासुर एक मुनिथ थे जिन्होंने रामगढ़ा में दस कोस दक्षिण में कोलाहल पहाड़ी पर धार्मिक अनुष्ठान किए थे, वही स्थान जहाँ सत्युग में दुनिया के राजा हरिश्चंद्र राजा ने अपनी पूजा की थी। रोहतासगढ़ का निर्माण उसके बेटे रोतिहास ने करवाया था। लेकिन हरिश्चंद्र गयासुर से बहुत पहले रहते थे, जो लाबा के अंत या दुआपर की शुरुआत में फले-फूले। बौद्धों के बीच गयासुर की पूजा नहीं की जाती है। वर्ततान गया के पास उनका कोई मंदिर नहीं था, लेकिन कहते हैं कि गौतम ने अक्षय वृक्ष के तहत छह साल गुजारे थे; जिसे वे गौतम वृक्ष कहते हैं।''[7]

बुकानन बुद्ध के अनुयायियों से प्रभावित रहे होंगे, इसलिए उन्होंने इस स्थान से जुड़ी उनकी मान्यता का उल्लेख किया। उन्होंने यह भी उल्लेख किया कि सतयुग के राजा हरिश्चंद्र रामगढ़ में पूजा करते थे और राक्षस के साथ रहते थे।

गयासुर और उन्होंने पहचाना कि कोई भी बौद्ध गयासुर की पूजा नहीं करता है और न ही उनके वर्तमान गया का कोई मंदिर है। हालांकि गौतम बुद्ध अक्षयबट के अधीन छह साल तक रहे थे। बयान से पता चलता है कि किसी न किसी तरह से बुकानन इस बात से सहमत थे कि यह स्थान बौद्धों के साथ-साथ हिंदुओं

से भी संबंधित है। गया के नाम के बारे में तथ्य गया उतना ही पुराना शहर है जितनी देवी-देवताओं की कहानियाँ हैं। धार्मिक ग्रंथों से पता चलता है कि गया का नाम किसी विशालकाय ''गया'' के नाम पर नहीं रखा गया है, जिसके पास दिव्य शक्ति थी और जिसे बाद में विष्णु ने हरा दिया था।

गया को अलग-अलग समय अवधि में अलग-अलग नामों से जाना जाता था। इसे पूर्व-वैदिक शहर के रूप में जाना जाता है और यह दुनिया के सबसे पुराने मौजूदा शहरों में से एक है, ''किकट'' गया का वैदिक नाम था जिसे बाद में मगध के कंद्र के रूप में पहचाना गया।[8] महाभारत में गया को गयापुरी कहा गया है; जो शाही ऋषि ''गय'' के नाम से लिया गया था जिन्होंने गया में कई बलिदान किए थे। गया को पुराण युग में ब्रह्म गया या ब्रह्मपुरी के नाम से भी जाना जाता था। मुगल काल में इसे आलमगीरपुर के नाम से जाना जाता था। भागवत पुराण में इसे अमरावती या इंद्र की नगरी के नाम से जाना जाता था। ब्रिटिश काल में गया के नए शहर की पहचान साहेबगंज के रूप में हुई। स्थानीय लोग इसे लॉस्टि कहते थे। इसे इलाहाबाद के नाम से भी जाना जाता था। वर्तमान में गया के कुछ विशिष्ट क्षेत्र हैं और उनके अपने नाम हैं। आधुनिक स्थान के रूप में विकसित हुआ यह शहर आज भी गया असुर के नाम से जाना जाता है। बुकानन जब उन्होंने पहली बार देखा कि गया के लोग भागलपुर की तुलना में इतिहास के मामले में कम रुचि रखते थे और यहाँ तक कि मुसलमानों ने भी अपने इतिहास की सारी चिंता छोड़ दी थी।

बुकानन ने उल्लेख किया मगध शब्द की सबसे तर्कसंगत व्युत्पत्ति मेजर सिलफोर्ड द्वारा दी गई है (ए.एस. रेस, खंड 9. पृष्ठ 32)। कृष्ण के पुत्र साम्ब ने अपनी बीमारी से मुक्ति पाने के लिए शक नामक देश से ममर्गा या ब्राह्मणी की एक बस्ती बसाई। इसलिए, इस जिले के कोल, प्रायद्वीप के उत्तरी भाग के इन कोल के समान ही होंगे, जिसे अब तरेगना कहा जाता है और उनके राजकुमार जरासंध की सीधी वंशावली के विफल होने पर उसी परिवार की एक समानांतर शाखा के रूप में हो सकता है कि वह गंगा के तटीय प्रदेशों की सरकार का उत्तराधिकारी बना हो और मेजर विलफोर्ड के सुनाकों के साथ भी ऐसा ही हो सकता है, जिनमें अजका या अशोक चौथा राजकुमार था। फिर बुकानन ने दर्ज किया कि काबर, मुख्य खंडहर जिसे कोल या चेरो का बताया जाता है, बुद्ध गया के तत्काल आसपास के क्षेत्र में था, जहाँ अशोक का महल था और जाहिर तौर पर यह किसी शक्तिशाली राजकुमार का काम रहा है और इसे मजबूती से किलाबंद किया गया था, जबकि बुद्ध गया के महल की सुरक्षा बहुत कमजोर थी। इसलिए, उसने अनुमान लगाया कि काबर राजकुमार का गढ़ था, जो बुद्ध गया में रहता था।[9]

फिर से बुकानन ने तर्क दिया कि ''मैंने पाल राजाओं या उत्तर के अन्य राजकुमारों से संबंधित किसी भी महत्वपूर्ण कार्य के अवशेष नहीं खोजे हैं, जिन्होंने नकली आंधी को उखाड़ फेंकने के बाद गंगा के प्रांतों पर शासन किया था। मेरा मानना है कि पाल आमतौर पर चांडालगर या चुनार में रहते थे, जो इतनी दूर थे कि उनके महान कार्यों में से कोई भी इस जिले तक नहीं फैला लेकिन उनकी शक्ति को स्वीकार करने वाले कई शिलालेख गया में बचे हुए हैं।[10] यह राजवंश बुद्धों के संप्रदाय के रूप में जाना जाता है। वास्तव में, जहाँ तक मगध का प्रश्न है, मुसलमानों के आने तक ब्राह्मण पुरोहितों ने, यद्यपि यह संभवतः भारत में उनके सबसे प्राचीन

निवासी में से एक था, या उनका मूल निवास स्थान नहीं था, लोगों को धर्मांतरित करने में अधिक प्रगति नहीं की थी।[11] यहाँ तक कि यह संदेह करने का कारण भी है कि इनमें से अधिकांश मग बुद्धों की विधर्मिता से प्रभावित हो गए थे, इस देश में कई ब्राह्मणों द्वारा मग शब्द को किरात या काफिर का पर्याय माना जाता है; और सभी कट्टर हिंदुओं द्वारा यह माना जाता है; मगध पर शासन करने वाले अधिकांश राजवंशी ने बुद्धों के सिद्धांत को स्वीकार किया है। यह वह काल है जो नकली आंधी के पराभव और मुसलमानों की विजय के बीच का है, जिसके बारे में मुझे लगता है कि हम सबसे अधिक संभावना के साथ वसु राजा के शासन का उल्लेख कर सकते हैं, जिसका विवरण वायु-पुराण में दिया गया है। वह बिहार के राजगृह में रहता था, जो जरासंध का प्राचीन गढ़ था, हालांकि संभवतः पालों का अधीनस्थ था। 'पूरा क्षेत्र सार्वभौमिक रूप से पुराने हिंदू क्षेत्र मगध में माना जाता है।[12] यहाँ हम कह सकते हैं कि बुकानन ने मगध को एक पुराना हिंदू क्षेत्र माना है।

बुकानन ने बताया कि मगध के प्राचीन राज्य का वह भाग जो गया क्षेत्र से आच्छादित था, कपिलवस्तु के राजकुमार सिद्धार्थ द्वारा खोजा गया था।[13] इसे आर्यों द्वारा जंगली जनजातियों द्वारा बसाया गया क्षेत्र माना जाता था। जैसा कि गया के मेले के गजेटियर का उल्लेख किया गया है कि मगध अभी भी आदिवासी जातियों के कब्जे में था, जिन्होंने आर्य प्रवासियों को जगह दी और तब से यह इन जनजातियों का घर बना रहा, उस समय जब तिरहुत और अवध आर्य बस्तियों से भरे हुए थे। यह एक राजा जरासंध के प्रभाव में था, उसका नाम अभी भी स्थानीय किंवदंती में रहता है और यह ज्ञात है कि उसकी राजधानी राजगीर (राजगृह) में थी, जहाँ उसके गढ़ के अवशेष अभी भी बड़ी पल्यर की दीवारों में देखे जा सकते हैं।[14]

बुकानन को खोजकत्ता और सर्वेक्षक के रूप में जाना जाता था, लेकिन जब हमने उनकी गया यात्रा को समझने की कोशिश की तो हमने पाया कि वे एक ऐसे व्यक्ति थे जिनकी पवित्र ग्रंथी में प्रचलित पौराणिक कहानियों के साथ-साथ लोगों की मान्यताओं में गहरी रुचि थी। उन्होंने जरासंध के बारे में बताया कि भारत के कई पुराने राजाओं की तरह जरासंध' को भी असुर कहा जाता था, जिसका अर्थ आमतौर पर भगवान का दुश्मन माना जाता था। किंवदंती के अनुसार, एक राक्षसी आकार का व्यक्ति इस जिले की दो पहाड़ियों पर खड़ा था, प्रत्येक पर एक पैर रखकर और अपने रिश्तेदार कृष्ण की 1000 पत्नियों को देखने के लिए जो गुजरात के पास रहते थे, जब वे समुद्र में स्नान कर रही थी। इस अभद्रता से संतुष्ट न होकर, जिसे शायद अनदेखा किया जा सकता था, उसने नग्न सुंदरियों पर ईंटों से हमला किया, जिसकी शिकायत उन्होंने कृष्ण से की। फिर उसने पांडु के काल्पनिक पुत्र भीम को जरासंध को दंडित करने के लिए भेजा और इस राजकुमार को उसके अपने घर के पास एक घाटी में मार दिया गया। यह दुनिया के तीसरे युग (द्वापर युग) के अंत में हुआ और श्री बेटले (एशियाटिक रिसर्च, खंड 4) द्वारा दी गई भारतीय कालक्रम की मूल्यवान प्रणाली के अनुसार, चौथा युग ईसा के जन्म से पहले 11वीं शताब्दी (1004) में शुरू हुआ। एक छोटे से विवाद के बाद भारत की राजशाही भीम के भाई युधिष्ठिर को हस्तांतरित कर दिया गया लेकिन यदि मेजर विल्फोर्ड यह मानने में सही है कि गंगा के प्रांत 700 वर्षों तक बृहद्रयों या जरासंध के वंशजों द्वारा शासित रहे, तो महान राजा की शक्ति बहुत सीमित रही होगी।[15]

कहा जाता है कि जरासंध के बाद 28 राजाओं के एक राजवंश ने मगध पर शासन किया, उनके नामों के अलावा उनके बारे में कुछ भी ज्ञात नहीं है। उनके बारे में पहली ऐतिहासिक घटना शिशुनाग (लगभग 600 ईसा पूर्व) के तहत शिशुनाग राजवंश का उदय हुआ था। बिम्बिसार, अंग के विलय के द्वारा मगध की सीमाओं का विस्तार करने वाला पहला राजा था, जो वर्तमान भागलपुर और मुंगेर क्षेत्र के अनुरूप एक छोटा राज्य अंग था और इस क्षेत्र में उसने जरासंध के प्राचीन किले से सुसज्जित पहाड़ी के आधार पर राजगृह (पुराना राजगीर) का निर्माण करके अपने शासन का संकेत दिया। गौतम बुद्ध सत्य की खोज में कम उम्र में ही इस जिले में आए थे और राजगीर वह पहला स्थान या जहाँ वह अपने पिता के क्षेत्र को छोड़ने के बाद बसे लेकिन यहाँ उन्हें ज्ञान नहीं मिला। फिर वे बोधगया की ओर चले गए। बुद्धत्व या सर्वोच्च ज्ञान प्राप्ति के बाद वे फिर से राजगीर में बिम्बिसार के दरबार में लौट आए और फिर बनारस चले गए। फिर वे राजगीर चले गए और यह बुद्ध के लिए एक पसंदीदा जगह बन गई। उनके दो प्रमुख विश्वास स्थल बांस का जंगल और गिद्ध शिखर नामक पहाड़ी थे। कई वर्षों तक उन्होंने यहाँ उपदेश दिया और शिक्षा दी। राजा (बिम्बिसार) स्वयं उनके शिष्य बन गए और जल्द ही उन्होंने एक बड़ा अनुयायी समूह बनाने में सफलता प्राप्त की और उनकी मृत्यु के बाद बौद्ध आईचारा प्रसिद्ध सत्तपन्नी गुफा में इकट्ठा हुआ और पहली बौद्ध परिषद (लगभग 487 ईसा पूर्व) आयोजित की।[16]

बुद्ध के महान समकालीन, जैन धर्म के संस्थापक, वर्धमान महावीर, उसी समय और देश के उसी क्षेत्र में उनके मालय में शामिल थे। पार्श्वनाथ के शासन से असंतुष्ट, जो उनकी कठोरता के आदर्श के अनुरूप नहीं था-इसका एक प्रमुख बिंदु पूर्ण नम्रता था उन्होंने वैशाली (बसरह) में मठ छोड़ दिया और 42 वर्षों तक उत्तर और दक्षिण बिहार में भटकते हुए जीवन बिताया, और अंततः लगभग 490 ईसा पूर्व तक एक बड़ी अनुयायी संख्या जुटाने में सफल रहे। बिहार उपखंड के एक गांव पावापुरी में उनकी मृत्यु हो गई। उनकी मृत्यु के बाद उनके जनसंघ के भिक्षुओं, जिन्हें नियन्य के रूप में जाना जाता था, ने सभी सामाजिक संबंधें को त्याग दिया और अंततः पूरे भारत में फैल गए, और जैन के रूप में जाने गए और महावीर को गौतम बुद्ध के बराबर माना। बिम्बिसार के बाद (लगभग 490 ई.पू.) उसके पुत्र और हत्यारे अजातशत्रु ने राजगीर में नई राजधानी बनाई।[17] इसके लगभग आधी शताब्दी बाद अजातशत्रु के पौत्र उदय (434 ई.पू.) ने कुसुमपुर, पुष्पपुर और पाटलिपुत्र नगर की नींव रखी और यह मगध और अंततः पूरे भारत की शाही शक्ति का केंदग बन गया।[18] चंद्रगुप्त मौर्य के बाद उसके पुत्र बिंदुसार (लगभग 302 ई.पू.) ने शासन किया, जिसके शासनकाल के बारे में कुछ भी महत्वपूर्ण ज्ञात नहीं है और उसके बाद उसके पुत्र अशोक महान (लगभग 273 ई.पू.) ने शासन किया, जिसका जीवन कलिंग युद्ध के बाद बदल गया।

शाही गतिविधियों का उद्देश्य विभिन्न समूहों के बीच मैत्रीपूर्ण, सामाजिक और धार्मिक संबंध विकसित करना था। पूरा मौर्य प्रशासन न केवल मौर्य साम्राज्य बल्कि धर्म, धार्मिक अस्तित्व और खुशी की सच्ची भावना का प्रचार करने में जुट गया। लेकिन सीरिया, अल्बानिया, मिस्र, मैसेडोनिया, सीलोन और बर्मा जैसे देशों में भी अशोक के धार्मिक और सांस्कृतिक मिशनरियों ने अपनी सेवाएं दी। इसके बाद उन्होंने वहाँ की संस्थाओं के जरिए जरूरतमंद लोगों की मदद करना शुरू किया। उनके बेटे महेंद्रग ने दुनिया के अलग-अलग

हिस्सों में अंतरराष्ट्रीय शांति और सहयोग के पहले शाही पुजारी को भेजा। गया कलिंग की विजय के झटकों से उबरकर अशोक बौद्ध बन गए और उन्होंने बोधगया में एक मंदिर और मठ का निर्माण किया, जिस पवित्र वृक्ष के नीचे बुद्ध को ज्ञान प्राप्त हुआ था, उसकी गहन आराधन करते हुए बौद्ध धर्म का प्रसार हुआ और यह उनके शासनकाल की सबसे उल्लेखनीय घटना बन गई।[19]

बुकानन ने यह भी देखा कि 'मगध के राजा अशोक' लगभग 5,000 साल पहले गया में रहते थे।[20] डी.सी सरकार ने उल्लेख किया कि 'गुप्त युग के दौरान गया एक प्रसिद्ध तीर्थ स्थान था।' यह चीनी तीर्थयात्री फाहियान ने वृत्तांती से स्पष्ट है, जिन्होंने 5वीं शताब्दी की शुरुआत में इस स्थान का दौरा किया था, जब यह इलाका काफी हद तक परित्यक्त दिखाई देता था। मिरकार ने यह भी तर्क दिया कि ह्वेन-त्सांग, जो लगभग 637 ई. में गया आए थे, ने उल्लेख किया था कि शहर मजबूत स्थिति में था, लेकिन उससे कम निवासी थे।[21] वी.ए. स्मिथ ने गया के बारे में ह्वेन-त्सांग क विचारों के दूसरे पहलू का तर्क दिया कि ''उनके आगमन से कुछ समय पहले मगध के पूर्णवर्मन राजा और अशोक के अंतिम वंशज ने गया में बोधिवृक्ष को पवित्र रूप से पुर्नस्थापित किया था, जिसे बंगाल के राजा शशांक ने नष्ट कर दिया था।[22]

हम बुकानन के विवरण को अपनी जानकारी का आधार मान रहे हैं। लेकिन रिर्पोटों को पढ़ते समय हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि वह ब्रिटिश ईस्ट इंडिया कंपनी का एक कर्मचारी था। उसकी यात्राएँ केवल भूदृश्यों के प्यार और अज्ञात की खोज से ही प्रेरित नहीं थी। वह नक्शा नवीसों, सर्वेक्षकों, पालकी उठाने वालों कुलियों आदि के बड़े दल के साथ सर्वत्र यात्रा करता था। उसकी यात्राओं का खर्च ईस्ट इंडिया कंपनी उठाती थी क्योंकि उसे उन सूचनाओं की आवश्यकता थी जो बुकानन प्रत्याशित रूप से इकट्ठी करता था। बुकानन को यह साफ-साफ हिदायत दी जाती थी कि उसे क्या देखना; खोजना और लिखना है। वह जब भी अपने लोगों की फौज के साथ किसी गाँव में आता तो उसे तत्काल सरकार के एक एजेंट के रूप में ही देखा जाता था। जब कंपनी ने अपनी शक्ति को सुदृढ़ बना लिया और अपने व्यवसाय का विकास कर लिया तो वह उन प्राकृतिक साधनों की खोज में जुट गई जिन पर कब्जा करके उनका मनचाहा उपयोग कर सकती थी। उसने परिदृश्यों तथा राजस्व स्रोतों का सर्वेक्षण किया, खोज यात्राएँ आयोजित कीं, और जानकारी इकट्ठी करने के लिए अपने धनी बुकानन ऐसा ही एक व्यक्ति था। बुकानन जहाँ कहीं भी गया, वहाँ उसने पत्थरों तथा चट्टानों और वहाँ की भूमि के भिन्न-भिन्न स्तरों तथा परतों को ध्यानपूर्वक देखा। उसने वाणिज्यिक दृष्टि से मूल्यवान पत्थरों तथा खनिजों को खोजने की कोशिश की; उसने लौह खनिज और अबरक, ग्रेनाइट तथा साल्टपीटर से संबंधित सभी स्थानों का पता लगाया। उसने सावधानीपूर्वक नमक बनाने और कच्चा लोहा निकालने की स्थानीय पद्धतियों का निरीक्षण किया।

जब बुकानन किसी भू दृश्य के बारे में लिखता था तो वह अक्सर इतना ही नहीं लिखता था कि उसने क्या देखा है और भूदृश्य कैसा था, बल्कि वह यह भी लिखता था कि उसमें फेरबदल करके उसे अधिक उत्पादक कैसे बनाया जा सकता है- वहाँ कौन-सी फसलें बोई जा सकती हैं, कौन-से पेड़ काटे जा सकते हैं

और कौन-से उगाए जा सकते हैं और हमें यह भी याद रखना होगा कि उसकी सूक्ष्म दृष्टि और प्राथमिकताएँ स्थानीय निवासियों से भिन्न होती थीं: क्या आवश्यक है इस बारे में उसका आंकलन कंपनी के वाणिज्यिक के लिए सरोकारों से और प्रगति के संबंध में आधुनिक पाश्चात्य विचारधारा से निर्धारित होता था। वह अनिवार्य रूप से वनवासियों की जीवन-शैली का आलोचक था और यह महसूस करता था कि वनों को कृषि भूमि में बदलना ही होगा।

बुकानन ने संथालों के बारे में कहा कि नयी जमीनें साफ करने में वे बहुत होशियार होते हैं लेकिन नीचता से रहते हैं। उनकी झोपड़ियों में कोई बाड़ नहीं होती और दीवारें सीधी खड़ी की गई छोटी-छोटी सटी लकड़ियों की बनी होती है जिन पर भीतर की ओर लेप (पलस्तर) लगा होता है। झोपड़ियाँ छोटी और मैली-कुचैली होती हैं; उनकी छत सपात होती हैं, उनमें उभार बहुत कम होता है।[23] गया के अपने सर्वेक्षण में बुकानन ने घरों, व्यवसाय, परिवार के आकार के बारे में आँकड़े एकत्र किए। यहाँ तक कि विभिन्न वर्गों के मजदूरों के जीवन स्तर का अनुमान लगाने का प्रयास किया और स्थानीय लोगों की मदद से उन्होंने इस स्थान के ऐतिहासिक अतीत और पर्यावरण से संबंधित जानकारी और बहुत कुछ सीखा। गया के विस्तार के बारे में उन्होंने निष्कर्ष निकाला कि इसका क्षेत्रफल 988 वर्ग मील था। बुकानन ने स्पष्ट किया कि चट्टानों से, जिनसे यह घिरा हुआ है और फल्गु की सूखी रेत से सूर्य की किरणों का परावर्तन गया को असामान्य रूप से गर्म बनाता है और वसंत में यह लगातार धूल के बादलों से घिरा रहता है। स्कॉटिश चिकित्सक बुकानन हैमिल्टन को भारत में रहते हुए भूगोलवेत्ता, प्राणी विज्ञान, वनस्पतिशास्त्री और इतिहासकार के रूप में महत्वपूर्ण योगदान देने के लिए जाना जाता है। ईस्ट इंडिया कंपनी भारत और भारतीय लोगों के बारे में जानने के लिए इच्छुक थी, इसलिए उन्होंने बुकानन को भारत और इसके मूल्यों, इसके लोगों, उनके समाज, कृषि, धर्म, खनिजों, खानों और कई अन्य चीजों के बारे में जानकारी देने के लिए सर्वेक्षक और मुखबिर के रूप में नियुक्त किया। गया की पहाड़ियों में विभिन्न अनुपातों में आग्नेय चट्टानें, दानेदार जैस्पर, हॉर्नब्लेंड और अभ्रक के साथ खनिज मौजूद थे। उन्होंने अभ्रक (अबरक) की चालू खदानों के बारे में भी बताया जो उनकी यात्रा के समय चालू थी। हालाँकि बुकानन पेशे से सर्जन थे, लेकिन उन्हें दूसरी चीजों को जानने में गहरी दिलचस्पी थी। इसलिए जब उन्होंने पहाड़ी का जिक्र किया, उसकी विशेषताओं को समझाया, तो उसका जिक्र एक सर्वेक्षण में किया गया है। उन्होंने उस समय मौजूद पहाड़ियों के साथ-साथ उससे जुड़ी कुछ लोक कथाओं जैसे रामसिला, प्रेत्सिला, ब्रह्मयोनी, केयोडोल और केनी पहाड़ी आदि का भी पता लगाया। उन्होंने मिट्टी को अलग-अलग नामों से भी वर्गीकृत किया जैसे कि केवल मिट्टी, रायपुर या पीली मिट्टी, कठोर मिट्टी और पीली मिट्टी और इसके उपयोग के साथ। उन्होंने गया में पाए जाने वाले पत्थरों और खनिजों का वर्णन किया था, जैसे, गुरपा पहाड़ी से दुर्वासरिख तक और रजौली के पास श्रृंगगिरिख पहाड़ी पर शुद्ध ग्रेनाइट पाया जाता था और लेघुयार (टेक) पहाड़ी के नीचे से लेकर टेक के ऊपर तक पूर्व में भूरा और कांच जैसा क्वाटर्ज उपलब्ध था। उन्होंने सलाई या सलहर वृक्ष के बारे में सराहनीय पूछताछ की थी, विस्तृत चर्चा और अन्वेषण के बाद उसे अध्याय में शामिल किया गया है। उन्हें उत्कृष्ट व्यक्ति के रूप में साबित करता है।

बुकानन को अंग्रेजी ईस्ट इंडिय कंपनी के अधिकारी के रूप में नियुक्त किया गया था, लेकिन जाने-अनजाने उन्होंने बॉटनिकल गार्डन और अलीपुर चिड़ियाघर के माध्यम से वनस्पतियों जीवों के संरक्षण में भारतीय इतिहास के लिए बहुत बड़ा योगदान दिया है। उन्होंने गया से सटे महत्वपूर्ण नदियों का भी उल्लेख किया था। यद्यपि बरसात के मौसम में पर्याप्त पानी था, लेकिन वे जल्द ही सूख कर छोटी नदियाँ बन जाती। सोन, पुनपुन, गंगा और फल्गु उन सभी में मुख्य थीं जहाँ सोन के बारे में माना जाता था कि उसमें फेंके गए पदार्थों को शुद्ध करने की शक्ति थी और इसमें कई सालिग्राम पत्थर थे और यह रेत से भरी थी। नदी न तो बहुत गहरी थी और न ही बहुत तेज, बल्कि यह मैली थी।[24] पुनपुन गया जिले के सुदूर दक्षिण में निकलती थी। इसके पानी का उपयोग कई गाँवों में सिंचाई के लिए किया जाता था। लेकिन बुकानन की यात्रा के समय यह सूखी थी। नदी में हमेशा कुछ धाराएँ होती थी और पानी का सबसे अधिक उपयोग आस-पास के गाँवों द्वारा सिंचाई के लिए किया जाता था। मेजर रैनेल के सर्वेक्षण के समय से इसे पूरी तरह से अपने चैनल से मोड़ दिय गया है। इसके अलावा बुकानन के समय में भी यही स्थिति थी, उन्होंने कहा, लेकिन अब तक का सबसे बड़ा हिस्सा पूर्व की ओर है इसका मतलब है कि उनकी यात्रा के समय यह काफी सूखी थी।'' बयान से यह भी स्पष्ट हो गया। उन्होंने फल्गु के विभिन्न नामों के बारे में भी चर्चा की, जिनसे इसे प्राचीन काल से जाना जाता है, जैसे मोहने और नीलांजन। फल्गु अपनी पवित्रता के लिए अविश्वसनीय थी और इसकी कई शाखाओं ने आधे से अधिक जिले को पार किया। यह गया से कुछ मील ऊपर दो विशाल धाराओं, मोहने और नीलांजन के मिलन से बनी थी। फल्गू एक चैड़ी नदी थी जिसमें कुछ छोटे द्वीप थे, इसकी नहरें सिंचाई के लिए काम करती थीं और इसका पानी साफ था। पश्चिमी शाखा को दो चैनलों में विभाजित किया गया था और इसे हिंदी में कनोकसोर और पाली में 'सोबरनसोर कहा जाता था। पूर्वी शाखाओं को हिंदी में 'नीलांजन' और पाली में 'निरिनचिया कहा जाता था। दोनों में दिसंबर में एक छोटी सी धारा थी। उन्होंने एक पौराणिक कथा का भी उल्लेख किया।[25]

**बुकानन लेखन का दोष**

उन्होंने ईस्ट इंडिया कंपनी द्वारा दिए गए निर्देशों को स्वीकार कर लिया कि वे किस क्षेत्र का अन्वेषण करें। स्थानीय नाम जो लोगों द्वारा पौधों के लिए उपयोग किए जाते थे और उन्होंने अपने सहायकों को इन बोले गए नामों को रिकॉर्ड करने और उन्हें अंग्रेजी में अनुवाद करने का निर्देश दिया। उन्होंने अपने चित्रों में इस्तेमाल किए गए वैज्ञानिक नामों के लिए अक्सर इन नामों का इस्तेमाल किया। उनमें से कुछ अभी भी उपयोग में हैं। हालाँकि उनका काम सावधानी से पूरा हुआ था लेकिन इसमें कुछ कमियाँ भी थीं। कंपनी कृषि, खानों और विनिर्माण उद्योगों के बारे में व्यावसायिक दृष्टिकोण से पूछताछ करने के लिए सर्वेक्षकों का उपयोग करके सर्वेक्षण करना चाहती थी। उनके काम में न केवल सकारात्मक बिंदु थे, जिससे भारत को कई तरह से फायदा हुआ, बल्कि उनके लेखन में कुछ कमियाँ भी थीं। कुछ की चर्चा मेरे शोध कार्य में की गई है। उन्होंने अनुष्ठानों और अंधविश्वासों, कला और वास्तुकला के बारे में बात की, लेकिन समाज के उत्थान या वास्तुकला (स्मारकों) को बहान करेन के बारे में कभी बात नहीं की जो उनके सर्वेक्षण के उपेक्षित बिंदु को दर्शाता है। उनकी यात्रा करने की अपनी नीति थी इसलिए वे बिना किसी कारण के नहीं जाते थे फिर जब फतेहपुर के पास

दुनिया के नवाब ने उन्हें मोजन कराया तो उन्होंने मना कर दिया। आवास की समस्या आने पर वे यात्रा के दौरान अपनी दिशा बदल लेते थे। उन्होंने कंपनी को भारत में परिवहन और संचार की समस्या के बारे में सोचने पर मजबूर किया। कभी-कभी वे उस व्यक्ति का नाम पहचानने में भ्रमित हो जाते थे जिससे उन्होंने अपनी यात्रा के दौरान अनुग्रह प्राप्त किया था। वे बस उसका उल्लेख पुजारी, अवा के दूत या किसी सम्मानित व्यक्ति आदि के रूप में करते हैं। हमारे पास दस्तावेज, रिपोर्ट और उनके लेखन हैं जहाँ सहायक का नाम उजागर नहीं किया गया है जिसके माध्यम से हम वास्तविकताओं को समझने का प्रयास कर सकते थे।

कभी-कभी हम उस व्यक्ति का नाम पहचानने में भ्रमित हो जाते हैं जिसने उनकी मदद की थी। प्रश्न यह है कि बुकानन हैमिल्टन ने अपने लेखन में सहायक का नाम कभी क्यों नहीं लिया? उन्होंने केवल धार्मिक और सामाजिक परिप्रेक्ष्य में स्थल की यात्रा की और उसका अवलोकन किया लेकिन इसके जीर्णोद्धार या पुरातात्विक मूल्यों, जैसे बोधगया मंदिर और विष्णुपद मंदिर की परवाह नहीं की। हमें उनके गया जर्नल में भी कुछ खामियां मिलती है। जब वे बराबर पहाड़ी के पूर्व की ओर सतगर पहाड़ी के पास थे, तो उन्होंने केवल चार गुफाओं का उल्लेख किया था, जैसे करण चौपड़, लोम्सरिसी गुफा, विश्वामित्र घर और सुदामा गुफा और अन्य के बारे में नहीं बताया था। यह सात होनी चाहिए क्योंकि इसका नाम सतगर या सात पहाड़ियों को दर्शाता है। ये सभी नाम बराबर पहाड़ी से ही संबंधित हैं। उन्होंने नागार्जुनी गुफाओं के समूह जैसे वदथिका गुफा और गोपी गुफा का उल्लेख नहीं किया। इसे उनके लेखन में एक दोष माना जा सकता है। अधिकांश समय उन्होंने अपनी पत्रिका में मोडन डोट्टो, ओरोहर आदि जैसे बंगाली शब्दों का इस्तेमाल किया, जो गैर-बंगाली पाठकों के लिए समस्या पैदा करता है।

**निष्कर्ष**

अध्ययन में दर्शाया गया है कि गया शहर के बड़े पैमाने पर शहरीकरण के बाद यह स्थान अभी भी अपनी ऐतिहासिक गरिमा को जारी रखे हुए है और अपनी विरासत और सामाजिक सांस्कृतिक पहलुओं को संतुष्ट कर रहा है। इतिहासकारों को इस ऐतिहासिक स्थान, मूर्तियों और इसकी सभी विरासत स्थापत्य संरचना की अखंडता को बनाए रखने की सिफारिश की जाती है जो आने वाली पीढ़ियों के लिए है। वर्तमान शोध अध्ययन उन भावी शोधार्थियों को प्रभाव रूप से मदद करेगा जो बुकानन के जीवन, उनके करियर और कार्य के बारे में अपने ज्ञान को बढ़ाने की योजना बनाते हैं। शोध कार्य का यह दुखड़ा उन विद्वानों के लिए भी एक वरदान हो सकता है जो ऐतिहासिक शहर गया- इसके भूगोल, समाज और संस्कृति, धर्म और अर्थव्यवस्था पर सहायक शोध करना चाहते हैं।

**संदर्भ :-**

1. हैमिल्टन, फ्रांसिस बुकानन. (1936). 1811-1812 में बिहार और पटना के जिलों का सर्वेक्षण. पटना: बिहार और उड़ीसा अनुसंधान सोसायटी.

2. हैमिल्टन, फ्रांसिस बुकानन. (1936). 1811-1812 में बिहार और पटना के जिलों का सर्वेक्षण. पटना: बिहार और उड़ीसा अनुसंधान सोसायटी.
3. हैमिल्टन, फ्रांसिस बुकानन. (1823). भारत के विभिन्न भागों के पौधों और उन क्षेत्रों के संस्कृति नाम के बारे में कुछ सूचनाएँ. एडिनबर्ग: [प्रकाशक का नाम उपलब्ध नहीं].
4. आर्बुथनॉट, जॉन अलेक्जेंडर. (1885-1900). डिक्शनरी ऑफ नेशनल बायोग्राफी (खंड 7). लंदन: स्मिथ, एल्डर एंड कंपनी.
5. हैमिल्टन, फ्रांसिस बुकानन. (1925). पत्रिका: 1811-1812 में पटना और गया जिलों के सर्वेक्षण के दौरान लिखित (संपा. वी.एस. जैक्सन). पटना: बिहार और उड़ीसा अनुसंधान सोसायटी. पृ. 41.
6. शर्मा, आचार्य राम. (प्रकाशन वर्ष उपलब्ध नहीं). मत्स्य पुराण (भाग 1, अध्याय 17). बरेली, उत्तर प्रदेश: संस्कृति संस्थान. पृ. 150-151.
7. बरूआ, बी. एम. (1934). गया और बोधगया: पवित्र भूमि का प्रारंभिक इतिहास. कलकत्ता: इंडिया रिसर्च इंस्टीच्यूट. पृ. 67.
8. हैमिल्टन, फ्रांसिस बुकानन. (1925). पत्रिका: 1811-1812 में पटना और गया जिलों के सर्वेक्षण के दौरान लिखित. पटना: बिहार और उड़ीसा अनुसंधान सोसायटी. पृ. 61.
9. बनर्जी, नरेश. (2000). गया और बोधगया की झलकियाँ: एक प्रोफाइल. नई दिल्ली: इंटर-इंडिया पब्लिकेशन. पृ. 20-21.
10. हैमिल्टन, फ्रांसिस बुकानन. (1925). पटना और गया जिलों का सर्वेक्षण (1811-1812) (पुस्तक 1). पटना: गवर्नमेंट प्रेस. पृ. 44.
11. वही. पृ. 46.
12. वही. पृ. 46.
13. वही. पृ. 47.
14. वही. पृ. 40.
15. वही. पृ. 48.
16. वही. पृ. 60.
17. वही. पृ. 61.
18. वही. पृ. 50.
19. वही. पृ. 42.
20. बरूआ, बी. एम. (1934). गया और बोधगया: पवित्र भूमि का प्रारंभिक इतिहास. कलकत्ता: इंडिया रिसर्च इंस्टी. पृ. 1.
21. ओ'मैली, एल. एस. एस. (1906). बंगाल गजेटियर्स: गया. कलकत्ता: बंगाल सेक्रेटेरिएट प्रेस. पृ. 18.
22. हैमिल्टन, फ्रांसिस बुकानन. (1925). एक विवरण. पटना: बिहार और उड़ीसा अनुसंधान सोसायटी. पृ. 42.
23. हैमिल्टन, फ्रांसिस बुकानन. (1930). जनरल ऑफ फ्रांसिस बुकानन कप्ट ड्यूरिंग द सर्वे ऑफ द डिस्ट्रिक्ट ऑफ भागलपुर. पटना: गवर्नमेंट प्रेस. पृ. 9.
24. ओ'मैली, एल. एस. एस. (1906). वही. पृ. 18, 21.
25. वही. पृ. 48.

# हरनोट का कहानी-संग्रह 'कीलें' : सामाजिक एवं राजनीतिक मूल्यों के ह्रास का आख्यान

**संतोष कुमार***

**santoshkumar12525@gmail.com**

***शोध-सार :***

*हिन्दी साहित्य में एस.आर. हरनोट एक चर्चित नाम है। 2019 में उनका 'वाणी प्रकाशन' से नया कहानी-संग्रह 'कीलें' प्रकाशित हुआ है। इस संग्रह की सभी कहानियाँ मनुष्य के सामाजिक वजूद के लिए लड़ रही हैं। उन शक्तियों से टकरा रही हैं जो मानवीयमूल्यों और संवेदनाओं को दिनोंदिन धराशाई कर रहे हैं। इस संग्रह की कहानियों के मार्फत लेखक ने जो परिवेश निर्मित किया है वह अधिक तीव्र, सघन और प्रभावी है तथा जिससे गुजर कर पाठक आज के हालात और परिस्थितियों का गवाह बन जाता है। आज का दौर भयानक संकट का दौर है। सारे मूल्य पीछे छूटते जा रहे हैं। संवेदनहीनता समाज में पसरती जा रही है। यौन-भावनाएँ और कुंठाएँ लोगों में भरती जा रही है। पूँजी का वर्चस्व दिनोंदिन बढ़ता जा रहा है, जिससे सारे मानवीय-संबंध और रिश्ते गहरे स्तर पर प्रभावित हो रहे हैं। स्वार्थ सर्वोपरि हो गया है। अपना हित साधने के लिए लोग दूसरों की हत्या तक करने में नहीं झिझकते। यही नहीं, अपने स्वार्थ के लिए सत्ताएँ भी क्रूरतम व्यवहार करने से परहेज नहीं करतीं। आज सत्ता सबके लिए, समाज के हर तबके के लिए नहीं बल्कि धर्म विशेष और जाति विशेष को ध्यान में रखकर योजनाएँ और नीतियाँ तैयार करती है। उसका चरित्र दोहरापन लिए हुए होता है। एक तरफ तो वह सभी को साथ लेकर चलने का भरोसा और विश्वास दिलाती है वहीं दूसरी तरफ वह धर्म और जाति की राजनीति भी करती है। वह अल्पसंख्यकों, दलितों और वंचितों के खिलाफ हो रहे सामाजिक दुर्व्यवहार और शोषण को रोकने में कोई भूमिका निभाती नजर नहीं आती। इसके विपरीत, वह इनके खिलाफ हो रहे हिंसा और सांप्रदायिक दंगों का मौन समर्थन करती है। हरनोट अपने इस कहानी-संग्रह में इन्हीं सामाजिक एवं राजनीतिक मूल्यों के ह्रास को उद्घाटित करते दिखाई देते हैं।*

***बीज शब्द :***

*सामाजिक मूल्य, राजनीतिक मूल्य, सांप्रदायिकता, कट्टरता, आतंकवाद, मूल्य ह्रास, पर्यावरण विनाश, पूँजी, हरनोट, कीलें*

---

* **असिस्टेंट प्रोफेसर, गाँधी विद्यानिकेतन डिग्री कॉलेज, बुढ़पुर बागपत, उत्तर प्रदेश**

**मूल आलेख**

एस.आर. हरनोट मानवीय मूल्यों के प्रति प्रतिबद्ध कहानीकार हैं। वे उन तत्वों की पहचान और तलाश करने का प्रयास करते हैं जो मानव-समाज और सभ्यता के लिए खतरा बने हुए हैं। इन तत्वों की तलाश करते हुए कहानीकार इक्कीसवीं सदी की लगभग उन सभी बड़ी घटनाओं की पड़ताल कर आता है जिनसे मानव जाति को भारी क्षति उठानी पड़ी। इक्कीसवीं सदी अनेक महान संकटों को लेकर आई। एक ओर जहाँ वैश्वीकरण के तीव्र प्रसार ने मानवीय संबंधों के ताने-बाने को पूरी तरह बदल कर रख दिया, वहीं दूसरी ओर आतंकवाद नामक घातक बीमारी ने पूरी दुनिया में अपने पाँव जमाने शुरू कर दिए। इसकी शुरूआत अमेरिका में वर्ल्ड ट्रेड सेंटर गिराने तथा भारत में संसद पर हमले से हुई। इसके बाद मुम्बई का 26-11, पाकिस्तान के पेशावर में आतंकवादियों द्वारा 132 स्कूली बच्चों की हत्या आदि दूसरे बड़े आतंकी हमले रहे। इन हमलों को तथा उससे पैदा हुए व्यापक मानव-विनाश को कहानीकार ने इस संग्रह के विमर्श में शामिल कर लिया है। इसके साथ-साथ पिछले कुछ सालों में देश में बिगड़ते हालात, अल्पसंख्यकों और दलितों के खिलाफ हो रहे अत्याचार के पीछे की साजिश का भी पर्दाफाश किया गया है। प्रो. कलबुर्गी, दाभोलकर पंसारे और गौरी लंकेस जैसे बुद्धिजीवियों की हत्या के कारणों की जाँच करते हुए हरनोट ने सत्ता के चेहरे पर से भी नकाब हटाया है।

कहानी-संग्रह 'कीलें' उस व्यवस्था की ओर इंगित करता है जहाँ मानवीय मूल्यों और संवेदनाओं को नफरत, घृणा, कटुता, धार्मिक कट्टरता, वैमनस्य, स्वार्थलोलुपता और संवेदनहीनता ने तार-तार कर दिया है। हम आज जिस वातावरण में साँस ले रहे हैं वहाँ परस्पर द्वेष, घृणा, नफरत और ईर्ष्या की बू अधिक आती है। हर आदमी अपने स्वार्थ को साधने में लगा हुआ है। निजी हित और सुख के लिए यदि उसे दूसरों की हत्या तक करनी पड़ जाए तो वह ऐसा करने से भी नहीं हिचकता। पैसे का मोह लोगों में इस कदर है कि इसके लिए वे गलत से गलत और नीच से नीच समझे जाने वाले कार्य को करने के लिए भी तैयार रहते हैं। नफरत और स्वार्थ की भावना ने आज खून के रिश्तों को भी बेमानी साबित कर दिया है। भाई भाई का दुश्मन है, पिता पुत्र की आँखों की किरकिरी बना हुआ है। आत्मीयता और आपसी स्नेह की गर्माहट अब रिश्तों में बहुत कम बची है। समाज में फैल रही इस प्रवृत्ति को हरनोट ने इस संग्रह की प्रतिनिधि कहानी 'कीलें' (जिसके नाम पर इस संग्रह का नाम रखा गया है) में पूरी मार्मिकता से उद्घाटित किया है। यह कहानी पहाड़ी समाज में प्रचलित एक सामाजिक रूढ़ी को आधार बनाकर लिखी गई है। इस रूढ़ी के अनुसार गांव के लोग अपने विरोधी अथवा दुश्मन अथवा जिसके अहित की वे कामना करते हैं, का बुरा करने के लिए पहाड़ की ऊंची चोटी पर स्थित नंगा देवता की मूर्ति के पास जाते हैं। वे उस देवता से प्रार्थना करते हैं कि वह जाए और उनके दुश्मन का सर्वनाश कर दे। उसके साथ वही बर्ताव करते हैं जैसा वे अपने शत्रु के साथ करना चाहते हैं। वे उसकी छाती में कीलें गाड़ते हैं, अपने दुश्मन का नाम लेते हुए गालियाँ देते हैं तथा जूतों से मूर्ति पर प्रहार करते हैं। इस क्रिया को कहानी का प्रमुख पात्र कलमदत्त उर्फ कलमू कई बार देख चुका है। वह बालक है। वह नहीं जानता कि देवता क्या सच में लोगों के कहने पर ऐसा करता होगा ? पर उसके मन में अनेक भाव उठते हैं। वह सोचता है कि लोगों में कितना नफरत और वैर-भाव भर गया है। वे एक-दूसरे की छाती में नफरत की कीलें गाड़ रहे हैं।

वह देखता है कि आज खून के रिश्ते भी बेमानी हो गए हैं। सभी स्वार्थवश एक-दूसरे के सर्वनाश की कामना कर रहे हैं। वह सोचता है -

> "भाई की छाती में कील ठोंक रहा है। दोस्त, दोस्त की छाती में। पति पत्नी, और पत्नी पति की छाती में। पड़ोसी, पड़ोसी की। बेटा पिता को नहीं बख्श रहा है। सास के पास बहू के लिए कीलें हैं और बहू के पास सास के लिए। बहन के पास भाई के लिए और भाई, बहन के लिए लेकर चला है। यानी कोई भी रिश्ता बिना कील के नहीं रह गया है।"[1]

कलमू जब टीवी पर देश-दुनिया की खबरें देखता और सुनता है तो उसे लगता है कि नफरत की यह आंधी केवल उसके गांव में नहीं बह रही है, यह तो पूरी दुनिया में बह रही है। देश हो या विदेश सभी जगह लोग खून के प्यासे भरे पड़े हैं। वह जब टीवी पर पाकिस्तान के पेशावर में आतंकवादियों द्वारा 132 मासूम स्कूली बच्चों की निर्मम हत्या की खबर देखता है तो स्तब्ध रह जाता है। वह काफी परेशान और विचलित हो उठता है। उसे लगता है कि उसके स्कूली बस्ते में किताबें नहीं, उन मासूम बच्चों की लाशें हैं। यह खबर उसके बालमन पर काफी गहरा प्रभाव डालती है और वह उसी नंगा देवता के पास जाता है जिसके पास लोग अपने दुश्मनों के सर्वनाश की इच्छा से जाते हैं। वह उस देवता की छाती में कीलें गाड़ते हुए उससे प्रार्थना करता है –

"जा ... आज तुझे दूसरे देश जाना है। उनका सर्वनाश करना है जिन्होंने उन मासूम बच्चों को मारा है। वे बचने नहीं चाहिए। उन्हें ऐसी सज़ा मिले जिसकी उन्होंने कभी कल्पना तक नहीं की है। जा .... चला जा ...। देख मैं उनके नाम नहीं जानता। गोत्र नहीं जानता। उनके बाप के नाम भी मालूम नहीं है मुझे। पर इतना जानता हूँ कि उनका कोई धर्म नहीं है। वे किसी मज़हब के नहीं हो सकते। वे आदमी भी नहीं हैं। किसी भयंकर और विषैली जाति के खूँखार भेड़िए हैं ... तू छोड़ना नहीं उनको ...।"[2]

इस तरह इस कहानी में हरनोट एक सामाजिक रूढ़ी एवं अंधविश्वास को व्यापक परिदृश्य से जोड़ देते हैं।

इस संग्रह की पहली कहानी 'भागादेवी का चायघर' में हरनोट ने मनुष्य की अतिशय स्वार्थप्रियता और लालच को कहानी का विषय बनाया है। बाजार के चरित्र को भी यह कहानी उजागर करती है। वैश्वीकरण ने बाजार को जन्म दिया। बाजार ने मनुष्य की चेतना पर जो असर डालना शुरू किया उससे वह संवेदनशून्य होता गया। पूँजी और भौतिक साजोसामान जुटाना ही उसका एकमात्र लक्ष्य रह गया है। वह मशीन के इस युग में महज एक यंत्र बनकर रह गया है। उसके लिए मानवीय मूल्यों और नैतिकताओं का कोई महत्व नहीं रह गया है। बाजार के चकाचौंध में वह इतना खो गया है कि उसे हर चीज बिकाऊ लगती है। उसे यकीन है कि पैसे से वह संसार की हर वस्तु खरीद सकता है। इस कहानी की प्रधान पात्र भागा बाजार के चरित्र से वाकिफ नहीं है। वह नहीं जानती की उसकी चाय की दुकान पर आने वाला हर व्यक्ति खरीददार है। वह यह भी नहीं जानती कि वह चाय के साथ-साथ न जाने कितना कुछ बेचे जा रही है। कहानीकार के शब्दों में –

"भागा इस बात से बेख़बर है कि चाय के गिलास के साथ वह बार-बार बिक रही है। बेची-खरीदी जा रही है। उसके मोलभाव हो रहे हैं। बोलियाँ लग रही है। गुपचुप होती इस खरीद-फरोक्त में बाजार का हर आदमी

शामिल है। नेता, राजनेता, सरकारी-अर्द्धसरकारी और कॉर्पोरेट चेहरे शामिल हैं। युवा और अधेड़ हैं। वरिष्ठ और अतिवरिष्ठ हैं, गँवई और शहरी हैं, इतिहासकार और समाजशास्त्री हैं, यात्री और सैलानी हैं, कवि, लेखक और पत्रकार हैं, फिल्मकार और नाटकबाज हैं, कार्टूनिस्ट और चित्रकार हैं। इन लोगों और सैलानियों से कहीं ज्यादा खतरनाक देश-विदेश की कंपनियों के कर्मचारियों और अधिकारियों का यहाँ आकर चाय पीना है।"[3]

भागा को ये लोग सहज नहीं दिखाई देते। उनके मन में अनेक ऊहापोह और उथल-पुथल चल रहे होते हैं। वे षड्यंत्र रच रहे होते हैं, योजनाएँ बना रहे होते हैं। कभी कुछ बेचने की तो कभी कुछ खरीदने की। उसे लगता है कि –

"सभी के भीतर एक जंगल उग आया है। उसमें अनगिनत गुफाएँ मौजूद हैं। उनके दरवाजों पर खूँखार बाघ, चीते और तेंदुए अपने-अपने शिकारों पर झपटने के लिए आतुर बैठे हैं।"[4]

यह उद्धरण आज के मनुष्य के चरित्र की सटीक व्याख्या करता है। आज का आदमी कहीं-न-कहीं अपनी सहजता, सादगी और सरलता को बाजार में बेच चुका है। वह यह भूल चुका है कि वह एक जीता-जागता इंसान है, कोई मशीन नहीं।

यह कहानी आगे विस्तार लेती हुई पर्यावरण विनाश के विमर्श से जुड़ जाती है। व्यापक पर्यावरण विनाश के पीछे मनुष्य की स्वार्थलिप्सा ही प्रमुख कारण रही है। मनुष्य ने अपने स्वार्थ के लिए किसी को नहीं बक्शा है। उसने प्रकृति और पर्यावरण का जी भर कर विनाश किया। उसने वनों, जंगलों और पहाड़ों को काटने के लिए बड़े-बड़े हथियार और औजार बनाए, जो जीते-जागते पहाड़ों, हरे-भरे वनों को रौंदते तथा उन्हें धूल में मिलाते जा रहे हैं। हरनोट इस कहानी में इनका इस प्रकार वर्णन करते हैं -

"लंबी-लंबी गर्दनों वाले डायनासोरों की माफिक आधुनिक मशीनें, बुल्डोजर और पैने दाँतों वाले आरे हैं जो पल भर में जंगलों, पेड़ों, खेतों और घासणियों को निगलते और उनकी छातियों को चीरते हुए आगे बढ़ रहे हैं। वे जहाँ भी अपना मुँह मारते हैं जमीन ऐसे उधड़ती है मानो बाघों ने किसी गाय या भैंस के शरीर चीर दिए हों। बीच-बीच में जब डायनामाइटों के धमाके होते हैं तो पहाड़ दहाड़ते-चीखते हुए बिखर जाते हैं। उनके तीव्र धमाकों से जंगल, जानवर और गाँव सहम जाते हैं।"[5]

हरनोट की कहानियों में प्रकृति बार-बार आती है। प्रकृति और पहाड़ का गहरा रिश्ता है और हरनोट की कहानियों में इसे बखूबी देख जा सकता है। इस संबंध में नामवर सिंह लिखते हैं –

"एस.आर. हरनोट हिमाचल के ऐसे कथाकार हैं, जिन्होंने वहाँ की प्रकृति और पर्यावरण के साथ - साथ जीवन और संस्कृति को भी अपनी कहानियों में जगह दी है। पहाड़ का वातावरण जितना मनोहारी होता है, जीवन उतना ही कठिन| सैलानी की नजर से देखने पर वहाँ के जीवन संघर्ष को नहीं समझा जा सकता है। हरनोट ने संस्कृति व परंपराओं के बीच उस जीवन संघर्ष को पकड़ने की कोशिश की है और उसके माध्यम से आने वाले सामाजिक बदलावों की ओर भी संकेत किया है।"[6]

'फूलों वाली लड़की' सादगी और सौम्यता से भरी हुई एक बेहद मर्मस्पर्शी कहानी है। यह सभ्य समझे जाने वाले समाज के हकीकत की अनेक परतों को उद्घाटित करती है। विकलांगों, भिखारियों और वंचितों के प्रति समाज की संवेदनहीनता को उजागर करती है। हरनोट की यह कहानी इस बात का प्रमाण है कि सफेदपोश लोगों की तुलना में समाज के उपेक्षित तबकों में अभी काफी संवेदना बची हुई है। जब स्त्री सम्मान अपंगों और भिखारियों के यहाँ सुरक्षित पनाह पाता है और वहीं वह तथाकथित सभ्य एवं पढ़े-लिखे लोगों द्वारा बार-बार कुचला जाता है तो यह बात अधिक स्पष्ट हो जाती है। सभ्य समाज के लिए फूल बेचने वाली लड़की महज एक भिखारी की आवारा बेटी है। उसका न कोई निजी जीवन है और न ही अपना कोई सम्मान। वह समाज में अवशिष्ट समझे जाने वाले लोगों की बेटी है, अतः उसे समाज में एक अवशिष्ट के रूप में ही देखा जाता है। वह फूल बेचती है पर उसके फूलों को न तो मंदिर का पुजारी ही लेता है और न बड़ी-बड़ी गाड़ियों में घूमने वाले अमीर लोग। पर यह कितनी बड़ी विडंबना है कि उसकी देह को सभी देखना और पाना चाहते हैं। ऐसे लोगों में नेता, समाज-सुधारक, वर्दीधारी के साथ-साथ स्त्री अस्मिता और अधिकारों के नाम पर चलाए जा रहे गैरसरकारी संगठनों के पदाधिकारी और कर्ता-धर्ता शामिल हैं। कहानी में एक ऐसे ही नेता का जिक्र है जो बच्चों, महिलाओं और दलितों के उत्थान के लिए कार्य कर रही संस्थाओं से जुड़ा हुआ है। जिस कारण उसका पूरे शहर में काफी नाम है। वह फूल बेचने वाली लड़की को अपने घर फूल पहुँचाने के बहाने बुलाता है और उसके साथ बलात्कार करने की कोशिश करता है। वह उसके चंगुल से किसी तरह निकल जाती है और अपने घर भाग जाती है। भिखारियों को जब सारी घटना की जानकारी होती है तो वे सभी गुस्से में आ जाते हैं और अपनी बेटी के लिए उस नेता को सबक सिखाने को तैयार हो जाते हैं। फिर पूरे शहर में एक जुलूस निकलता है, भिखारियों और अपंगों का जुलूस। जो उपेक्षित हैं, गरीब और दरिद्र हैं पर एक बेटी की इज्जत और सम्मान के प्रति सचेत हैं। कहानी का अंतिम अंश दृष्टव्य है –

"यह एक ऐसा जुलूस था जिसमें अपंग थे, कोढ़ी थे, कुबड़े थे, अंधे थे और बच्चे-बच्चियाँ थे। कोई रेंग कर चल रहा था, कोई बैसाखियों के सहारे था। हाथों में कटोरे और छोटी बाल्टियाँ थीं। उनके पास कोई झंडे नहीं थे, पोस्टर नहीं थे, न ही कोई नारे थे।बस मन और आँखों में एक बेटी के लिए अपार स्नेह और आदर था, जिसने उनके भीतर उस कमीने नेता को सबक सिखाने का जजबा भर दिया था।"[7]

इस कहानी की गणना हरनोट की श्रेष्ठ कहानियों में बेहिचक की जा सकती है। यह विकलांगों और वंचितों के संघर्ष और समाज में उनकी स्थिति को बयान करने के साथ-साथ सभ्य समझे जाने वाले लोगों के असली चेहरे को सामने लाती है।

'लोहे का बैल' कहानी दो पीढ़ियों के बीच के द्वंद्व और अंतर्संघर्ष को व्यक्त करता है। एक तरफ पिता (शोभा) है, जो प्राचीनता का प्रतीक है, तो दूसरी तरफ उसका बेटा है जो खुद को आधुनिक मानने में गर्व महसूस करता है। शोभा गाँव में रहता है और खेती का काम करता है। प्रेमचंद के नायक होरी वाले सारे गुण हैं उसमें। यानी खेती में ही 'मरजाद' देखता है। बेटे के बार-बार दबाव डालने पर भी वह पुरखों की निशानी बेचने

को तैयार नहीं होता। उसकी जिंदगी खेतों जंगलों और गाय-भैंस आदि जानवरों तक ही सीमित है। इसके विपरीत उसका बेटा किसी मल्टीनैश्नल कंपनी में बड़ा अफसर है। उसकी बड़ी-बड़ी महत्वाकाँक्षाएँ हैं। उसने लोन पर एल.ई.डी. टी.वी., फ्रीज, कार आदि ले रखे हैं। वह चाहता है कि पिता अपनी साठ बीघा जमीन में-से आधी जमीन बेच दें ताकि उसके खर्चे निकल जाएँ, पर उसके पिता इसके लिए तैयार नहीं होते। चूँकि वह एक बड़ी कंपनी का अफसर है इसलिए उसका लिहाज भी होना चाहिए। वह घर आता तो अपने पिता को कई हिदायतें दे जाता। जैसे : वह अपने को उसका बापू या पिता न बोला करें, डैड बोला करें और उसे सुरमऐया जैसे खूसट नाम से न पुकारा करें उसका पूरा नाम सुरमचंद कोहली अथवा शॉर्ट में एस.सी. कोहली बोला करें। बेचारे सीधे-सादे देहाती पिता को ये सीखें कहाँ याद रहतीं। उन्हें बार-बार बेटे से इसके लिए डाँट सुननी पड़ती।

खेत, जंगल और जानवर ही शोभा की दुनिया है। उसका एक बैल क्या मर जाता है उसकी दुनिया ही उजड़ जाती है। वह अपना दुखड़ा कहना चाहता है पर किसे सुनाए। यहाँ किसके पास इतना समय है। खुद उसका बेटा ही उसका तिरस्कार कर देता है। वह उलटे अपना ही दुखड़ा सुनाने लगता है। शोभा के लिए उसका दुःख बाँटने के लिए केवल उसकी पत्नी रह जाती है। वे दोनों मिलकर अपने बच्चे समान डोरू के लिए रोने लगते हैं। "सचमुच, जैसे डोरू नहीं आज बेटा ही चला गया है।" शोभा की सबसे बड़ी चिंता यह है कि अब उसका खेत बिना बैल के इस साल खाली ही रह जाएगा। वह गाँव वालों से बैल माँगता है पर उसे बैल देने को कोई तैयार नहीं होता। उसकी सारी उम्मीदें जब खत्म हो जाती हैं तो वह निराश होकर पत्नी से सारे खेत बेचकर, दुनियादारी से मुक्त होकर तीर्थ जाने की बात कहता है। इस पर उसकी पत्नी उसे समझाते हुए जो कहती है उसमें किसान गरिमा की भावना भरी हुई है। वह कहती है – "हमारा तीर्थ हमारी गउएं हैं, पुर्खों की इतनी जमीन-जायदाद है। अब इससे बड़ा क्या तीर्थ होगा।"[8]

> यह कहानी प्रेमचंद की किसान जीवन से जुड़ी कहानियों का सहज ही स्मरण करा देती है। खेतों और जानवरों से ऐसा स्नेह उनके बाद बहुत कम कहानियों में देखने को मिलता है। आज की पीढ़ी अपने परिवेश और प्रकृति से कटती जा रही है। वह खेती-किसानी में न तो कोई मुनाफा और फायदा देखती है और न ही शान। वह वही कार्य करना पसंद करती है जिसमें उसे अधिक-से-अधिक मुनाफा हो और जिससे वह अपने सुख-सुविधाओं में बढ़ोत्री कर सके।

'कीलें' संग्रह की अंतिम तीन कहानियों 'पत्थर का खेल', 'आग' और 'फ्लाईकिलर' में भ्रष्ट राजनीति तथा उसके चरित्र का उद्घाटन हुआ है। इन कहानियों में विगत कुछ सालों में दलितों एवं अल्पसंख्यकों के खिलाफ बढ़ रही घृणा और वैमनस्य को दर्शाया गया है।

'पत्थर का खेल' में ऐसे लोगों की पहचान की गई है जो राजनेताओं की शह पर धर्म और जाति के आधार पर समाज में विभाजक रेखा खींचते हैं। जो लोगों को आपस में लड़ाते हैं, हिंसा, लूट और दंगा करवाते हैं। देश में ऐसे लोगों की संख्या और ताकत अचानक बढ़ गई है जिन्होंने पूरे देश भर में आतंक का माहौल बना

दिया है। इस कहानी का पात्र सीताराम 'सीतू' का मन-मस्तिष्क इस माहौल का बुरी तरह शिकार हो गया है। उसे नींद नहीं आती, आती भी है तो वह अजीबोगरीब सपने देखता है। वह स्वप्न में खुद को चारों तरफ से भय और दहशत-भरे वातावरण से घिरा हुआ पाता है। "सीतू की आँखों में नींद नहीं है। ज़रा-सी आँख लगती है तो भयानक मंज़र दिखने लगते हैं। उसे लगता है कि उसके स्कूल के झोले से कापियाँ और किताबें बाहर निकलने लगी हैं। उनके पीछे पेंसिलें और पेन हैं, ज्योमेट्रीबॉक्स हैं। बाहर निकलते ही उन्होंने अजीबोगरीब शक्ले अख्तियार करने लगी हैं। कापियाँ और किताबें आदमी और औरतें बन गई हैं। पेंसिलें और पेन दरांत-दराँतियों, झब्बलों और बंदूकों में तब्दील हो गए हैं। वह देखता है कि पल-भर में लोग उन खतरनाक हथियारों से लड़ने लगे हैं।" (9)

सीतू स्वप्न में जो देखता है उससे वह सिहर उठता है। वह हकीकत में भी तो कुछ-कुछ वैसा ही पाता है। उसने कुछ ही दिनों में अपने गाँव को तेजी से बदलते हुए देखा है। पहले जहाँ उसके गाँव में सभी लोग मिलजुलकर रहते थे वहीं अब वे गुटों में बँट गए हैं। उसके पिता अपने को कट्टर हिंदू कहलाने में गर्व महसूस करते हैं। गाँव में उनका एक अलग गुट है। सीतू देखता है कि उनके पिता अपने घर में बंदूकें, भालें, तलवार आदि खतरनाक हथियार मँगाकर इकट्ठा कर रहे हैं। वह छिपकर उनकी बातें सुनकर उनकी सारी योजनाओं का पता लगा लेता है। वह यह समझ जाता है कि गाँव में दंगा और हिंसा फैलाने की योजना बन रही है। यह स्थिति मात्र सीतू के गाँव की नहीं है, बल्कि यह हाल अमूमन पूरे देश का है। पूरे देश में सांप्रदायिक ताकतें सक्रीय हैं। वे समाज में हिंसा फैलाने और सांप्रदायिक तनाव पैदा करने के अवसर ढूढ़ते रहते हैं। इसके लिए प्रायः त्यौहारों, उत्सवों और पारंपरिक रिवाजों का सहारा लिया जाता है। इस कहानी में भी यही होता है। सदियों से सीतू के गांव में चले आ रहे पत्थर के खेल की परंपरा को कट्टरपंथी लोग इस्तेमाल कर गांव में सांप्रदायिक दंगा करवाने की साजिश रचते हैं।

'आग' कहानी का वातावरण भी बहुत-कुछ यही है। यह कहानी बालमन में उठे एक सवाल के साथ शुरू होती है। पिछले कुछ वर्षों में हिन्दू-मुसलिम का शोर इस कदर मचाया गया कि हर आदमी अपने को हिन्दू और मुसलिम के रूप में देखने लगा, जैसे कि उसे यह पहचान पहली बार मिली है। यह शोर इतना गूँजा कि दूर पहाड़ पर बसे गाँव में जब उसकी प्रतिध्वनि सुनाई दी तो वहाँ तीसरी कक्षा में पढ़ रहे बादिर नाम के बालक ने अपने गुरु जी से जो सवाल किया उसे सुनकर शास्त्री वेदराम भी सहम गए। बादिर ने उनसे पूछा – "गुरु जी! गुरु जी ! हिन्दू क्या होता है ...?"[9] यह सवाल सुनते ही शास्त्री जी को पिछले कुछ दिनों से देश में घट रही अनेक घटनाएँ अनायास ही स्मरण हो आईं। उन्होंने पाया कि पिछले कुछ समय से किस तरह देश में धर्म के आधार पर लोगों को बाँटा जा रहा है। एक साजिश के तहत अल्पसंख्यकों और दलितों के खिलाफ मार-पीट, हिंसा और उनकी हत्याएँ की जा रही हैं। एक खास समुदाय लगातार मदांध होता जा रहा है। जो भी बुद्धिजीवि इन सब घटनाओं के खिलाफ कुछ बोल अथवा लिख रहा है, उसकी हत्या कर दी जा रही है। पूरे देश में सांप्रदायिकता की हवा बह रही है और सब तरफ आतंक का माहौल बना हुआ है। कुछ युवकों द्वारा जब उनके

विद्यालय में माहौल खराब करने की कोशिश की जाती है तो शास्त्री जी बुरी तरह भड़क उठते हैं। वे उनके खिलाफ कड़ी कार्रवाई करते हैं। वे सरकार द्वारा जारी उन नए सरकुलरों और फर्मानों को मँगाकर खुले मैदान में सबके सामने आग के हवाले कर देते हैं, जिनमें सरकार ने अपनी धार्मिक नीतियों के तहत हिन्दू धर्म से जुड़े प्रतीकों को पाठ्यक्रम में शामिल करने का आदेश जारी किया था। ऐसा कर शास्त्री वेदराम सीधे सत्ता को ही चुनौती दे देते हैं।

इस कहानी में भय, तनाव और दहशत के उस वातावरण को साफ महसूस किया जा सकता है जो पिछले कुछ सालों में सांप्रदायिक ताकतों के सक्रिय होने से निर्मित हुआ है। ये ताकतें समाज के विकास और शांति के लिए सबसे बड़ा खतरा बनी हुई हैं। हरनोट ने इस कहानी के माध्यम से सत्ता की भूमिका को निशाने पर लिया है।

'फ्लाईकिलर' कहानी में भी राजनीति के चेहरे को बेनकाब किया गया है। यह कहानी प्रतीक के माध्यम से देश की राजनीति पर प्रहार करती है। फ्लाईकिलर एक ऐसा यंत्र होता है जो मक्खियों को एक हाथ दूर से ही अपनी ओर खींचकर मार देता है। जिस तरह मक्खियों से बचने के लिए लोग अपने घरों, होटलों में फ्लाईकिलर लगाकर रखते हैं उसी तरह के जैसी मशीन की जरूरत आज सत्ता को है। वह अपने दुश्मनों से परेशान है। सत्ता के दुश्मन हैं किसान, मजदूर, पत्रकार, साहित्यकार आदि। ये अपने धरनों, हड़तालों और कलम की ताकत से सत्ता की नाक में दम किए रहते हैं। सत्ता इनके दमन का भरपूर प्रयास करती है। वह फ्लाईकिलर की तरह ही एक ऐसा यंत्र चाहती है जो इन लोगों की पहचान कर उनका क्षण-भर में खात्मा कर दे।

यह कहानी सत्ता के दमनकारी चरित्र का उद्घाटन करती है। इस कहानी का पात्र जीवन कुमार सत्ता की दमनकारी नीतियों का गवाह भी है और शिकार भी। वह सत्ता के क्रूर और अमानवीय रूप से भली-भाँति परिचित है। वह जानता है कि सरकार के खिलाफ लिखने और बोलने की आजादी नहीं है। मीडिया भी उसके खिलाफ नहीं बोल सकती। देश में अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता दिनोंदिन छिनी जा रही है। यह आज के दौर का भयानक संकट है।

'कीलें' संग्रह की इन तीनों कहानियों में हरनोट ने राजनीति में लगातार ह्रास होते मूल्यों और नैतिकताओं की मार्मिक गाथा प्रस्तुत की है। राजनीति में स्वार्थ ने अपनी जड़ें मजबूती से जमा ली हैं। राजनेताओं का अपने सुख-सुविधाओं से मतलब भर रह गया है। वे अपने स्वार्थ के लिए समाज को धर्म और जाति के आधार पर बाँटे रखना चाहते हैं। सांप्रदायिक ताकतों को समर्थन देना तथा समय-समय पर हिंसा और दंगे की स्थिति पैदा करना उनकी स्वार्थ-नीति का ही हिस्सा होता है। सरकार जब धर्म की राजनीति करने लगती है तो वह कितनी क्रूर और आततायी हो जाती है, ये कहानियाँ इसका बखूबी विश्लेषण करती हैं।

**निष्कर्षत:**

यह कहा जा सकता है कि कुल सात कहानियों से सजे इस संग्रह में नफरत, घृणा और हिंसा की कीलों पर चोट करते हुए, उन कीलों से घायल होते मानवीय मूल्यों एवं रिश्तों की पीड़ा तथा त्रासदी की मर्मस्पर्शी कथा कही गई है। ये कहानियाँ आज के दौर के सच से पाठक का साक्षात्कार कराती हैं। इनमें हम अपने समय को तथा खुद को तलाश सकते हैं। हरनोट की कहानियाँ समय के तात्कालिक प्रभाव-दबाव, असमानता और मानवीय चिंताओं के बीच से उभरती हैं। उनकी कहानियाँ इसका प्रमाण हैं कि समसामयिक घटनाओं, समस्याओं और विषयों पर भी श्रेष्ठ साहित्य लिखा जा सकता है। इस संग्रह को पढ़कर भले ही एस.आर. हरनोट पर किसी खास विचारधारा के प्रति विशेष आग्रही होने का आरोप लगाया जा सकता है, किंतु जब हम स्वस्थ दृष्टि से इन कहानियों का मूल्यांकन करें तो हम पाएंगे कि ये कहानियाँ आज के यथार्थ को सही अर्थ और परिप्रेक्ष्य में परिभाषित करती हैं। इसी कारण, प्रशांत रमण रवि इस कहानी पर बात करते हुए कहते हैं कि "सात कहानियों का यह संग्रह कहानी रचना की दुनिया में एक सार्थक और जरूरी हस्तक्षेप लगता है।"[10]

---

**संदर्भ सूची**


[1] हरनोट, एस.आर. (2019). *कीलें*. नई दिल्ली : वाणी प्रकाशन. पृ. 36

[2] हरनोट, एस.आर . (2019). *कीलें*. नई दिल्ली : वाणी प्रकाशन. पृ. 45

[3] हरनोट, एस.आर. (2019). *कीलें*. नई दिल्ली : वाणी प्रकाशन. पृ. 9

[4] हरनोट, एस.आर. (2019). *कीलें*. नई दिल्ली : वाणी प्रकाशन. पृ. 11

[5] हरनोट, एस.आर. (2019). *कीलें*. नई दिल्ली : वाणी प्रकाशन. पृ. 13

[6] शुक्ल, स्मृति (संपा.). (2023). *एस.आर. हरनोट : एक शिनाख्त*. मुम्बई : प्रलेख प्रकाशन. पृ. 21

[7] हरनोट, एस.आर. (2019). *कीलें*. नई दिल्ली : वाणी प्रकाशन. पृ. 64

[8] हरनोट, एस.आर. (2019). *कीलें*. नई दिल्ली : वाणी प्रकाशन. पृ. 75

[9] हरनोट, एस.आर. (2019). *कीलें*. नई दिल्ली : वाणी प्रकाशन. पृ. 102

[10] शुक्ल, स्मृति (संपा). (2023). *एस.आर. हरनोट : एक शिनाख्त*. मुम्बई : प्रलेख प्रकाशन. पृ. 219

# मनोवैज्ञानिक शोध : अर्थ एवं विशेषताएं और उपयोग

**डॉ. गणेश ताराचंद खैरे***

gt.khaire@gmail.com

**सारांश :**

मनोवैज्ञानिक शोध का अर्थ यह है कि किसी भी समस्या किसी भी प्रश्न का समाधान करने का वस्तुनिष्ठ एवं क्रमबद्ध प्रेयसी वैज्ञानिक शोध कहलाता है वैज्ञानिक शोध में शोधकर्ता नियंत्रित एवं मनोविज्ञान के अध्ययन के पश्चात वैज्ञानिक शोध एवं वैज्ञानिक शोध के अर्थ और मनोवैज्ञानिक शोध की विशेषता से संबंधित जानकारी प्राप्त होती है। शोध वैज्ञानिक पद्धति पर आधारित विश्लेषण करने की तर्कयुक्त और व्यवस्थित गहन प्रक्रिया होती है। शोध वैज्ञानिक पद्धति की महत्वपूर्ण अवस्था होती है। शोध प्राकृतिक दृश्य विषयों के बीच अनुमानित संबंधों से परिकल्पनात्मक कथनों की व्यवस्थित, नियंत्रित, अनुभवजन्य और तार्किक खोज होती है। मनोवैज्ञानिक अनुसंधान के अंतर्गत मानव विज्ञान के क्षेत्र के भीतर की समस्याओं के बारे में जानकारी हमें प्राप्त होती है। मनोविज्ञान के अंतर्गत व्यक्ति, प्राणी आदि के व्यवहार का अध्ययन किया जाता है। मनोविज्ञान का क्षेत्र अत्यंत व्यापक होता है। मनोविज्ञान की अनेक विशेषताएं होती है। इसका स्वरूप उच्च और वैज्ञानिक होता है। मनोवैज्ञानिक शोध के अंतर्गत प्रयोग पद्धति का उपयोग भी किया जाता है।

**मुख्य शब्द :**

शोध अनुसंधान, तर्कपूर्ण चिंतन, समस्या का निराकरण, वैज्ञानिक पद्धति का अवलंब, वैज्ञानिक शोध, आलोचनात्मक खोज, मानवीय व्यवहार से संबंधित, मनोवैज्ञानिक शोध, मनुष्य के व्यवहार और आनुवंशिक क्रिया का स्वरूप, वैज्ञानिक पद्धति का अवलंब

**प्रस्तावना** :

शोध को अनुसंधान भी कहा जाता है। अनुसंधान व्यक्ति की ज्ञान को नई दिशा प्रदान करने का काम करता है। साथ-साथ उसे विकसित और परिमार्जित करता है। इसलिए अनुसंधान महत्वपूर्ण होता है। अनुसंधान ज्ञान के विविध पक्ष में गहनता और सूक्ष्मता आनी चाहिए और अनुसंधान ज्ञान हमें यह गहनता और सूक्ष्मता प्रदान करता है। अनुसंधान अनेक नवीन कार्यविधि को विकसित करता है तथा अनुसंधान की वैज्ञानिक पद्धति पर आधारित विश्लेषण करने की तर्कयुक्त व्यवस्थित गहन प्रक्रिया को प्रदान करता है। इस अनुसंधान के वैज्ञानिक पद्धति के बारे में एडवर्ड कहते हैं कि, अनुसंधान की किसी प्रश्न या समस्या प्रस्तावित उत्तर की जांच

* **सहायक प्राध्यापक, हिंदी विभाग, बी.जे.एस कॉलेज, वाघोली, ता.हवेली, जि.पुणे, पिन-४१२२०७**

के लिए उत्तर खोजने हेतु किया जाता है। इस प्रकार अनुसंधान विकास का संवाहक होता है। अनुसंधान की विशेषताएं यह होती है कि, यह एक वैज्ञानिक प्रक्रिया है, जो मापन पर आधारित होता है। इसकी यह भी विशेषता है कि, यह तथ्यपरक होता है, जिसे सतर्कता के साथ प्रतिवेदीत किया जाता है।

मनोवैज्ञानिक शोध एक महत्वपूर्ण माध्यम है। इस माध्यम का उपयोग करके मनुष्य के व्यवहार और मानसिक क्रिया के स्वरूप उनमें निहित क्रियातंत्रों उनके निर्धारकों का पता आसानी से लगाया जाता है। मनोवैज्ञानिक शोध भी वैज्ञानिक ढंग से लगाया जाता है। इसमें मनोविज्ञान संबंधित वर्गीकरण, संग्रह की प्रक्रिया, अभिकल्प का विवेचन, अभिकल्पों का विवेचन का आदी का अभ्यास किया जाता है।

**मनोविज्ञान की पृष्ठभूमि :**

मानव और पशु-पक्षी में अंतर है। मानव विचारशील प्राणी है वह अपने आसपास के पशु-पक्षी, लोग, निसर्ग को समझना चाहता है, देखने का प्रयास करता है और यह सब मनोविज्ञान के अंतर्गत आता है। आज मानव विज्ञान के क्षेत्र में परिवर्तन होता हुआ दिखाई देता है। पहले मनोविज्ञान में सिर्फ मन और आत्मा का ही विचार किया जाता था। लेकिन आज मनोविज्ञान व्यक्ति के आदर्श व्यवहार एवं मानव व्यवहार का अध्ययन करता है। वैसे देखा जाए तो मनोविज्ञान में केवल शारीरिक ही नहीं बल्कि मानसिकता का भी अध्ययन किया जाने लगा है। मनोविज्ञान यह शब्द अंग्रेजी के साइकोलॉजी का पर्यायवाची शब्द है मनोविज्ञान यह शब्द साईके और लोगस इन दो यूनानी भाषा के शब्दों से मिलकर बना है। साइके इस शब्द का अर्थ है आत्मा और लागोस इस शब्द का अर्थ है विचार-विमर्श इस प्रकार मनोविज्ञान वह विज्ञान है, जिसमें मानव के व्यवहार का अध्ययन किया जाता है। जो व्यवहार उसके अंतर्मन के मनोभावों और विचारों की अभिव्यक्ति करता है और इसे ही मानसिक जगत कहा जाता है। मनोविज्ञान अब बहुआयामी में क्षेत्र में विभाजित हो गया है जैसे- संज्ञात्मक, जैविक, सामाजिक, विकासात्मक और औद्योगिक आदि शाखाएं शामील है।

**मनोवैज्ञानिक शोध की पृष्ठभूमि :**

भारत में प्राचीन काल में उपनिषद मैं मन,आत्मा और चेतना इस विषय पर विचार किया गया। उसके बाद अरस्तु, सुकरात और प्लेटो ने मनुष्य के विचार, भावना और ज्ञान पर गहरा चिंतन प्रस्तुत किया। 17 वीं और 18वीं शताब्दी में मनोविज्ञान दार्शनिकों का एक महत्वपूर्ण हिस्सा था। दार्शनिक विचारकों के अंतर्गत रेने और देकार्त ने दैववाद पर जोर दिया। जॉन लॉक और डेविड ह्यूम इन्होंने अनुभव वाद पर जोर दिया। उनका कहना है कि, ज्ञान अनुभव से ही आता है। सबसे पहले जर्मनी में मनोवैज्ञानिक प्रयोगशाला स्थापित कि गयी। इसकी स्थापना का श्रेय वुड्ट को दिया जाता है। वुड्ट ने चेतन की संरचना को समझने का प्रयास किया। विलियम जेम्स ने मां के कार्यों को समझने का प्रयास किया। स्किनर ने जिसका सही परीक्षण किया जाए ऐसे व्यवहार का अध्ययन किया। गेस्टाल्ट ने मानवी अनुभव का अध्ययन किया। कार्ल रॉजर्स और मैस्लो ने व्यक्ति की संभावना हो और आत्मा में विकास पर जोर दिया।

**आधुनिक मनोविज्ञान सामान्य जानकारी :**

आधुनिक मनोविज्ञान यह एक ऐसा विज्ञान है, जिसमें मानव के मन, मस्तिष्क,व्यवहार, भावना, अनुभूतियां, संज्ञानात्मक प्रतिक्रिया और सामाजिक प्रभाव का अध्ययन किया जाता है। आधुनिक मनोविज्ञान विभिन्न शाखों में बंटा हुआ है। इसमें जैविक सामाजिक विकासात्मक नैदानिक और प्रयोगात्मक आदि शाखों का अंतर भाव होता है। आधुनिक शोध को देखा जाए तो इसमें सांख्यिकीय विधियां, ब्रेन इमेजिंग, कंप्यूटर मॉडलिंग आदि का उपयोग किया जाता है। आधुनिक मनोविज्ञान की विविध शाखों पर हम दृष्टि डालेंगे तो इनमें से प्रमुख शाखाएं यह है, जैसे - जैविक मनोविज्ञान, संज्ञानात्मक मनोविज्ञान, सामाजिक मनोविज्ञान, विकासात्मक मनोविज्ञान, नैदानिक मनोविज्ञान, परामर्श मनोविज्ञान, शैक्षिक मनोविज्ञान, औद्योगिक मनोविज्ञान और संगठनात्मक मनोविज्ञान आदि महत्वपूर्ण शाखाओं का समावेश होता है।

**मनोवैज्ञानिक शोध का अर्थ :**

मनोवैज्ञानिक शोध का अर्थ जानने से पहले हमें समझना आवश्यक है कि, अनुसंधान क्या है? वैज्ञानिक शोध क्या है? वैसे देखा जाए तो शोध की कोई परिभाषा नहीं दी जा सकती। शोध का अर्थ यह है कि, किसी समस्या के निराकरण के लिए खोजे गए विश्वसनीय उत्तर। वैज्ञानिक शोध के अर्थ को इस प्रकार स्पष्ट किया जाता है कि किसी भी समस्या या किसी भी प्रश्न का समाधान करने का क्रमबद्ध एवं वस्तुनिष्ठ प्रेयसी वैज्ञानिक शोध कहलाता है वैज्ञानिक शोध के अंतर्गत शोधकर्ता नियंत्रित एवं अपने अनुभव के आधार पर शोध करता है।

**मनोवैज्ञानिक शोध सामान्य जानकारी :**

इसके अंतर्गत मनोवैज्ञानिक शोध का उपयोग करके मनुष्य के व्यवहार,उसकी मानसिक क्रिया के स्वरूप, क्रियातंत्र का पता लगाया जाता है। मनोवैज्ञानिक अनुसंधान को हम यह कह सकते हैं कि, मनोविज्ञान के विषय क्षेत्र से संबंधित किसी भी समस्या के निराकरण के लिए व्यक्ति तर्कयुक्त पद्धति पर आधारित प्रासंगिक एवं निष्पक्ष तथा योग्य तथ्यों को एकत्र करके परिणाम के विवेचन एवं निष्कर्ष तक पहुंचाने की समस्त प्रक्रिया को मनोवैज्ञानिक शोध का जा सकता है।

**मनोवैज्ञानिक शोध की परिभाषाएं :**

1) जॉन डब्लू बेस्ट - "शोध एक ऐसी विधि है, जिसके द्वारा समस्याओं के समाधान की खोज की जाती है। जिनका समाधान वैज्ञानिक पद्धति के माध्यम से किया जाता है।"[1] इस परिभाषा से स्पष्ट होता है कि, शोध के माध्यम से किसी भी समस्या के समाधान की खोज की जा सकती है और इसका समाधान वैज्ञानिक पद्धति से किया जा सकता है।

2) क्लिपर्ड वुड्स - "शोध एक ऐसे तर्कसंगत प्रयास का नाम है,जो किसी भी समस्या के उत्तर खोजने के लिए किया जाता है।"[2] इस परिभाषा से हमें यह पता चलता है कि, किसी भी समस्या का उत्तर खोजने के लिए व्यक्ति जो प्रयास करता है उसको ही शोध कहा जाता है।

3) केरलिंगर - "शोध एक व्यवस्थित, नियंत्रित, अनुभव सिद्ध आलोचनात्मक जांच है जो प्राकृतिक घटना के बारें में सामान्य सिद्धांतों को विकसित करने की दिशा में होती है।"[3] इस परिभाषा में बताने का प्रयास किया है की, शोध एक सण नियंत्रित अनुभव के आधार पर किया जाता है जिसमें प्राकृतिक घटना के बारे में सामान्य सिद्धांत का विकास किया जाता है।

4) गुड और हार्ट - "शोध एक सोच समझकर की गई जांच है, जो किसी समस्या, घटना परिस्थिती के बारें में तथ्यों और सिद्धांतों को इकट्ठा करणे और उनका विश्लेषण करने की विधि है।[4] इस परिभाषा से हमें ये बात समझ में आते है की, शोध यह एक प्रक्रिया है जो सोच समझ कर की जाती है। शोध में किसी भी समस्या, घटना स्थिति के बारे में जानकारी हासिल की जाती है और उसका विश्लेषण किया जाता है उसके बाद हम सही निष्कर्ष पर पहुंच सकते हैं।

5) बोरग - "शोध एक व्यवस्थित और उद्देश्य पूर्ण जांच है जिसमें तथ्यों को एकत्रित किया जाता है उनका विश्लेषण किया जाता है और सामान्य नियमों या सिद्धांतों की स्थापना की जाती है।"[5] इस परिभाषा से यह स्पष्ट होता है कि, शोध करते समय एक उद्देश्य होता है और उसे उद्देश्य की पूर्ति करने के लिए उससे संबंधित जानकारी इकट्ठा की जाती है और उसका निरपेक्ष तरीके से विश्लेषण किया जाता है और बाद में सिद्धांतों की स्थापना की जाती है। इस प्रकार उपयुक्त परिभाषा से यह स्पष्ट होता है कि, शोध वैज्ञानिक हो या मनोवैज्ञानिक या किसी भी क्षेत्र से संबंधित हो उसे वैज्ञानिक पद्धति से खोजे गए उत्तर के रूप में समझा जा सकता है शोध यह एक ऐसी प्रक्रिया है जो निरंतर चलने वाली होती है और यही निरंतरता विज्ञान की प्रगति का प्रमुख चरण होता है।

**मनोवैज्ञानिक शोध की विशेषताएं :**

किसी भी मनोवैज्ञानिक शोध के अंतर्गत हमें निम्नलिखित विशेषताएं देखने को मिलती है। यह महत्वपूर्ण विशेषताएं निम्नलिखित स्पष्ट की गई है -

1) मनोवैज्ञानिक शोध में प्रयोग पद्धति का अवलंब किया जाता है और यह शोध का स्वरूप उच्च स्तर का होता है।

2) मनोवैज्ञानिक शोध में नियंत्रण की व्यवस्था भी होती हैं।

3) मनोवैज्ञानिक शोध में मनोवैज्ञानिकों द्वारा विकसित किए गए अभीकल्पना स्वतंत्र प्रभाव को अलग किया जा सकता है और इसका वैज्ञानिक मूल्यांकन मूल्यांकन भी किया जाता है।

4) मनोवैज्ञानिक शोध में सांख्यिकीय विधि, का आंकड़ों का संकलन, विश्लेषण और विवेचन में उपयोग किया जाता है।

5) मानव मैकेनिक सुविधा प्राणी और अनुक्रिया से संबंधित होता है।

6) मानव वैज्ञानिक अनुसंधान द्वारा प्राप्त तथ्य, नियम और सिद्धांतों का स्वरूप पर्याप्त मात्रा में वैज्ञानिक होता है।

7) मनोवैज्ञानिक पद्धति में तथ्यों का व्यापक उपयोग किया जाता है।

**मनोवैज्ञानिक शोध का आज के युग में उपयोग :**

मनोवैज्ञानिक शोध का महत्व आज के युग में अन्य साधारण है। आज के युग में मनोवैज्ञानिक शोध अत्यंत उपयोगी है इसके कुछ प्रमुख कारण निम्नलिखित है -

1) **मानसिक स्वास्थ्य की समस्याएं** - आज के जीवन शैली में व्यक्तियों को हर समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है। जिससे आधुनिक जीवन शैली तनाव, प्रतिस्पर्धा, संघर्ष और सामाजिक दबाव के कारण व्यक्ति के जीवन में स्वास्थ्य से जुड़ी समस्या जैसे - अवसाद, चिंता, अकेलेपन, संघर्ष और निराशा आदि तेजी से बढ़ रही है। इन सबका समाधान खोजने के लिए मनोवैज्ञानिक शोध महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। व्यक्ति की समस्या खोजने और उसका समाधान का मार्ग खोजने के लिए मानव के जीवन में वैज्ञानिक शोध की महत्वपूर्ण भूमिका रहती है।

2) **आपसी संबंधों और व्यवहारों में तनावपूर्ण स्थिति** - व्यक्ति के परिवार, कार्यस्थल, समाज में आपसे संबंधों की जटिलता को समझने के लिए मनोविज्ञान का महत्वपूर्ण योगदान है। शोध के माध्यम से हम समाज में रहने वाले व्यक्ति के व्यवहार और उसके पीछे के कारण इन सबको हम अच्छी तरह से समझ सकते हैं।

3) **बच्चों के विकास में शिक्षा का महत्व** - बच्चों के विकास में शिक्षा का महत्वपूर्ण योगदान रहता है। शिक्षा के माध्यम से बच्चों का सर्वांगीण विकास संभव है। शिक्षा के कारण ही बच्चों का व्यक्ति महत्व विकास होता है। शिक्षा के क्षेत्र में बच्चों का सीखना, याद करना, उनका मानसिक विकास के विविध पहलुओं को शोध के माध्यम से जानना संभव है।

4) **मानवी व्यवहार और आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस** - आज के युग में विज्ञान ने बहुत प्रगति की है। आज के युग को मशीन युग कहा जाता है। इस युग में जो मशीन तैयार की गई है, वह मनुष्य जैसे सोच के अनुरूप तैयार की गई है। इसलिए मनोविज्ञान की समझ होना महत्वपूर्ण बन गया है।

5) **सामाजिक समस्या का निराकरण** - व्यक्ति के आप सी भेदभाव, पूर्वाग्रह, अपराध वृत्ति, व्यसनाधिनता आदि समस्याओं का विश्लेषण और समाधान मनोवैज्ञानिक शोध से ही संभव हो रहा है। इससे स्पष्ट होता है

कि, आज के युग में मनोवैज्ञानिक शोध का महत्व, उसका उपयोग, उसकी प्रासंगिकता और उसका लाभ मनुष्य जीवन के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है।

**निष्कर्ष**

मनोवैज्ञानिक शोध आज के समय में मानवीय व्यवहार, मानसिक प्रक्रियाओं और सामाजिक जटिलताओं को समझने का एक अत्यंत प्रभावी एवं वैज्ञानिक माध्यम बन चुका है। यह शोध पद्धति न केवल व्यवहार के बाह्य स्वरूप का विश्लेषण करती है, बल्कि उसके आंतरिक कारणों और क्रियातंत्र को भी स्पष्ट करती है। मनोविज्ञान की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि से लेकर आधुनिक शाखाओं तक, इसका विकास अनेक विचारधाराओं, प्रयोगों और सिद्धांतों के माध्यम से हुआ है।

मनोवैज्ञानिक शोध की विशेषताएँ जैसे – प्रयोग पद्धति का प्रयोग, नियंत्रित पर्यावरण में अध्ययन, सांख्यिकीय विश्लेषण तथा निष्पक्ष तथ्यों का संग्रहण – इसे अन्य सामाजिक विज्ञानों के शोध से विशिष्ट बनाती हैं। यह शोध न केवल वैज्ञानिक दृष्टिकोण को प्रोत्साहित करता है, बल्कि मानवीय समस्याओं जैसे – मानसिक स्वास्थ्य, आपसी संबंधों में तनाव, बच्चों का सर्वांगीण विकास, सामाजिक विकृतियाँ एवं आधुनिक तकनीकी चुनौतियों (जैसे आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस) – के समाधान की दिशा में उपयोगी मार्गदर्शन भी प्रदान करता है।

अतः यह कहा जा सकता है कि मनोवैज्ञानिक शोध न केवल शैक्षणिक जगत के लिए, बल्कि समाज और मानव जीवन के लिए भी अत्यंत उपयोगी, प्रासंगिक एवं परिवर्तनशील उपकरण के रूप में कार्य करता है। यह अनुसंधान व्यक्ति की मानसिक समझ को सुदृढ़ करता है तथा समाज को अधिक सहिष्णु, सुसंवेदनशील और विवेकपूर्ण बनाने की दिशा में सार्थक भूमिका निभाता है।

**संदर्भ** :

1. बेस्ट, जॉन डब्ल्यू. (1981). *रिसर्च ऑन एजुकेशन*. प्रेंटिस हॉल पब्लिकेशन. पृ. 25
2. वुड्स, क्लिफर्ड (1927). वुडी, सी. (सं.). *ए सर्वे ऑफ़ एजुकेशनल रिसर्च*. मैकमिलन पब्लिकेशन. पृ. 85
3. केरलिंगर, एफ. एन. (1973). *फाउंडेशन ऑफ़ बिहेवियरल रिसर्च*. हॉट, रिनहार्ट एंड विंस्टन. पृ. 64
4. गुड, सी. वी., & हार्ट, पी. के. (1952). *मेथड इन सोशल रिसर्च*. मैकमिलन पब्लिकेशन. पृ. 90
5. बोरग, डब्ल्यू. आर. (1983). *एजुकेशनल रिसर्च: एन इंट्रोडक्शन*. लोंगमैन पब्लिकेशन. पृ. 75

# हुस्न तबस्सुम निहां के कहानी संग्रह 'नीले पंखों वाली लड़कियां' में स्त्री स्वर का अनुशीलन

**अंजली***

**anjalibhasker164@gmail.com**

*समकालीन साहित्य में अनेक प्रकार के विमर्श चर्चा के केंद्र में विद्यमान हैं जिनमें स्त्री विमर्श और दलित विमर्श प्रमुख हैं। इनमें से स्त्री विमर्श दुनिया की आधी आबादी के बुनियादी सवालों और समस्याओं का विमर्श है। हिंदी साहित्य में भी स्त्री विमर्श का अपना विशिष्ट स्थान है। इस विमर्श के अंतर्गत स्त्रियों की सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक अस्मिता से संबंधित प्रश्नों पर विचार किया जाता है। स्त्री विमर्श के प्रश्न के सामने बहुत सारे विचार हमारे मन में उत्पन्न होते हैं। जब किसी भी मनुष्य को उसके लिंग के आधार पर उसके मनुष्य होने की गरिमा से वंचित किया जाता है तभी स्त्री विमर्श की शुरुआत होती है। हुस्न तबस्सुम निहां समकालीन हिंदी साहित्य लेखन में एक चर्चित नाम है। प्रस्तुत शोधपत्र में इनके कहानी संग्रह नीले पंखों वाली लड़कियां की कहानियों का स्त्रीवादी ढंग से विश्लेषण किया गया है।*

***बीजशब्द**: स्त्री, पितृसत्ता, अधिकार, भेदभाव, समाज आदि*

स्त्री विमर्श दो शब्दों से मिलकर बना है- 'स्त्री' और 'विमर्श', जहां 'स्त्री' का अर्थ मनुष्य के लिंग से लिया जाता है और वहीं 'विमर्श' का अर्थ किसी भी विषय पर विचार, चिंतन या वार्तालाप से लिया जाता है। विमर्श से सीधा अभिप्राय सोच-विचार, विनिमय तथा विवेचन से लिया जाता है। सदियों से होते आए शोषण के प्रति जागृत स्त्री चेतना ने ही स्त्री विमर्श को जन्म दिया है। स्त्री विमर्श और कुछ नहीं, स्त्रियों की आत्मचेतना, आत्मसम्मान, समता, आत्मगौरव और समानाधिकार की पहल का एक दूसरा नाम है। यह वैचारिक आंदोलन स्त्रियों की समानता और अधिकारों की मांग करते हुए स्त्रियों की मुक्ति चाहता है और राजनीतिक, वैचारिक, आर्थिक, सामाजिक एवं लिंग केंद्रित विभेद को अस्वीकार करते हुए उनके लिए समान मानवीय अधिकारों की मांग करता है। इस तरह स्त्री विमर्श का अर्थ स्त्रियों की भावनाओं और विचारों की अभिव्यक्ति से है। इसमें स्त्री के अस्तित्व और अस्मिता को केंद्र में रखकर बात की जाती है और स्त्री को जागरूक करना ही स्त्री विमर्श का केंद्रीय विषय रहा है। स्त्री विमर्श ने ही स्त्री को वस्तु से व्यक्ति बनाने का काम किया। स्त्री विमर्श स्त्री को अपने अधिकारों के प्रति सजग रहना और अपनी मनुष्य के रूप में पहचान बनाने की समझ देता है। स्त्री विमर्श स्त्री को खुद से प्यार करने की सीख देता है।

पश्चिम में परिवार और समाज में अपने अस्तित्व को लेकर स्त्री संघर्ष की एक लंबी कहानी रही है। इस संघर्ष की सबसे पहली गूंज उस समय सुनाई देती है जब स्त्रियों ने चर्च में अपने अस्तित्व के लिए निर्धारित दोयम दर्जे को लेकर प्रश्न उठाएं। 1781ई. में जेरेमी बेंथम ने अपनी पुस्तक 'इंट्रोडक्शन टू द प्रिंसिपल्स ऑफ़

* **शोधार्थी, हिंदी विभाग, पंजाब केन्द्रीय विश्वविद्यालय, बठिंडा**

मोरल एंड लेजिसलेशन' में इस बात की ओर जोर देकर कहा कि **"स्त्रियां कमजोर बुद्धि की होती नहीं है बल्कि उन्हें कमजोर बुद्धि का बताकर उनके अधिकारों से उन्हें वंचित करना पुरुषों की साजिश है जिसकी भर्त्सना होनी चाहिए और राष्ट्रों को स्त्री पुरुष के प्रति भेदभाव का रवैया बंद करना चाहिए।"**(कुमारी, पृ. 28) दूसरे विश्वयुद्ध के बाद लेखिकाओं का एक ऐसा वर्ग उभरकर सामने आया जिसने विश्व की तमाम स्त्रियों की स्थिति को ध्यान में रखकर अपनी बात कही। ऐसी लेखिकाओं में फ्रेंच लेखिका 'सिमोन द बोउवार' का नाम बहुत ही महत्वपूर्ण है। उनकी पुस्तक 'द सेकेंड सेक्स', जो 1949 में प्रकाशित हुई थी, को विश्व में काफी लोकप्रियता मिली। इस पुस्तक को पढ़कर महिलाओं को यह महसूस हुआ कि जो उनका व्यक्तिगत दु:ख है वह सिर्फ उनका दु:ख नहीं है बल्कि विश्व की सभी स्त्रियों का सामान्य दुख है। इसमें लेखिका ने यह बताने का प्रयास किया है कि स्त्री को मनुष्य का दर्जा नहीं दिया गया है, उसे मनुष्य होने के दर्जे से वंचित रखा गया है। स्त्रियों को पुरुषों ने हमेशा एक वस्तु की तरह देखा है और समझा है। इनकी एक प्रसिद्ध उक्ति है कि- **"स्त्री पैदा नहीं होती, बना दी जाती है।"**(कुमारी, पृ. 115) इस पुस्तक में लेखिका ने स्त्री के विभिन्न रूपों की विस्तार से चर्चा की है ,जैसे- बालिका, पत्नी, मां, वेश्या, आत्मपीड़क, प्रेमिका आदि के रूप में। इन्हें केंद्र में रखकर लेखिका ने बताया है कि कैसे समाज के सारे मूल्य पुरुषों के लिए ही, पुरुषों द्वारा बनाए गए हैं। इन्होंने सिर्फ अपने-आप को लेखन तक ही सीमित नहीं रखा बल्कि महिला सरोकारों के लिए कार्यकर्ता के रूप में भी काफी काम किया है। इन्होंने सन् 1972 में अपने एक इंटरव्यू में कहा कि **"समाजवाद लाने से पहले आवश्यक है महिलाओं को समाज में पुरुषों के बराबर स्थान प्राप्त हो। समाजवादी देशों में भी महिलाओं को पुरुषों के बराबर स्थान प्राप्त नहीं है। स्त्रियों के लिए आवश्यक है कि वह अपनी नियति स्वयं सुधारे और पुरुषों पर आश्रित ना रहे।"**(कुमारी, पृ. 117) यूरोप के इतिहास में तो लंबे समय तक पिता को यह अधिकार था कि वह अपनी मर्जी से बेटी का विवाह उसकी मर्जी जाने बिना कही भी करवा सकता था। चर्च में विवाह करवाने के समय स्त्री से एक औपचारिक 'हां' कहलवाना जरूरी होता था। लेकिन यह सिर्फ़ दिखावे के लिए ही सहमति होती थी। जबकि सच तो यह हैं कि लड़की के पास 'हां' करने के अलावा और कोई विकल्प नहीं होता था, यह सब उसे अपने परिवार के दबाव में आकर करना पड़ता था। **वर्ल्ड हेल्थ ऑर्गेनाइजेशन** की जून, 2013 की रिपोर्ट के अनुसार विश्व की हर तीन में से एक स्त्री घरेलू स्त्री की शिकार है, इसमें एशिया और मिडिल ईस्ट देश में तादाद ज्यादा है। ये आंकड़े चौंकाने वाले आंकड़े हैं जबकि इससे ज़्यादा हैरानी वाली बात यह हैं कि यह किसी एक देश का नहीं बल्कि पूरे विश्व का फिनॉमिना है। जब पश्चिम में स्त्री की स्थिति यह है तो मुस्लिम समाज और भारतीय समाज में स्त्री की स्थिति का अनुमान आराम से लगाया जा सकता है।

भारत में महिलाओं की उचित स्थिति न होने का कारण धर्म है। चाहे वह कोई भी धर्म हो, चाहे वह इसाई हो, हिंदू हो, जैन हो या इस्लाम, उन्हें हर धर्म में दोयम दर्जे का ही जीव माना गया है। कहने का अर्थ यह है कि समाज हिंदू, मुस्लिम, ईसाई या फिर कोई भी हो, स्त्री की स्थिति हर जगह एक समान ही है। हिंदू धर्म के धार्मिक ग्रंथों से ही हम स्त्रियों की स्थिति का अनुमान लगा सकते हैं। वैदिक युग में स्त्री को पुरुष की अर्धांगिनी

कहा गया है। यहां तक की हिंदू का प्राचीन ग्रंथ ऋग्वेद के कई सूक्तों की रचना स्त्रियों ने ही की है। ऋग्वेद में मंत्रों का संकलन स्त्री और पुरुष दोनों के द्वारा किया गया है। परंतु फिर भी धार्मिक ग्रंथों में स्त्रियों के बारे में जो कुछ कहा गया है, वह उचित प्रतीत नहीं होता। **"ऐतरेय ब्राह्मण उसी नारी को उत्तम समझता है जो पति को संतुष्ट करती है। पुत्र-संतान को जन्म देती है एवं पति से बढ़ चढ़कर कभी कुछ नहीं कहती यानी जो नारी पति को संतुष्ट नहीं कर सकती और पुत्र-संतान को जन्म नहीं देती एवं पति से बढ़-चढ़कर बोलती हैं, उसे अवश्य ही अधम कहा जाता रहा होगा। नारी उत्तम है या अधम, यह पुरुष की संतुष्टि पर निर्भर करता है।"** (नसरीन, पृ. 23) हमारा भारतीय समाज धर्म केंद्रित रहा है और व्यक्ति अपने समस्त क्रियाकलापों को संचालित करने के लिए धर्म को केंद्र में रखता है। प्रारंभ से ही स्त्री का धर्म में बहुत विश्वास रहा है। वह धर्म का सहारा पाकर ही सफलता से अपने जीवन को व्यतीत करती है। हमारे धर्मग्रंथों ने नारी को देवी के रूप में माना है। हम 'राम' बाद में और 'सीता' का नाम पहले लेते हैं, इसी तरह 'कृष्ण' का नाम बाद में, 'राधा' का नाम पहले लेते हैं, जैसे- 'राधाकृष्ण' और 'सीताराम'। इसी तरह देवी के रूप में हम बल, शक्ति, विद्या, धन आदि के प्रतीक को स्वीकार करते हैं मतलब धार्मिक रूप से नारी को समाज में काफी मान-सम्मान प्रदान किया गया है। वैदिक युग में वर्णाश्रम की स्थापना समाज में व्यवस्था को बनाए रखने के लिए की गई थी। उस समय इन सब का आधार सिर्फ कर्म था परंतु समय परिवर्तन के साथ-साथ इसका आधार कर्म न होकर जन्म से माना जाने लगा। परिणामस्वरुप समाज में भेदभाव उत्पन्न होने लगा। इसी तरह जैसे-जैसे सामाजिक रुढियां बढ़ती गई वैसे-वैसे समाज में नारी का स्थान भी गिरता चला गया। महादेवी वर्मा कहती है कि **"धर्म का शासन हमारे जीवन पर वैसा ही प्रयासहीन होना चाहिए जैसी हमारी इच्छा-शक्ति का आचरण पर होता है। सप्रयास धर्म जीवन का सबसे बड़ा अभिशाप है। न वह जीवन की गहराई तक पहुंच सकता है और न ही उसकी प्रत्येक शिरा में व्याप्त होकर उसे रसमय ही कर सकता है।"**(अलका, पृ. 68) स्त्री के रूप में देवियों की पूजा करने के बावजूद भी भारत में स्त्री को भोग्या के रूप में देखा जाता रहा है। वर्तमान परिप्रेक्ष्य में धर्म के प्रति बदलते दृष्टिकोण को अभिव्यक्त करते हुए कमला सिंधवी कहती है कि **"आज बदलते युग के साथ सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक और पारिवारिक मान्यताएं बदल रही है। इसलिए यदि धार्मिक मान्यताएं इसका अपवाद ना हो सके तो कोई आश्चर्य नहीं। आज का युग अंतर्राष्ट्रीयता का युग है और इस युग के साथ कल और आज की धार्मिक मान्यताओं को समझौता करना ही पड़ता है। इसका यह तात्पर्य नहीं कि आज की नई पीढ़ी की धार्मिक आचारों, व्रत, उपवास में कोई श्रद्धा या निष्ठा नहीं रही, या कि उनका मानसिक धरातल आध्यात्मिक पहलू को बिल्कुल स्वीकार नहीं करना चाहता, या कि ईश्वर की भक्ति में उनका विश्वास नहीं रह गया है।"**(अलका, पृ. 64-65) स्त्रियां धर्म को व्यक्तिगत स्तर पर उतारने में विश्वास करती है। उन्होंने यह धारणा बना ली है कि स्त्री का धर्म है पतिव्रता धर्म का पालन करना, चाहे वह उसे मारता-पीटता ही क्यों ना रहे, वह उसे बेसहारा अकेले दर-दर भटकने पर मजबूर ही क्यों ना करें ,तब भी उनका धर्म है पति की सेवा करना। धर्म की आड़ में हमेशा नारियों को शोषण किया गया है। इस बात से कोई इंकार नहीं कर सकता कि आज भी हमारे भारतीय समाज में

यह धारणा बनी हुई है कि पति से पहले पत्नी को खाना नहीं खाना चाहिए अर्थात् जब पति खाना खा ले, उसके बाद ही पत्नी को खाना खाना चाहिए। बेशक पति बाहर से खाना खाकर आ जाए और पत्नी घर में भूखी बैठी उनका इंतजार करती रहे। इंग्लैंड के एक बुद्धिजीवी जॉन स्टुअर्ट मिल ने अपनी पुस्तक 'द सब्जेक्शन ऑफ वूमेन' में लिखा है कि- **"आज के युग में विवाह ही एकमात्र ऐसा क्षेत्र है जहां दास प्रथा अब भी मौजूद है। हमारे विवाह कानून के माध्यम से पुरुषगण एक मनुष्य के ऊपर पूरा अधिकार प्राप्त करते हैं। हासिल करते हैं मालिकाना हक और हुकूमत। हासिल करते हैं तलाक और बहु विवाह जैसी अश्लीलता की पूरी छूट है।"**(नसरीन, पृ. 44) पिता के घर रहते हुए पति के घर जाने के लिए उसका निरंतर प्रशिक्षण चलता रहता है और पति के घर पर पति के मुंह से सिर्फ एक शब्द का तीन बार बोलने से उसका घर टूट जाता है। फिर उसके लिए अपने माता-पिता और पति दोनों में से कोई घर नहीं रहता। जन्म के बाद से ही नारी को पराया धन कहकर संबोधित किया जाता है। इस वजह से ना तो उसको अपना समान उत्तराधिकार प्राप्त होता है और ना ही उसको विवाह कानून के माध्यम से सामाजिक समरसता।

भारत में नारी विषयक होने वाले परिवर्तनों में 19वीं शताब्दी का विशेष महत्व है। स्त्री की दशा को सुधारने के लिए प्रारंभिक शुरुआत अंग्रेजों के भारत आगमन के साथ हुई थी। जिस समय अंग्रेज भारत आए थे उस समय भारत में सती प्रथा, बाल विवाह आदि जैसी कुप्रथाएं समाज में फैली हुई थी। स्वामी विवेकानंद का मानना था कि जिस देश में स्त्रियों का सम्मान नहीं होता, वह देश कभी भी तरक्की नहीं कर सकता। वह कहते हैं कि सर्वप्रथम स्त्री जाति को शिक्षित करना आवश्यक है। स्त्री शिक्षा के आदर्श की जो परिकल्पना स्वामी विवेकानंद जी के मन में थी, उसे उनकी विदेशी शिष्या भगिनी निवेदिता ने साकार किया था, काफी प्रयास करने के बाद और विभिन्न बाधाओं का सामना करते हुए बाग बाजार में उन्होंने एक बालिका विद्यालय की स्थापना की जो 'रामकृष्ण शारदा मिशन भगिनी निवेदिता' बालिका विद्यालय के नाम से प्रसिद्ध हुआ। ज्योतिबा फुले की पत्नी सावित्रीबाई फुले ने भी महिलाओं के विकास के लिए स्कूल खोलें। इस बारे में ज्योतिबा फुले ने कहा था कि **"गुलामी की यात्रा को जो सहता है वही जानता है और जो जानता है वही पूरा सच कह सकता है। सचमुच राख ही जानती है जलने का अनुभव कोई और नहीं।"**(अलका, पृ. 29) कांग्रेस ने भी महिला की भागीदारी पर बल दिया था। सन् 1917 में एनी बेसेंट कांग्रेस की प्रथम महिला अध्यक्ष बनी थी और उसके बाद सन् 1925 में सरोजिनी नायडू और सन् 1949 में नलिनी सेन गुप्ता इसकी अध्यक्ष बनी थी। कमला देवी चट्टोपाध्याय ने कहा था कि सिर्फ सहानुभूति से महिलाओं का विकास होना संभव नहीं है। उसके लिए उन्हें जमीनी लड़ाई लड़नी होगी। भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन एक तरह से महिलाओं की स्वतंत्रता का भी आंदोलन था। 19वीं शताब्दी में समाज सुधारकों ने नारियों की स्थिति पर काफी चिंतन किया। सुधार आंदोलन में स्त्री की अस्मिता और अस्तित्व को केंद्र में रखा गया। लॉर्ड विलियम बैंटिक, ईश्वरचंद विद्यासागर, महात्मा ज्योतिबा फुले, राजा राममोहन राय, पंडित रंमाबाई, राजकुमारी अमृत कौर, अरुणा आसफ अली, बाबा साहब डॉक्टर भीमराव अंबेडकर, महात्मा गांधी जैसे प्रसिद्ध विद्वानों ने भारतीय समाज की जड़ व्यवस्था पर दलित एवं स्त्री तथा मानवता के खिलाफ हो रहे अत्याचारों का खुलकर विरोध

किया था। समाज सुधारक महात्मा ज्योतिबा फुले ने सबसे पहले अपनी पत्नी को पढ़ाया-लिखाया और उन्हें शिक्षित किया फिर उन्होंने पुणे में कन्या विद्यालय की स्थापना की थी। सावित्रीबाई फुले विद्यालय की प्रथम शिक्षिका बनी थी। स्वतंत्रता संघर्ष के दौरान स्त्रियों ने बड़ी संख्या में आंदोलन में भाग लिया था। वैश्विक स्तर पर जब लिंग भेद के खिलाफ आवाज उठाई जा रही थी तब भारत में भी स्त्री विमर्श बहुत तेजी से चल रहा था। वार्जीनिया वुल्फ ने कहा- **"औरत होने के नाते मेरा कोई देश नहीं है।"**(नीलम, पृ. 32-33) इसी तरह लेखिका विभा रानी लिखती है कि- **"क्या परंपरा यही है कि हमारी दादी ने सात साल की उम्र में साड़ी पहननी शुरू की तो अपनी बेटियों को भी सात साल की उम्र में साड़ी पहनाकर खुश हो लिया जाए। यह कैसी परंपरा है कि हमें सर झुका कर जीने के लिए विवश कर दिया गया है।"**(नीलम, पृ. 33) भारत के समाज सुधारकों में राजा राममोहन राय का नाम विशेष महत्वपूर्ण रखता है। नवजागरण हिंदी क्षेत्र की तुलना में बंगाल और महाराष्ट्र में सबसे पहले आया था। राजा राममोहन राय ने यह बात सबसे पहले महसूस की थी कि महिलाओं की स्थिति में सुधार लाना बहुत ज्यादा आवश्यक है। इसके लिए उन्होंने बहु विवाह का विरोध किया और स्त्री शिक्षा का जोरदार समर्थन किया था। दूसरी ओर महाराष्ट्र में ज्योतिबा फूले रूढ़ परंपराओं का विरोध करते हुए नजर आ रहे थे। उन्होंने सती प्रथा, बाल विवाह का विरोध करते हुए विधवा विवाह समर्थन किया था। सन् 1850 के आरंभ में ईश्वरचंद विद्यासागर ने बंगाल में विधवा विवाह की समस्या को उठाया था। उन्होंने इस समस्या पर रूढ़िवादी हिंदुओं से संस्कृत भाषा में वाद-विवाद भी किया था और इस वाद-विवाद को क्षेत्रीय भाषा के प्रेस मीडिया ने प्रकाशित करना शुरू कर दिया था। उन्होंने अफसर की सलाह से 1855 ई. में गवर्नर के पास विधवा पुनर्विवाह के लिए एक याचिका दायर की। फिर विधवा पुनर्विवाह का बिल 1856 ई. में पास हो गया था। इसी तरह समाज में स्त्री आंदोलन की शुरुआत 19वीं शताब्दी के आखिरी दशकों में हुई थी जिसमें पंडिता रमाबाई, आनंदीबाई जोशी, स्वर्ण कुमारी देवी जैसी स्त्रियों ने अपने घरों में पुरुष प्रधान समाज के थोपे गए बंधनों को तोड़कर ऊंची शिक्षा के लिए विदेश गई और लौटकर उन्होंने भारत में स्वतंत्र संगठन संगठित करने शुरू किए। 1886 ई. में स्वर्ण कुमारी देवी ने 'लेडिज ऐसोसिएशन' की स्थापना की और वहीं सन् 1882 में पंडिता रमाबाई ने स्त्री शिक्षा और रोजगार के लिए पुणे में 'शारदा सदन' की स्थापना की। डॉ. अंबेडकर का मानना था कि किसी भी देश की प्रगति महिलाओं की प्रगति से मानी जाती हैं। इस तरह समकालीन समय में स्त्री विमर्श एक महत्वपूर्ण मुद्दा है। इस बात से कोई इंकार नहीं कर सकता कि भारतीय समाज की पितृसत्तात्मक संरचना ने स्त्रियों की सहभागिता और सशक्तिकरण के रास्ते में बाधा उत्पन्न की है। डॉ. अंबेडकर अपने एक वक्तव्य में कहते हैं कि **"मैं किसी समाज की प्रगति का अनुमान इस बात से लगाता हूँ कि उस समाज की महिलाओं की कितनी प्रगति हुई है।"**(नीलम, पृ. 70) वर्तमान समाज में स्त्रियों में धीरे-धीरे जागृति आ रही है। अब उनकी रूढ़िवादी मानसिकता में परिवर्तन आने लगा है और आज प्रत्येक क्षेत्र में महिलाओं की भूमिका महत्वपूर्ण होती जा रही है।

वर्तमान समय में हुस्न तबस्सुम निहां हिंदी साहित्य लेखन में एक चर्चित नाम है। अभी तक इनके चार कहानी-संग्रह तीन कविता-संग्रह, तीन उपन्यास, एक शोध पुस्तक तथा तीन संपादित पुस्तकें भी प्रकाशित हो

चुकी है। इनकी कविताएं, कहानियां, उपन्यास और लेख आदि देश-विदेश में काफी सम्मान प्राप्त कर चुके हैं। शोधार्थी आज भी उनके लेखन कार्य पर शोध कार्य कर रहे हैं। उनकी सबसे खास बात यही है कि वह जब खुद शोध कार्य कर रही थी तब ही काफी शोधार्थी उनके लेखन पर शोध कर रहे थे। उनकी सबसे पहली किताब 'मौसम भर याद' आई जोकि एक कविता संग्रह है, सन् 2008 में छपा, इसमें लगभग 80 कविताएं संकलित हैं। इन्होंने साहित्य क्षेत्र में काफी रचनाएं की जोकि निम्नलिखित है:-

**काव्य संग्रह-** इनके तीन काव्य संग्रह है जो निम्नलिखित है:-

1) मौसम भर याद (80 कविताएं)
2) चांद-बा-चांद (150 कविताएं)
3) वादियां (70 कविताएं)

**कहानी संग्रह:-** इनके चार कहानी-संग्रह है:-

1) नीले पंखों वाली लड़कियां (2012)
2) नरगिस फिर नहीं आएगी (2014)
3) सुनैना…सुनो..ना (2019)
4) गुलमोहर गर तुम्हारा नाम होता (2022)

**उपन्यास:-** इनके तीन उपन्यास है:-

1) फिरोजी आंधियां
2) विषसुंदरी उर्फ़ सूरज भाई का तमाशा
3) कामनाओं के नशेमन

**शोध पुस्तक:-** धार्मिक सहअस्तित्व और सूफीवाद

**संपादित पुस्तकें :-**

1) कविताओं में राष्ट्रपिता
2) आंबेडकरवाद: दिशा एवं दृष्टि
3) आदिवासी विमर्श के विभिन्न आयाम
4) ना महकने का दंड

**पुरस्कार एव सम्मान:-** हुस्न तबस्सुम निहां को अब तक उत्कृष्ट लेखन के लिए सम्मान और बहुत सारे पुरस्कारों से भी सम्मानित किया जा चुका है। इन्हें उनके गृह जनपद बहराइच में जन्मस्थली नानपारा में भी सम्मानित किया जा चुका है। कविता संग्रह 'मौसम भर याद' का विमोचन सन् 2008 में हुआ और वही 'नीले पंखों वाली लड़कियां' कहानी-संग्रह का विमोचन सन् 2012 में हुआ। उनकी पुस्तक 'मौसम भर याद' का विमोचन महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा के पूर्व कुलपति श्री विभूति नारायण दास की उपस्थिति में हुआ। यह सिर्फ लेखिका के लिए ही नहीं बल्कि नानपारा शहर के लिए भी सौभाग्य का पल था कि इतनी बड़ी शख्सियत वहां चलकर आई थी। उस समय कार्यक्रम का संचालन करते हुए दैनिक जागरण के संवाददाता स्वर्गीय रामकुमार द्विवेदी जी ने लिखा था कि- **"नानपारा के इतिहास में यह पहला अवसर है जब किसी पुस्तक का विमोचन हो रहा है।"** (ज़मीर, पृ. 8) इस तरह नानपारा के लिए यह एक ऐतिहासिक

दिन था। आगे चलकर इनका एक उपन्यास 'फिरोजी आंधियां' का विमोचन नेपाल के बांके जिले में तुलसी महोत्सव के अवसर पर हुआ। इस कार्यक्रम में नेपाल और भारत के सिवा कई अन्य देशों के लोगों ने भी अपनी उपस्थिति दर्ज करवाई थी। इसके अलावा इन्हें विभिन्न संस्थाओं द्वारा भी पुरस्कृत और सम्मानित किया जा चुका है। इन्होंने विभिन्न विदेशी साहित्यिक यात्राएं भी की है जिनमें नेपाल, श्रीलंका, मॉरीशस और कुवैत शामिल है।

इनकी 'नीले पंखों वाली लड़कियां' कहानी-संग्रह एक चर्चित कहानी संग्रह है। इस कहानी-संग्रह में 18 कहानियां है- 'ये बेवफ़ाईयां', 'सूने समंदर और किनारे', 'ये डूबना साहिलों पर', 'नीले पंखों वाली लड़कियां', 'चकबंदी', 'खाविंद दा', 'अवैध सुख', 'गरज यह कि दुर्ग ढह चुका', 'ऑनर किलिंग', 'अब भी एक गांव में वह रहती है', 'विखंडित होने की ऋतु', 'थमते-थमते सांझ हुई', 'नीम अंधेरे में', 'बताओ ना अंकल', 'और दिन पलाश हुए', 'झरने', 'नीला मेम साहब', 'झील की तरह'।

इनकी कहानी **'ये बेवफाइयां'** काफी लंबी और एक सशक्त कहानी है। यह कहानी पूरी तरह से मुस्लिम परिवेश पर लिखी गई है। यह कहानी तीन तलाक के मुद्दे पर आधारित है। इस कहानी में जीनत एक अधेड़ उम्र की महिला है। तनवीर अहमद उसका शौहर है। तनवीर अहमद अपनी पत्नी जीनत को शादी के चालीस साल बाद तलाक दे देता हैं, वह भी क्यों?, क्योंकि उसकी पत्नी उसको किसी कमसिन उम्र की लड़की के साथ रंगेहाथ पकड़ लेती है। इससे पहले वह अपनी पत्नी को बहुत प्यार करता था और वह उसे बरकती कह कर पुकारता था। क्योंकि उसका मानना था कि उसकी पत्नी के घर में आते ही दौलत बरसने लगी। तनवीर जितनी जी-तोड़ कर मेहनत करता था। उसकी पत्नी भी उसकी आमदनी को तिनका-तिनका संजोकर रखती थी। वह अपने शौहर के कंधे से कंधा मिलाकर उसके ढाबे को एक थ्री स्टार जैसे होटल में बदल देती है। अपने बच्चों को भी उच्च शिक्षा दिलवाकर उन्हें उनकी मंजिल तक पहुंचा देती है और बेटियों की शादी भी एक अच्छे घर में करवा देती है। वह अपनी पत्नी से खुश होकर अपनी आमदनी का एक हिस्सा हर महीने उसके बैंक खाते में जमा करता चला गया। ऐसा करते-करते उसके बैंक खाते में दो करोड़ रुपये जमा हो चुके थे। लेकिन वक्त के साथ-साथ उसके पति का घर में समय देना कम होता चला गया और वह एक दिन एक बुर्कापोश महिला के साथ घर में आ धमकता है जिसका जीनत काफी विरोध करती है। जीनत इस बात को बर्दाश्त नहीं कर पाती और वह अपने पति के मुंह पर एक थप्पड़ मार देती है। तनवीर अहमद इस अपमान को बर्दाश्त नहीं कर पाता और वह उसी समय उसे तीन तलाक दे देता है। वह कहता है कि **"हमारे ऊपर चार शादियां सुन्नत है... मैं मर्द हूं..मर्द"**(निहां, पृ. 12) उसके द्वारा यह बात कहा जाना इस बात का प्रमाण है कि स्त्रियों की बुरी स्थिति का कारण धर्म भी है। बात सिर्फ तलाक तक ही खत्म नहीं होती, तलाक देने के बाद जब उसे इस बात का ध्यान आता है कि उसके खाते में उसने दो करोड़ रुपये जमा कर दिए हैं तो उसे अपनी गलती का एहसास होता है। उसे अपनी पत्नी से प्रेम नहीं होता बल्कि इस बात का अफसोस होता है कि उसने उसके खाते में दो करोड़ रुपये जमा करने के बाद तलाक दे दिया। वह इतना गिरा हुआ है कि वह उस दो करोड़ रुपये को वापस प्राप्त करने के लिए अपने दोस्त अब्दुल अब्बास से जीनत से शादी करने के लिए कहता है। यह एक

तरह का हलाला निकाह होता है। इस निकाह में अगर पुरुष अपनी पत्नी को तलाक दे देता है और उसे दोबारा अपनी पत्नी से विवाह करना होता है तो उस पत्नी को किसी गैर मर्द के साथ निकाह करना पड़ता है। यह सिर्फ विवाह तक ही सीमित नहीं होता बाकायदा उसे उसके साथ हम-बिस्तर होना पड़ता है। तभी वह अपने पहले पुरुष के पास वापस आ पाती है। इस तरह से यह हलाला निकाह जैसी प्रथा स्त्री के आत्मसम्मान को ठेस पहुंचाती है। जब जीनत तलाक के बाद अपने भाई के घर वापस आती है तो बाद में तनवीर के दोस्त के साथ वह निकाह कर लेती है। इस निकाह के लिए भी तनवीर ही अब्बास को तैयार करता है ताकि वह उसके साथ निकाह करके उससे दो करोड़ रुपये वापस ले सके लेकिन यहां भी पाशा उल्टा पड़ जाता है। अब वह जीनत को तलाक देने से मना कर देता है। वह ऐसा इसलिए करता है क्योंकि उसके घर में एक स्त्री के आने से उसके घर का माहौल बदल चुका था। उसके बच्चे को उसकी मां और उसे अपने लिए पत्नी मिल चुकी थी। जीनत अपने पहले पति को रुपये वापस नहीं करना चाहती थी लेकिन अपनी घर की खुशियों को ध्यान में रखते हुए वह दो करोड़ रुपये उसके मुंह पर दे मारती है। इसी तरह लेखिका जीनत पात्र के द्वारा यह कहलवाती है कि मर्द जायदाद बनाता है और औरत घर बनाती है फिर भी मर्द औरत की कदर नहीं करता। इस तरह यह कहानी पितृसत्तात्मक समाज के लिए एक स्पष्ट चेतावनी देता है कि दौलत इंसान का सब कुछ जला देती है, औरत उम्र-भर अंधेरे में रहकर दूसरों को रोशनी देने के लिए खुद जलती रहती है, औरत मर्द की जागीर नहीं है और वह भी इंसान होती है। इसी तरह मर्दों की छल की एक और कहानी है जिसका नाम है **'खाविंद दां'**। इस कहानी में सितारा नाम की मुस्लिम औरत की दयनीय स्थिति को दिखाया गया है। वह 40 साल की उम्र में तीन शौहरों की बीवी और दो बच्चों की मां बन चुकी होती है। सितारा को पहले करीम टेंपो नाम के एक व्यक्ति से इश्क होता है परंतु उसके भाई उसकी शादी कहीं और करवा देते हैं। बच्चा ना होने की वजह से उसका पति उसको तलाक दे देता है और फिर उसकी शादी उसके परिवार वाले एक तांगे वाले रजाक के साथ करवा देते हैं जो उसकी बीती बातों को ध्यान में रखते हुए उससे झगड़ा करता है और उसे फिर तलाक दे देता है। इस बीच उसकी एक लड़की भी हो जाती है। तीसरा निकाह उसका जमील कबाड़ी नाम के व्यक्ति से होता है, जहां पर उसकी लड़की के साथ अच्छा व्यवहार नहीं किया जाता। इस वजह से वह अपने आत्मसम्मान को ध्यान में रखते हुए खुद अपने शौहर को तलाक दे देती है। इस तरह इस कहानी में स्त्री की ऐसी स्थिति को दिखाया गया है जो एक जगह स्थिर नहीं है। तलाक-तलाक के नाम पर उसे एक जगह से दूसरी, दूसरी से तीसरी जगह पर भटकते हुए दिखाया गया है। इस कहानी में यह भी बताने का प्रयास किया गया है कि तलाक का हक सिर्फ मर्द को होता है। हर परिस्थिति में स्त्री को ही समझौता करना पड़ता है। मर्द कहीं भी समझौता नहीं करता, अगर उसका मन भर चुका होता है तो वह तलाक दे देता है। तलाक जैसी प्रथा ने स्त्री को हमेशा से ही उत्पीड़ित किया है। मुस्लिम समुदाय में स्त्रियों की हालत की वजह एक तरह से समाज भी है। समाज ही स्त्री को हमेशा पराया धन कहकर उन्हें अपने आगे घर में जाने के लिए प्रशिक्षित करता आया है। इस कहानी में जब सितारा जमील कबाड़ी को तलाक देकर अपने घर आती है तब उसकी मां उससे कहती है, **"बिटिया ससुराल की रोटी खाना लोहे के चने चबाने बराबर है, गुर्जर करने के लिए मर्दों की लटी सुननी ही पड़ती है। वह**

**जो कहें चार बात सिर झुकाकर सुन लिया कर। बकिया तलाक तो हुआ ही नहीं क्योंकि जमील ने तो तलाक दिया ही नहीं।"**(निहां, पृ. 65) कहने का मतलब है कि तलाक का हक सिर्फ मर्द को है अगर वह तलाक देगा तभी तलाक होगा। स्त्री की तलाक का कोई मतलब नहीं है। इस कहानी में हम देख सकते हैं कि किस तरह स्त्री को तलाक के माध्यम से उत्पीडित किया गया है। वह अपने आत्मसम्मान को बचाने के लिए अपने पति को तलाक भी देती है तो भी उसके घर वाले और समाज उसे वापस उसी पति के पास जाने के लिए मजबूर करते हैं। इसी का विद्रोह करते हुए सितारा अपनी मां को उल्टा जवाब देती है और कहती है कि **"यह सारी करतूत मर्दों की है अम्मा कि तमाम नाजायज रिवायतें हम पर थोप दी हैं और सारे हक़ मर्दों के हिस्से के और सारे फरायज़ औरत के हिस्से के। औरत का फर्ज है कि मर्द की दुलत्ती चुपचाप सहती रहे वरना गुनहगार। मर्द को हक मिला है कि वह मन भर औरत को रौंदें। खुदा ने हमारे साथ दुरूखा बर्ताव किया। मर्द की तकदीर उसकी पेशानी पर लिखी और औरत की उसके जिस्म पर। खुदा ने अपनी मखलूक में हमें कौन सा दर्जा दिया है.. ना हमारी गिनती मवेशियों में है, ना इंसानों में।"**(निहां, पृ. 65-66) इसी तरह एक और कहानी **'ये डूबना साहिलों पर'** की नसीमा घर से भाग जाती है। वह किसी लड़के के साथ नहीं भागती बल्कि खुद के आत्मसम्मान को बचाने के लिए भागती है। कहने के लिए आज का युग आधुनिक हो चला है लेकिन वर्तमान समय में लोगों की सोच आज भी रूढ़िवादी है। इस कहानी में तमाम तरह के प्रश्न उसके घर वालों और समाज के द्वारा उठाए जाते हैं कि कब, कैसे, कहां और क्यों? किसके साथ भाग गई? बारात दरवाजे पर खड़ी थी और वह घर से भाग गई थी। समाज ने सिर्फ तंज कसे लेकिन उसकी परिस्थितियों को किसी ने न देखा और न समझा। नसीमा के घर वाले उसका विवाह एक 55 साल के बूढ़े व्यक्ति से करवाने जा रहे थे। अब सोचने की बात यह है कि एक कम उम्र की लड़की एक बूढ़े व्यक्ति के साथ विवाह कैसे कर सकती है? हालांकि नसीमा एक पढ़ी-लिखी रिसर्च स्कॉलर है और यहां तक कि एक उम्दा शायरा भी है। लेकिन अफसोस इस बात का है कि पढ़ी-लिखी लड़कियों को समाज हमेशा संदेह की दृष्टि से देखता है। वैसे भी मर्दों की दुनिया सिर्फ औरत को नहीं चाहती बल्कि उन्हें गूंगी-बहरी गाय जैसी लड़कियां चाहिए जो उनका विरोध ना करें बल्कि उनके तलवों को चाटती रहे। इसलिए नसीमा अपनी जिंदगी को अच्छे से जीने के लिए घर छोड़कर भाग जाती है परंतु इसका खामियाजा भी उसकी बहन सुगरा को भुगतना पड़ता है।

पहले ही बताया जा चुका है कि जहीन और सुंदर लड़कियों को समाज संदेह की दृष्टि से देखता है। बाप-भाई के द्वारा उसकी बहन सुगरा से नसीमा का पता पूछा जाता है परंतु उसे इस बात की कोई जानकारी नहीं होती। फिर भी वह उसकी बात पर भरोसा नहीं करते और उसे इतना मारते-पीटते हैं कि अंत में वह मर जाती है। ऐसा नहीं है कि वह सुगरा को इसलिए मारते हैं कि वह नसीमा का पता बता दे। हालांकि वह नसीमा का गुस्सा उसकी बहन सुगरा पर उतारते हैं। उन्हें अपनी बेटियों से कोई मतलब नहीं। उन्हें सिर्फ अपनी इज्जत और झूठी प्रतिष्ठा से मतलब होता है। अगर उनकी बहू-बेटियों की तारीफ कोई गैर मर्द भी कर दे तो ऐसा लगता है कि उनकी नाक काट दी गई है। इतना ज्यादा अमानवीय व्यवहार अगर कोई करें तो लड़कियां बगावत न करे तो क्या करें? इस समय समाज लड़कियों को बचाने के लिए आगे नहीं आता बाकायदा उनके उत्पीड़न में

शामिल होता है। जब उसकी शादी 55 साल के बूढ़े से करवाई जा रही थी तो किसी ने कुछ नहीं कहा और वहीं जब नसीमा भाग गई तो समाज ने उसे काफी दुत्कारा। इससे पता चलता है कि आज के आधुनिक युग में भी हमारा समाज बिल्कुल ही सुन्न है। ऐसा लगता है की लड़कियों के जीवन पर सिर्फ उनके मां-बाप का ही अधिकार है। लड़कियों का खुद पर कोई अधिकार नहीं। इस कहानी में जब सुगरा का पिता उसको मारते हैं और तब उसकी पत्नी द्वारा जब इसका विरोध किया जाता है तब वह कहते हैं कि **"कल यह भी यही करने वाली है। औरतों का कभी कहीं भरोसा किया जाता है।"**(निहां, पृ. 44) सोचने की बात तो यह है कि 'ये बेवफाईयां' कहानी में भी हम पढ़ चुके हैं की मर्द औरत को दगा देता है तो हम यह कैसे कह सकते हैं कि औरत का कहीं भरोसा नहीं किया जाता। इस तरह से कह सकते हैं कि उसके पिता द्वारा यह कहा जाना अत्यंत ही गलत है क्योंकि मर्द का भी भरोसा नहीं किया जा सकता है। हद तो यह है कि अगर किसी स्त्री को पढ़ना है तो उसे अपने पिता की इजाजत से पढ़ना होगा। उसकी अपनी इच्छा का कोई महत्व नहीं होता। इसी तरह 'नीम अंधेरे में' कहानी में भी यही होता है। इस कहानी में भी मुस्लिम समुदाय में स्त्रियों के साथ होने वाले व्यवहार को दिखाया गया है। इसमें जहरा और विशाल नाम के दो पात्र हैं जो एक दूसरे को बहुत प्रेम करते हैं। परंतु विशाल हिंदू धर्म से है जिस वजह से उसका विवाह जहरा से ना हो सका। विशाल की मां अपने बेटे का विवाह मुस्लिम लड़की के साथ करने को भी तैयार थी लेकिन लड़की के मां-बाप को यह बात गवारा नहीं थी कि उसकी बेटी अपने मनपसंद लड़के से विवाह करें। आखिर जहरा का विवाह उसके मां-बाप एक अधेड़ उम्र के व्यक्ति के साथ कर देते हैं जो उसे इतना मारता-पीटता है कि उसकी जिंदगी को दोजख बनाकर रख देता है। इनकी **'नीलें पंखों वाली लड़कियां'** कहानी की मुख्य पात्र रजिया है जो एक विद्रोही प्रवृत्ति की लड़की है। रजिया की दोस्त रानी को एक लड़के से प्रेम हो जाता है लेकिन वह अपने घर वालों के चलते अपने प्रेमी को छोड़ देती है और घर वालों की मर्जी से आबिद नाम के लड़के से विवाह कर लेती है जो उसका लात-घुसो के साथ स्वागत करता है। अंत में वह अपने विवाह से और अपने पति से तंग आकर खुद भी जहर खा लेती है और अपने पति आबिद को भी जहर खिला देती है वहीं दूसरी तरफ उसकी दोस्त शीबा अपने प्रेमी से भाग कर शादी कर लेती है और अपना जीवन खुशी से बिताती है। इसलिए रजिया अपने ही तरह की एक लड़की से प्रेरणा लेकर स्वतंत्र तरीके से जीवन जीने के लिए फैसला लेती है और कहती है कि वह अपनी जिंदगी के साथ कोई समझौता नहीं करेगी। वह समाज की परवाह किए बिना रोहित के साथ भाग जाती है और वह अपने प्रेम के लिए समाज के नियमों को तोड़ देती है। आगे उनकी कहानी **'गरज ये कि दुर्ग ढह चुका'** में इन्होंने मध्यवर्गीय स्त्री जीवन को दिखाया है। मां-बाप अपनी बेटी की बढ़ती उम्र को देखकर किस तरह चिंतित होते हैं?, यह इस कहानी में दिखाया गया है। इस कहानी की पात्र मीणा अपने मां-बाप से संघर्ष करती है कि वह उसे नौकरी करने दे परंतु उसके पिता यही कहते हैं कि नौकरी करना आसान बात नहीं है। जबकि उसके पिता की पहुंच बहुत आगे तक थी। वह लोगों को नौकरियां दिलवाते रहते थे। परंतु अपनी बेटी के मामले में काफी सख्त थे। उसके पिता का मानना था कि नौकरी करने से इज्जत पर आंच आती है। यहां तक कि वह यह भी कहते हैं कि नौकरी करने के लिए अधिकारियों या मंत्रियों के पास सोना पड़ता है। इस बात से हम अंदाजा लगा सकते

हैं कि उसके पिता खुद इस प्रवृत्ति के थे। वह दूसरे लोगों को नौकरियां ही इस शर्त पर दिलवाते थे। मां-बाप ने मीणा को आत्मनिर्भर बनने से रोका। मीणा का एक भाई भी था लेकिन वह कोई काम नहीं करता था। उन्होंने बेटे को जितनी आजादी दी उतनी अगर अपनी बेटी को दी होती तो काश उसे सामाजिक व्यवस्था और भ्रष्टाचार का शिकार नहीं होना पड़ता। बाप को लकवा मार जाने के बाद उसे नौकरी करनी पड़ी। काबिल होने के बाद भी उसे नौकरी आसानी से नहीं मिली। जिस शरीर को उसकी मां ने 30 साल तक बड़ी शालीनता से संभाला। आखिर में वह उसे संभाल ना सकी। योग्यता होने के बावजूद भी उसे नौकरी प्राप्त करने के लिए अपने शरीर से समझौता करना पड़ता है। इसीलिए वह अपने आपको तसल्ली देते हुए कहती भी है कि **"हर मां को एक न एक दिन किसी पुरुष के हाथों बेटी सौपनीं ही पड़ती है। वक्त कहता है 'स्वीकारो इसे' और आत्मसात कर लो।"** (निहां, पृ. 52) इस तरह इस कहानी में हम यह कह सकते हैं कि गरीब लड़कियों को नौकरी आसानी से नहीं मिलती। उन्हें हर जगह समझौता करना पड़ता है और हर जगह अपनी विपरीत परिस्थितियों से लड़ना पड़ता है। मीणा के मां-बाप ने उसे वक्त रहते आत्मनिर्भर नहीं बनने दिया और आखिर में उसे आत्मनिर्भर बनने के लिए ऐसा कठोर कदम उठाना पड़ता है। लेखिका की एक अन्य कहानी **'अब भी एक गांव में रहती है वह'** समाज में प्रचलित अंधविश्वासों को उजागर करती है। यह कहानी शिप्रा और समीरा नाम की लड़कियों की मानसिक गतिविधियों को प्रस्तुत करती है। इसमें मां-बाप अपने लड़कियों के लिए दौलतमंद लड़का ढूंढने की वजह से उसका विवाह समय पर नहीं करवा पाते और इससे लड़कियों का मानसिक संतुलन खराब हो जाता है। जिससे परिवार वालों को लगता है कि उन पर कोई ऊपरी शक्ति काम कर रही है और इसी वजह से वे अपने लड़कियों के साथ दुर्व्यवहार करते हैं। लेखिका ने इस कहानी में सिर्फ मुस्लिम परिवार की लड़की के बारे में ही नहीं लिखा है बकायदा उन्होंने हिंदू धर्म की लड़की के बारे में भी लिखा है। कहने का मतलब है कि उन्होंने स्त्री जीवन के बारे में लिखा है। इस कहानी में समीरा मुस्लिम धर्म से है और शिप्रा हिंदू धर्म से। इसमें दोनों लड़कियों का परिवार रूढ़िवादिता और परंपराओं की वर्जनाओं से ग्रस्त है। लड़कियों के साथ बिल्कुल भी उचित व्यवहार नहीं किया जाता। समीरा एक जगह कहती भी है कि **"अब्बू को घर की गिरते दीवारों से कोई सरोकार नहीं, ना वह घर में टिकते हैं, ना उनके सामने बातें आती है। वैसे भी मुसलमानों की आधी जिंदगी परलोक सुधारने में निकल जाती है।"**(निहां, पृ. 103) वह ऐसा इसीलिए कहती है क्योंकि घर में कोई भी आए-जाए, किसी को उससे मतलब नहीं होता जिस वजह से वह खुद में कुंठित महसूस करती है और न उसके मां-बाप उसकी फिक्र करते हैं। घर का सारा काम उसी से करवाया जाता है। बार-बार उसे पीर-फकीरों के पास ले जाया जाता है। दूसरी तरफ शिप्रा नाम की लड़की है जोकि हिंदू परिवार से आती है। उसकी स्थिति ऐसी है कि वह जब भी सजती-संवरती तो उसे घर वालों की ओर से ताने दिए जाते। दौलतमंद लड़का ढूंढने की वजह से शिप्रा की शादी भी समय पर नहीं हो पाती। वह अब अधेड़ उम्र की अवस्था में पहुंच चुकी होती है। खुद की ख्वाहिशों को पूरा करने के लिए वह समीरा की तरह जिंदगी जीने का फैसला लेती है। शिप्रा खुद बताती है कि उसे अपनी ही उपेक्षाओं और तिरस्कारों ने बहुत हद तक तोड़ दिया। लड़कियों के मां-बाप नहीं होते। उनका सिर्फ भाग्य होता है, नसीब है तो मां-बाप भी साथ होते हैं और

परिवार भी अच्छा मिलता है। इस कहानी में परिवार में अंधविश्वास इस हद तक बढ़ जाता है कि एक पिता किसी साधु-संत या मौलवी की बातों में आकर अपनी बेटी के साथ बलात्कार करने को भी तैयार हो जाता है, यह कहकर कि कामाख्या देवी तृप्ति चाहती है। उसकी मां के द्वारा इस बात का विरोध भी नहीं किया जाता है। वहीं दूसरी तरफ समीरा की हालत भी वही होती है। उसके मां-बाप भी किसी मौलवी पर भरोसा कर उसे कहीं दूर छोड़ आते हैं जिसका अता-पता नहीं मिलता। इस कहानी में अंधविश्वास का विरोध सिर्फ एक डिसूजा नाम की महिला करती है जोकि पढ़ी-लिखी और समझदार महिला होती है। इस तरह इस कहानी से पता चलता है कि आधुनिक भौतिकवादी युग में मां-बाप इतने व्यस्त हो गए हैं कि वह अपने परिवार की ओर बिल्कुल भी ध्यान नहीं देते। इसी तरह इनकी अंधविश्वास की एक और कहानी **'झील की तरह'** भी है, जिसमें विधवा औरत को अपने पति की मृत्यु का दोषी ठहराया जाता है। इस कहानी में शामली नाम की एक पात्र है जोकि एक विधवा औरत है। गांव वालों का मानना है कि वह अपने पति को खा गई। जब वह वह आत्महत्या करने जाती है तो उसको एक नाविक बचा लेता है जिसका नाम शिवा होता है। वह शामली से प्रेम करता है और उससे विवाह कर लेता है जिसका गांव वाले बहुत विरोध करते हैं। गांव वालों का मानना है कि उसने पाप किया है और इस वजह से फिर से झील में बाढ़ आ जाएगी और वह पूरे गांव को बहा ले जाएगी इसलिए कहानी का पात्र शिवा स्त्री का चरित्र झील की तरह बताता है क्योंकि स्त्री पर कोई भी सहजता से आरोप लगा सकता है और झील पर भी जबकि यह उतार-चढ़ाव और वर्षा, जलप्लावन, सब प्रकृति का नियम है। गांव का कोई भी व्यक्ति इसका आरोपी नहीं है। लेखिका ने सिर्फ समाज में व्याप्त अंधविश्वासों और स्त्री विमर्श पर आधारित कहानियां ही नहीं लिखी बल्कि उन्होंने आधुनिक युग में युवा वर्ग की आधुनिकीकरण पर भी लिखा है। उनकी इस तरह की कहानी 'सूने समंदर और किनारे' हैं। इस कहानी में बताया गया है कि आज का वर्तमान युवा वर्ग में पढ़ाई-लिखाई में ध्यान न देकर समाज में फैली विकृत वस्तु की तरफ आकर्षित होता है। युवा वर्ग भौतिक वस्तु के प्रति कितना चिंतित है, यह इस कहानी में दिखाया गया है। युवा वर्ग अपनी भौतिक इच्छाओं को पूरा करने के लिए कुछ भी करने को तैयार है। लेखिका कहती है कि **"इस बाजारवादी परिवेश में शरीर से आत्मा तक सब कुछ बाजार में उतर आए हैं, ना कुछ बेचना मुश्किल है, ना कुछ खरीदना मुश्किल है।"**(निहां, पृ. 26) हर किसी में एक दूसरे से ज्यादा पा लेने की होड़ लगी हुई है। आधुनिक युग में युवा वर्ग अपनी इच्छाओं की पूर्ति के लिए चोरी-चकारी, मारधाड़ और लूटपाट आदि जैसी चीजों का सहारा लेता है और वहीं लड़कियां भी इससे अछूती नहीं रही है। कुछ लड़कियां अपनी भौतिक वस्तुओं की पूर्ति के लिए चोरी-छिपी अपने देह का व्यापार करना शुरू कर देती है। इसका जीता-जागता उदाहरण कहानी में सुनैना और मालती के माध्यम से दिखाया गया है। इसमें परिवार का एक कमजोर पक्ष भी दिखाया गया कि वह अपने बच्चों पर ध्यान नहीं देते। इनकी एक कहानी **'अवैध सुख'** भी है जो आज के समय में होने वाले बलात्कारों की ओर इंगित करती है। इसमें बलात्कारी की मानसिकता को दिखाया गया है कि बलात्कार करने के बाद उसको कोई पछतावा नहीं होता। इस कहानी में जेल जीवन की कहानी को दिखाया गया है। इसमें जेल में सजा काट रहे बंदियों की स्थिति और उनकी मन की स्थिति का भी चित्रण किया गया है। इसमें रंजीत नाम का एक

पात्र है जो बलात्कार और हत्या के जुर्म में 8 साल से जेल में सजा काट रहा है। वह 15 वर्षीय कंचन वाधवा नाम की एक लड़की का बलात्कार करता और उसकी हत्या कर देता है। रंजीत किसान पुत्र एवं एक मेधावी छात्र था जो पेशे से डॉक्टर था। रंजीत को अपनी इस गलती का कोई पश्चाताप नहीं था। वह आज भी कंचन वाधवा जैसी लड़की का संसर्ग फिर से पाना चाहता है। साथ ही साथ बाहर पढ़ने गए छात्रों को आचार-व्यवहार फिर शहरों में व्याप्त को व्यवस्था से उपजी समस्याओं का जीवंत चित्रन इस कहानी में किया गया है। इसके अलावा लेखिका ने दूसरी तरफ एक और कहानी लिखी जिसमें उन्होंने प्रेम का नाटक करने वाले प्रेमी के पश्चाताप को दिखाया है। इस कहानी का नाम **'विखंडित होने की ऋतु'** है। इसमें मुख्य रूप से दो पात्र हैं- अंचल और रोहित। इसमें अंचल एक गरीब और मध्यवर्गीय परिवार की लड़की है और वहीं रोहित इसके विपरीत है। वह बहुत ही धनी परिवार से संबंध रखता है और उसके पिता एक संत और समाजसेवी प्रवृत्ति के हैं। परंतु वह अपने पुत्र पर उचित ध्यान नहीं देते। रोहित अंचल से प्रेम का नाटक करता है, उससे संबंध बनाता है और जब वह उसके बच्चे की मां बन जाती है तो वह उसे स्वीकार करने से मना कर देता है। अंचल गुस्से में आकर रोहित की रिवाल्वर से अपने बच्चे को मार देती है जिस कारण उसे 8 साल की सजा हो जाती है। लेकिन जब रोहित शादी के बाद संतानविहीन रह जाता है और उसकी पत्नी उसको छोड़कर चली जाती है तब वह जीवन भर पश्चाताप की अग्नि में जलता रहता है। इस तरह लेखिका ने जहां 'अवैध सुख' में एक बलात्कारी की मानसिकता को दिखाया है कि उसको कोई पश्चाताप नहीं होता और वहीं दूसरी तरफ इस कहानी में लेखिका रोहित के माध्यम से उसके पश्चतावे को दिखाती है। इनकी एक और कहानी **'झरने'** है जिसमें इन्होंने सच्चे प्रेम को दिखाया है। लेखिका ने सिर्फ प्रेम में पाए गए धोखे को ही नहीं बल्कि सच्चे प्रेम में व्याप्त व्यक्ति की चाह को दिखाने का भी प्रयास किया है। इस कहानी में दिनेश कुमार, उसकी पत्नी नेहा और नेहा का प्रेमी नमन नाम का व्यक्ति है। नमन शहर के जाने-माने व्यवसायियों में से एक माना जाता है। नेहा और नमन का किसी कारणवश विवाह नहीं हो पाता और नेहा का विवाह दिनेश नाम के व्यक्ति से हो जाता है। नेहा का प्रेमी उससे दूर नहीं रह सकता इसलिए वह उसके घर के सामने एक बंगले को खरीद लेता है और उसी में अकेला रहता है। वह उस बंगले का नाम 'स्नेहा भवन' रखता है। पूरे मोहल्ले में यह सनसनी फैली हुई है कि इस बंगले में कोई रहता है पर वह किसी से बात नहीं करता। यहां तक कि नेहा का पति भी उस व्यक्ति के बारे में जानने के लिए काफी जिज्ञासु रहता है। नेहा का पति को इस बात का बिल्कुल भी आभास नहीं रहता कि वह जिसके प्रेम में डूबा हुआ है वह उसकी पत्नी ही है। अंत में जब नमन को उसके दुश्मनों द्वारा मार दिया जाता है तो वह अपनी पूरी संपत्ति नेहा और दिनेश के नाम कर जाता है। इस तरह वह नेहा के प्रति अपने प्रेम को निभाता भी है और उसकी जिंदगी में किसी भी तरह की दखलअंदाजी भी नहीं करता। इसी तरह की आगे की कड़ी में एक और प्रेम कहानी है जिसका नाम **'थमते-थमते सांझ हुई'** है जिसमें किसी परिस्थितिवश प्रेमी-प्रेमिका बिछड़ जाते हैं। लेकिन जब वह लंबे समय के बाद मिलते हैं तो प्रेमिका एक पेशेवर वेश्या बन चुकी होती है और प्रेमी एक सफल पत्रकार। इस कहानी में मुख्य रूप से दो पात्र रणवीर शेखू और कंचन। रणबीर को महिला के वेश्या रूप से काफी नफरत है। इसका कारण यह है कि क्योंकि उसके पिता खुद एक

वेश्या से संबंध रखते थे जिस वजह से उसका घर बर्बाद हो गया था। जब रणवीर धन कमाने के लिए शहर चला जाता है तो वहां पर उस पर मुनीम को जान से मार देने का इल्जाम लगा दिया जाता है जिस वजह से उसे 7 साल की सजा हो जाती है। इसके बाद उसका कंचन से कोई संपर्क सूत्र नहीं रह जाता है। वह उसका बहुत समय तक इंतजार करती है लेकिन उसको गलत सूचना मिलती है कि रणबीर ने दूसरा विवाह कर लिया है और उसका एक लड़का भी हो गया है। जिस कारण वह बहुत चिढ़ जाती है और वेश्यावृत्ति का काम शुरू कर देती है। वह जानती है कि रणबीर को महिला के इस रूप से नफरत होती है इसलिए वह अपनी प्रतिशोध की भावना से इस काम को करना शुरू कर देती है। लेकिन जब काफी साल बाद रणबीर एक सफल पत्रकार बनकर उसका इंटरव्यू लेने आता है। तब उसे इस बात का पता चलता है कि जो उसने सुना था वह असल में सच्चाई नहीं थी। रणवीर उससे पूछता भी है कि तुम्हें पता है मुझे इस काम से नफरत है तो तुमने यह काम शुरू क्यों किया? इसके जवाब में कंचन बताती है कि, **"तुमसे प्रतिशोध लेने का इससे बेहतर उपाय क्या था कि जिस चीज से तुम्हें घृणा हो, तुम्हारी प्रिय वस्तु को उसी में झोंक दिया जाए, मैंने झोंक दिया शिखर जिसके अस्तित्व पर तुम्हारा एकाधिकार था। उसे मैंने चिंदी-चिंदी कर दरिंदों में बांट दिया।"**(निहां, पृ. 156-157) इस तरह वह अपने प्रतिशोध की भावना में जल जाती है। इस कहानी में यह बताने का प्रयास किया गया है कि एक गलत सूचना व्यक्ति के संपूर्ण जीवन की प्रतीक्षा, मेहनत और प्रेम को तहस-नहस कर देती है। इसी तरह उनकी एक और कहानी है **'और दिन पलाश हुए'** जिसमें प्रेमी-प्रेमिका के लिए इंतजार ही सब कुछ होता है। इसमें छाया और शमित नाम के दो पात्र होते हैं। वे दोनों बचपन से ही एक दूसरे के साथ रहते, साथ-साथ स्कूल पढ़ने जाया करते और इन्हीं बीच उन दोनों को एक दूसरे से प्रेम हो जाता है लेकिन शमित छोटी जाति का लड़का होता है और छाया उच्च जाति की लड़की होती है। इस वजह से छाया के मां-बाप इस रिश्ते से इंकार कर देते हैं। वह अपनी बेटी की शादी अपने दोस्त के लड़के के साथ तय कर देते हैं लेकिन शादी के दिन छाया मंडप से भाग जाती है और गुवाहाटी में जाकर विवेकानंद आश्रम में रहने लगती है। शमित भी उसे ढूंढते-ढूंढते शहर आ जाता है, वहां उसे दस साल तक ढूंढता और वहीं रुक जाता है। वहीं अपना व्यवसाय शुरू कर देता है और एक बहुत बड़ा व्यापारी बन जाता है। वह हर साल एक सामूहिक विवाह का आयोजन करवाता है। इस सामूहिक विवाह की जानकारी छाया को उसके दोस्त शीबा देती है और उसी से ही उसे शमित के बारे में पता चलता है। वह शमित को फोन लगाती है और उसे छाया के बारे में पता चल जाता है फिर वे दोनों भी इस सामूहिक विवाह में एक जोड़े के रूप में शामिल हो जाते हैं। इस तरह कहानी यह बताने का प्रयास करती है कि व्यक्ति के लिए इंतजार समस्या और उपलब्धि दोनों है, जो रुक जाता है उसको मिल जाता है। इस तरह लेखिका ने स्त्री विमर्श, आधुनिक समय में युवा वर्ग का भौतिक वस्तु के प्रति चिंतित होना तथा प्रेम की सफलता और असफलता आदि के बारे में लिखा। इसके अलावा इन्होंने **'नीला मेम साहब'** कहानी लिखी जो तनावग्रस्त परिवार के बारे में बताती है। इस कहानी की मुख्य पात्र नीला मेम साहब है जिनकी चार लड़कियां हैं और एक अदद पति है। बेटियों की संख्या अधिक होने की वजह से वह बेटियों से खुश नहीं रहती और हमेशा अपने पति को ताने देती रहती है। इस वजह से परिवार में हमेशा ही तनाव छाया रहता है। पत्नी

द्वारा पति को हर समय सुनाया जाना, उसे नीचा दिखाया जाना और हमेशा बेरोजगार कहे जाने की वजह से उसकी संवेदनाओं को चोट पहुंचाई जाती है। अंतत: वह अपना समय बाहर व्यतीत करने लगता है। कहानी में बताया भी गया है कि **"मेम साहब को यह अकल कभी नहीं आई कि हारे हुए व्यक्ति को क्रूर यातनाएं या मानसिक प्रताड़नाओं की नहीं बल्कि नम्र सहानुभूतियों और नम्र संवेदनाओं की आवश्यकता होती है।"**(निहां, पृ. 172) नीला मेम साहब द्वारा बेटे के जन्म होने के बाद बेटियों को पूरी तरह से खारिज कर दिया गया। बेटियों का जो भी थोड़ा बहुत मान-सम्मान था, वह भी जाता रहा अगर कहा जाए तो बेटियां नौकरानी में तब्दील होती चली गई। पत्नी के द्वारा पति के साथ इस तरह का व्यवहार करने की वजह से वह घर से बाहर नौकरी की तलाश में चले जाते हैं और फिर अध्यात्म के क्षेत्र में उतर जाते हैं। एक दिन वह दुनिया छोड़कर चले जाते हैं। इसके बाद नीला मेम साहब को बहुत अफसोस होता है। उन्हें इस बात का भी एहसास होता है कि जिस व्यक्ति को उन्होंने अपने घर में मान-सम्मान नहीं दिया उन्हें समाज में बहुत मान-सम्मान मिला।

अतः स्त्री विमर्श भारतीय साहित्य के लिए कोई नया विषय नहीं है किंतु समाज में जब तक कन्या भ्रूण-हत्या, तिलक-दहेज, विवाहेतर संबंध, बाल विवाह, वेश्या और कॉलगर्ल जैसी समस्याएं रहेंगी, तब तक भारतीय समाज में स्त्री विमर्श होते रहेंगे। स्त्री विमर्श भारतीय समाज में अभी ऐसा मुद्दा बन चुका है जिसकी चर्चा करना हर व्यक्ति के लिए जरूरी हो गया है जो स्वयं को आधुनिक हिंदी साहित्य का जानकार साबित करना चाहता है। मानव के विकास में स्त्रियों के महत्व को नकारा नहीं जा सकता। नारी के बिना किसी प्रकार के विकास की कल्पना नहीं की जा सकती है। लेखकों और लेखिकाओं ने अपनी रचनाओं के माध्यम से नारी, नारी समाज व पुरुष निर्मित समाज में अंतर को टटोलने का प्रयास किया है। कहानी के माध्यम से ही स्त्री अतीत की स्मृतियों के साथ-साथ वर्तमान का सृजन करती है। साहित्य आम इंसान के अस्तित्व को ढूंढ कर उसे तराशती है। सत्य का खुला अन्वेंशन कर यथार्थ का क्रूर रूप प्रस्तुत करती है। लेखिका ने अपने कहानी संग्रह के माध्यम से स्त्री जीवन के इन सभी मुद्दों को बखूबी चित्रित किया है ।

**संदर्भ-**


अल्का, डॉ. (2017). *नारी चेतना के आयाम*. इलाहाबाद: लोकभारती प्रकाशन.

आर्या, मंजू. (2021). *मुस्लिम महिलाओं के मुद्दे: हुस्न तबस्सुम निहां के संदर्भ में* (लघु शोध प्रबंध).

कुमारी, पूनम. (2019). *स्त्री विमर्श के सिद्धांतिकी*. नई दिल्ली: अनामिका प्रकाशन.

निहां, हुस्न तबस्सुम. (2012). *नीले पंखों वाली लड़कियां*. नई दिल्ली: स्वराज प्रकाशन.

निहां, हुस्न तबस्सुम. (2012). *नरगिस फिर नहीं आएगी*. नई दिल्ली: सामयिक प्रकाशन.

नसरीन, तसलीमा. (2008). *औरत के हक में*. नई दिल्ली: वाणी प्रकाशन.

नीलम. (2019). *स्त्री स्वर: अतीत और वर्तमान* (पृ. 32-33). दिल्ली: अक्षर प्रकाशन.

ज़मीर, रोशन. (2023). *हुस्न तबस्सुम निहां की रचनाओं में विद्रोह के स्वर*.

# त्रिलोचन का गद्य साहित्य और साहित्यिक संवेदना

**कमलेश कुमार यादव***

**kky.ngp@gmail.com**

**सारांश**

त्रिलोचन का गद्य लेखन उनके काव्य की तरह ही महत्वपूर्ण है, हालाँकि आलोचकों ने इस ओर कम ध्यान दिया है। वे मूलतः कवि हैं, लेकिन गद्य के प्रति गंभीर रहे हैं। उनका गद्य विचारशीलता और कौशल से परिपूर्ण है, जहाँ उन्होंने जीवन और समाज को केंद्र में रखकर कविता के स्वरूप का विश्लेषण किया है। हिंदी साहित्य की विभिन्न धाराओं, जैसे भक्तिकाल, रीतिकाल, छायावाद और प्रगतिवाद, पर गहन विचार किया तथा रीतिकालीन कविता की सीमाओं को रेखांकित किया, जो दरबारी जीवन तक सीमित थी और आम जनता के संघर्षों से दूर थी। उन्होंने 1857 के संग्राम और भारतीय जनमानस पर उसके प्रभाव को भी विश्लेषित किया। साथ ही, अंग्रेजी शिक्षा के प्रभाव से उत्पन्न नए विचारों और विज्ञान के योगदान को भी रेखांकित किया। त्रिलोचन का गद्य स्पष्ट, तर्कसंगत और विचारोत्तेजक है। वे जनसाधारण की समस्याओं और संघर्षों को अपने लेखन में स्थान देते हैं। उनकी आलोचनात्मक दृष्टि साहित्य की परंपरा और आधुनिकता के बीच सेतु बनाती है, जिससे पाठकों की समझ विस्तृत होती है। उनका लेखन हिंदी साहित्य के इतिहास और विकास को समझने में महत्वपूर्ण योगदान देता है।

**मुख्य शब्द :** त्रिलोचन, साहित्य, संवेदना, रीतिकाव्य, प्रगतिवाद

## प्रस्तावना

पाठकों का जितना ध्यान त्रिलोचन के काव्य के तरफ गया है उतना ध्यान उनके गद्य के तरफ नहीं गया है। लेकिन कवि त्रिलोचन ने आलोचनात्मक गद्य भी लिखा है। त्रिलोचन मूलतः कवि है पर गद्य के महत्व के प्रति वे हमेशा गंभीर रहे हैं। वे हिंदी के ऐसे कवि हैं जो काव्य की तरह गद्य की भाषा में भी अटूट वाक्य विन्यास को एक बुनियादी शर्त की तरह सामने रखते हैं। गद्य के माध्यम से उन्होंने काव्य समीक्षा भी लिखी है। पुराने दौर के 'हंस' पत्रिका से लेकर नये दौर की 'ओर' पत्रिका तक उन्होंने कविता के साथ-साथ आलोचनात्मक गद्य भी रचा है। उनके गद्य में आलोचना की शक्ति और कौशल को देखा जा सकता है। उन्होंने अपने आलोचनात्मक गद्य में जगत और जीवन को केन्द्र में रखकर कविता के स्वरूप का विवेचन किया है। उन्होंने जीवन की गतिशीलता के साथ-साथ कविता की गतिशीलता को परखते हुए हिन्दी के विकास की रूपरेखा प्रस्तुत की है।

***अकादमिक सलाहकार, सीआईईटी, एनसीईआरटी, नयी दिल्ली**

**विवेचन**

कविता सहित तमाम कलाओं का विकास लोक के भीतर होता है लोक के बाहर किसी अलौकिक जगत में नहीं। इसे सूत्रबद्ध करते हुए आ0 रामचन्द्र शुक्ल ने लिखा था- "मनुष्य लोक बद्ध प्राणी है उसकी अपनी सत्ता का ज्ञान तक लोक बद्ध है, लोक के भीतर ही कविता तथा किसी कला का प्रयोजन का विकास होता है।" त्रिलोचन आचार्य रामचन्द्र शुक्ल की इसी दृष्टि, लोक दृष्टि के सच्चे उत्तराधिकारी है। उनके लिए काव्य जीवन की प्राणमयी भाषा है काव्य और अर्थ बोध नामक अपने निबंध में वे लिखते हैं कि- "पूर्व धारणाओं से काव्यार्थ बोध में प्रायः बाधा उपस्थित होती है। काव्यार्थ के लिए नियमित रूप से काव्य का पाठ और मनन करना चाहिए किसी भी काव्य का अध्ययन करने से पहले आत्म-परीक्षा कर लेनी चाहिए। किसी भी प्रकार की संकीर्णता काव्य सौन्दर्य को अपिहित कर लेती है। किसी कवि के प्रति विशेष श्रद्धा दूसरे कवि का स्वरूप बोध नहीं होने देती है। कभी-कभी विचार विशेष के आग्रह से भी काव्य समझने में बाधा खड़ी होती है। अतएव काव्य पाठ करने से पहले मन को प्रत्येक बाहरी प्रभाव से मुक्त कर लेना चाहिए।"[1]

त्रिलोचन की कविता तथा गद्य में एक बात जो प्रायः दिखाई देती है वह है अपने साहित्य की प्रगतिशील परम्परा का बोध। उनकी आलोचना का यह एक प्रमुख विषय है। इसलिए वे उपनिषदों के आध्यात्मिक रहस्यवाद में डुबने के बजाय उसे भी सामाजिक परिवर्तन से जोड़कर देखते हैं- "वेदों का एक प्रतिपाद्य था कर्मकाण्ड। कर्मकाण्ड के एक प्रमुख अंग थे यज्ञ। यज्ञों में जो हिंसा होती थी वह प्रायः ईश्वर और ऐहिक अभ्युदय की साधन की दृष्टि से होती थी, इससे ईश्वर और धर्म को क्या मिलता था, यह तो अध्वर्यु इत्यादि ही जाने, परन्तु रसनेन्द्रिय की परितृप्ति सामान्य-असामान्य सभी जन जानते थे। इनकी प्रतिक्रिया में बौद्ध और जैन धर्म का उदय हुआ। हिंसा, यज्ञ, कर्मकाण्ड, वेद प्रामाण्य, आत्मवाद आदि का खण्डन किया गया। इन सांस्कृतिक क्रांतियों से एक बौद्धिकता का उदय हुआ जो उपनिषद काल की अथक जिज्ञासावृत्ति का प्रतिनिधित्व करती है। यह सांस्कृतिक क्रांति थी, इसमें कर्मकाण्ड आदि के ह्रासमान पहलू का त्याग और खण्डन और उपनिषद काल की अथक जिज्ञासा वृत्ति का ग्रहण और विकास हुआ। कठोपनिषद में जो आत्मा के प्रति अनास्था का भाव बद्धमूल हुआ था वह बुद्ध के आध्यात्म में विकसित हुआ।"[2] यह है त्रिलोचन का सजग परम्परा बोध। संत काव्य पर विचार करते हुए वे कहते हैं कि- "हिन्दू-मुस्लिम समुदायों में धार्मिक भेदभाव था, इसके विपरीत भक्त और संत कवियों ने धार्मिक अभेद, समन्वय और सहिष्णुता का प्रचार किया। हिन्दी का संत साहित्य हिन्दू-मुस्लिम एकता के प्रयत्न का सुमधुर गति महाकाव्य है।" उनकी यह मान्यता सराहे जाने योग्य है। भक्तिकाल पर वे कुछ सवाल खड़े करते हुए कहते हैं कि- भक्तिकाव्य क्या मूलतः पूर्वोक्त राजनीतिक पराभव से प्रेरित था? उसमें धार्मिक भेद-भाव से भी अधिक सामाजिक भेद-भाव का जो विरोध और प्रतिरोध व्यक्त हुआ है, उसका कारण क्या है? रामानुजाचार्य, बल्लभाचार्य आदि के धार्मिक आंदोलनों का जनता के अन्तर्हृदय में प्राचीन भावों और कल्पनाओं के अखण्ड शासन पर कुछ भी प्रभाव नहीं पड़ा? दोनों समुदायों के शासन वर्गों के आपसी संघर्षों के विपरीत दोनों समुदायों की सामान्य जनता क्या एक-दूसरे

के निकट नहीं आ रहीं थी? आगे उन्होंने लिखा कि- "अपनी पूर्वकृत त्रुटियों का निराकरण करने के लिए 1857 ई0 में लोग एक बार एकत्र हुए। हिन्दू-मुस्लिम जन समुदाय में आपसी एकता की प्रवृत्ति पहले से क्रियाशील न होती तो 1857 ई0 में अचानक उनकी एकता सम्भव न होती।"

त्रिलोचन रीतिकाल पर विचार करते हुए कहते हैं कि- "यों रीतिकाल का पहला कवि मैं केशवदास को मानता हूँ। यद्यपि उनके पश्चात् लगभग आधी शती तक रीतिकाल का समुचित रूप नहीं दिखाई पड़ता परन्तु केशव में वह समस्त प्रवृत्तियाँ मौजूद थी, जो रीति कवियों में विकसित हुई। अर्थात् दरबारी मनोवृत्ति, चमत्कार और अलंकार का मोह तथा कवि के साथ आचार्यत्व का दिखावा और सबसे बढ़कर लोक जीवन में अलग-थलग रहकर अपनी कविता रचने की प्रवृत्ति इस माने में केशव रीति कवियों के अगुआ और मार्गदर्शक थे।" उपर्युक्त पक्तियों के पढ़ने के बाद स्पष्ट हो जाता है कि त्रिलोचन ने संक्षेप में रीतिकालीन कविता की वे सब प्रवृत्तियाँ उद्घाटित कर दी हैं जो रीतिकाल को पूर्ववर्ती कालों से अलग करती है। रीतिकालीन ज्यादातर कवि दरबारी कवि थे और उन्होंने अपने आश्रय दाताओं की श्रृंगारिक रुचियों को उद्दीप्त करने वाली काव्य रचना से उनका मनोरंजन किया। फलतः उनके काव्य में दरबारी भेग-विलासमय सामंती संस्कृति की गहरी छाप पड़ी। रीति कविता का वर्ग आधार स्पष्ट करते हुए उन्होंने लिखा है कि- "इस युग का अधिकांश भाग औरंगजेब के शासन काल से सम्बद्ध है। अकबर के भावात्मक एकता और धार्मिक सहिष्णुता के प्रयास औरंगजेब के काल में लगभग समाप्त हो चुके थे। और शाहजहाँ के समय विलास के दौर में कला और साहित्य में भी शान-शौकत, नक्काशी और विलासिता की प्रवृत्ति पनप रही थी। अकबर के दरबार की विद्वत और धार्मिक परिषदों का स्थान बादशाहों के विलास को बढ़ावा देने और चमत्कारों का प्रदर्शन करने वाले कवि कलाकारों की मंडलियों ने ले लिया। अकबर के दरबार में रहने वाले कवियों ने प्रायः नीति धर्म आदि से संबद्ध काव्य रचनाएं की थीं जिन्होंने कई बार शासक को मार्ग दिखाया था।[4] कवियां और कलाकारों की नष्ट होती परम्परा पर चिन्ता जताते हुए लिखते हैं कि- "अकबर के दरबारी कवियों में बीरबल, टोडरमल, गंग, अब्दुर्रहीम खान-खाना जैसे नीतिज्ञ और जागरूक कवि थे। परन्तु यह परम्परा आगे जाकर नष्ट हो गई और जैसा कि कहा गया है एक 'भिन्न' किस्म के कवियों, कलाकारों का जमाव दिल्ली दरबार में होने लगा, दिल्ली दरबार का अनुकरण देश के अन्य राजाओं और सुबेदारों की राजसभाओं में भी होने लगा और जगह-जगह वैसे ही कलाकारों और कवियों का दल इकट्ठा किया गया। कवि, कलाकार शासकों की शान-शौकत का प्रतीत और मनोरंजन के साधन थे। इस युग की अधिकांश प्रमुख कवियों की आजीविका का साधन राज दरबारों से प्राप्त सहायता थी। इसलिए उनमें भी वहीं विलासिता पनपी जो बड़े राज कर्मचारियों में थी। राज दरबार तक अपने को सीमित कर लेने और जनता से कट जाने का अनिवार्य परिणाम रीति की प्रगतिशील चेतना से कट जाने के रूप में दिखाई दिया।"[5]

दरबारों के भोग विलासमय जीवन के विपरीत साधारण जनता का जीवन सामंती जुए के नीचे, आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक और सांस्कृतिक उत्पीड़न से त्रस्त था। आम जनमानस घोर विषमता,

दुःख पराभव और घुटन में जी रही थी। यह विलास और आनन्द के दिन नहीं बल्कि घोर शोषण का युग था। सामंती शक्तियाँ अपने सुख के लिए प्रजा के साथ अमानुषिक क्रूरता और उपेक्षा का व्यवहार कर रही थीं। उनके युद्धों, विलासों, प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष अत्याचारों और लापरवाहियों की कीमत आम जनता को ही चुकानी पड़ती थी।

यद्यपि इस युग में दरबारी कवियों के विपरीत अनेक धार्मिक आंदोलन भी हुए जैसे- सनातनी सम्प्रदाय ने औरंगजेब की धार्मिक नीतियों के खिलाफ आंदोलन किया। इस युग के एक अन्य तेजस्वी स्वर कवि भूषण हैं। जिनके चरित नायक शिवाजी के प्रगतिशीलता को रेखांकित करते हुए त्रिलोचन जी लिखते हैं कि- "शिवाजी की शत्रुता न सामान्य मुसलमान से थी, न उनके धर्म से। उनकी सेना में एक दल मुसलमानों का था। इतिहास प्रमाण है कि शिवाजी ने किसी मस्जिद पर या किसी मुसलमान स्त्री की अस्मत पर हमला नहीं किया। विरोधी की स्त्रियों और उनके धर्म का सम्मान शिवाजी के व्यक्तित्व को मुस्लिम शासकों के व्यक्तित्व से अलग करता है। उसी तरह शिवाजी अन्य विलासी हिन्दू और सुबेदारों से भी अलग थे इस माने में शिवाजी राष्ट्रों-द्धारक और प्रगतिशील थे। उन्होंने समाज रचना के अनुरूप शासन किया और मावल, महार आदि जनजातियां के सहयोग से युद्ध किए।"[6] शिवाजी राजा थे और भूषण उनके दरबारी कवि फिर भी शिवाजी की उपर्युक्त विशेषताएं एक ओर स्वयं उनको तत्कालीन हिन्दू-मुस्लिम सामंतों से अलग करती हैं तो दूसरी ओर कवि भूषण को तत्कालीन अन्य दरबारी कवियों से अलग और ऊँचा स्थान देती है।

तमाम रीतिबद्ध कवियों में त्रिलोचन देव के साथ खड़े होते हैं। "देव जगह-जगह भटकते रहे और किसी राज सभा में जमकर नहीं रहे। इसलिए दरबारी प्रवृत्ति उन पर अपेक्षाकृत कम हावी हुई। उन्होंने बिहारी तथा अन्य रीति कवियों की अपेक्षा परकीया नायिका से संबद्ध काव्य कम ही रचा। स्वकीया के वर्णन में वे रीतिकाल के बेजोड़ कवि हैं। उनका यह कथन उनके लिए उपयुक्त है- 'दंपति दीपति प्रेम प्रतीति, प्रतीति की रीति सनेह निचोरी।' अन्य रीति कवियों की तुलना में देव के नायिका वर्णन की इस भिन्नता से उनके सामाजिक उत्तरदायित्व का पता चलता है। लोक जीवन से भी उनका संपर्क अपेक्षाकृत अधिक था।"[7] उन्होंने सामाजिक विषमता के प्रति चिन्ता जाहिर की है, यह लोक जीवन से उनकी आत्मीयता का प्रमाण है। उन्होंने राज दरबार के चापलूसी भरे वातावरण का चित्रण अत्यन्त घृणा के साथ किया है। भक्तिकाल से रीतिकाल की तुलना करते हुए त्रिलोचन लिखते हैं कि- "दरबार के बाहर रीतिकाव्य का विकास कम ही पाया जाता है। विषय निर्धारित होने के कारण उनके भाव भी निर्धारित होते गये थे। रीति कवियों में सूर, तुलसी, जायसी, कबीर जैसी गहराई और व्यापकता दुर्लभ है। श्रृंगार से हटकर कभी-कभी ये कवि भक्ति अथवा नीति संबंधी बातों को भी काव्य का विषय बनाते थे परन्तु श्रृंगारेतर काव्य में इन कवियों की अनुभूति काफी उथली थी, अतः इस प्रकार के काव्य में वह गंभीरता और अनुभूति प्रवणता नहीं मिलती। रहीम और बिहारी के नीतिकाव्य की या सूर और पद्यमाकर के भक्ति काव्य की परस्पर तुलना करने पर यह तथ्य प्रमाणित हो सकता है।"[8]

त्रिलोचन ने रीतिकाव्य पर अश्लीलता का आरोप तो नहीं लगाया लेकिन उन्होंने जिस उत्तरदायित्व पूर्ण प्रेम की कसौटी रखी है उसके अनुसार 'जीवन और जगत से निरपेक्ष, मात्र प्रेम ही बड़ी अथवा महान कविता का विषय नहीं हो सकता। रीतिकाव्य में नारी जीवन के चित्रण का स्वरूप उद्घाटित करते हुए उन्होंने लिखा है कि - ''नारियाँ, मिलन या विरह के लिए ही समर्पित थीं बहुत कम कविताएं ऐसी हैं जिनमें नारी का सामाजिक दायित्व भी दिखाई देता है। हर नायिका किसी न किसी नायक की ओर ही उन्मुख मिलती है। स्त्रियां दूती, स्वयंदूती, अभिसारिका आदि अनन्त रूपों में दिखाई देती हैं। इन रचनाओं को पढ़ते हुए इस बात पर ध्यान चला ही जाता है कि वह समाज कैसा था ? स्वकीयाओं की भी मदन-व्यथा जिस प्रकार उभार कर दिखाई गयी है उस प्रकार उनके जीवन के सहज और स्वाभाविक पक्ष नहीं उजागर किए गये।"[9] सामाजिक प्रतिबद्धता की कसौटी पर रीतिकाव्य की परीक्षा करने पर यही कहा जा सकता है कि यह काव्य समाज का मनोरंजन अवश्य करता है पर समाज का निर्माण नहीं करता।

त्रिलोचन ने भारतेन्दु युगीन नवजागरण की पृष्ठभूमि में 1857 के महाविद्रोह की ऐतिहासिक भूमिका को रेखांकित करते हुए लिखते हैं- ''अपनी पूर्व कृत त्रुटियों का निराकरण करने के लिए 1857 में लोग एक बार एकत्र हुए। यद्यपि वह उद्योग विफल हुआ तथापि उसका भारतीय जीवन पर बड़ा प्रभाव पड़ा। लोगों में राष्ट्रीयता की चेतना आयी।"[10] इसी प्रकार अंग्रेजों के सम्पर्क में आने पर भारतीयों के अंदर आए परिवर्तनों की तरफ संकेत करते हुए वे लिखते हैं कि- ''अंग्रेजी शिक्षा के कारण लोगों के मन का विस्तार हुआ। अंग्रेजी के माध्यम से विश्व के अन्यान्य देशों और उनके नागरिकों के अनंत भावकोष का पता लगा। भारत की पराजयजनित भाग्यवादी आत्मग्लानि तिरोहित हुई और उसके स्थान पर अदम्य उद्योगशीलता की प्रतिष्ठा हुई। इस समय पश्चिम के विज्ञान के नये अनुसंधानों से परिचय हुआ और सृष्टि विज्ञान की पौराणिक धारणा को भौतिक विज्ञान, रसायन शास्त्र और प्राणी विज्ञान ने धराशायी कर दिया।"[11]

इसी प्रकार छायावाद की सीमाएँ स्पष्ट करते हुए त्रिलोचन लिखते हैं कि- ''छायावादी काव्यधारा का लोक जीवन से प्राण संबंध नहीं था। अधिकतर कवि स्वप्नदर्शी थे। उनका स्वप्न अशिक्षित और असंस्कृत जनता की समझ से बाहर था।' छायावाद की सौन्दर्य-कल्पना और लोक जीवन की वास्तविकता में अन्तर्विरोध था, फलतः छायावादी सौन्र्यान्वेषण की प्रवृत्ति के विरूद्ध विद्रोह पुंजीभूत होने लगा, लोक जीवन इतना सौन्दर्यमय नहीं है जितना छायावादी काव्य-साहित्य में अंकित किया गया। जग जीवन को सुन्दर कहने वाले जग जीवन की असुंदरताओं और विभीषिकाओं से पृथक एक और ही अलौकिक संसार को अपने काव्यों में मूर्तिमान करने का प्रयत्न करते थे यह असत्य अधिक दिन तक न चल सकता था।"[12] अर्थात छायावाद को विश्व में हो रहे परिवर्तनों के साथ जोड़कर त्रिलोचन देख रहे थे। लोगों का झुकाव समाजवाद के तरफ हो रहा था। इतिहास की आर्थिक व्याख्या ने पूँजीवाद सम्राज्यवाद और फासिज्म को नकारने लगे। दलित जातियों में एकता का भाव पनपने लगा। इन सब का प्रभाव हिन्दी काव्य पर पड़ा। कवियों को दृष्टि और कल्पना के लिए जगह मिला और छायावाद के भीतर ही एक प्रगतिशील साहित्यिक प्रवृत्ति का उदय और

विकास हुआ। प्रगतिवादी कविता को केन्द्र में रखकर वे लिखते हैं कि- ''इस काव्य की अंतः प्रकृति पर विज्ञान की नई खोजों का भी प्रभाव पड़ा। इसी कारण छायावाद के उत्तरकालीन काव्य में विज्ञान विरोधी उपमानों, रूपकों और अलंकारों का सन्निवेश नहीं मिलता, प्रत्युत अनेक स्थलों पर विज्ञान के अनुभवों का मर्मग्राही उपयोग मिलता है।"[13] छायावाद के उत्तरकालीन काव्य को ही वे प्रगतिवादी काव्य का विकास मानते हैं। उनका मानना है कि प्रगतिवादी कवि वर्तमान और भविष्य को लक्ष्य करके ही काव्य निर्माण करते हैं। इसलिए प्राचीन साहित्य पर उनका विचार नवीन दृष्टिकोण से होता है जिसका मुख्य उद्देश्य है पुरातन संस्कृति की जगह नवीन संस्कृति की स्थापना तथा पुरातन मनुष्य से नये युग के मानव का निर्माण करना। छायावाद के बाद और तारसाप्तक से पहले की नयी कविता की मुख्य विशेषताओं को सूत्र बद्ध करते हुए विचार करते हैं कि लेखकों का जनता और राष्ट्र के प्रति अपने उत्तरदायित्व को समझना, भाषा और साहित्य का लोक जीवन के निकट आना, बड़े कवियों का सिंहासन छोड़कर जनपथ पर विचरण करना, युग चेता भाव योगी कवियों का अपनी सम्पूर्ण प्राण शक्ति से देश की मनः शक्ति का उद्बोधन करना प्रमुख रहा है- ''लेखकों ने अपने को जनता और राष्ट्र के प्रति उत्तरदायित्व समझा। फलतः भाषा और साहित्य लोक जीवन के निकट आए। यद्यपि अभी साहित्य जीवन के समानान्तर नहीं चल रहा है फिर भी चेष्टाशीलता स्पष्ट है। सभी बड़े कवियों ने सिंहासन छोड़कर जनपथ पर विचरण प्रारम्भ किया। इसका भविष्य अधिक आशाप्रद है। जब जीवन और साहित्य एक दूसरे के पूरक हो जोयेंगे तब राष्ट्र की शक्ति का विकास होगा। निराला, पंत, दिनकर, नरेन्द्र शर्मा, सुमन, बच्चन और केदारनाथ अग्रवाल जैसे युगचेता भावयोगी कवि अपनी सम्पूर्ण प्राण शक्ति से देश की मनः शक्ति का उद्बोधन कर रहे हैं।"[14]

निराला पर अपने विचार व्यक्त करते हुए कहते हैं कि- उन्होंने चली आती हुई रूढ़ि के प्रति थोड़ी सी भी अनुरक्ति नहीं दिखाई, वह रूढ़ि समाज की हो या साहित्य की। इसी कारण उनको सबसे अधिक विरोध का सामना भी करना पड़ा। प्राचीन रूढ़ियों के विरूद्ध विद्रोह और संघर्ष उनके नित नवीन बने रहने का कारण है। जीर्ण-शीर्ण जीवनहीन प्राचीन के प्रति निराला जी के मन में कोई मोह नहीं है। इसी कारण वे आज जीवन की इस ढलती वेला में भी नव नवीन बने हुए हैं।

**निष्कर्ष**

त्रिलोचन के गद्य साहित्य का अवलोकन करने पर पता चलता है कि त्रिलोचन कवि के साथ-साथ काव्य मर्मज्ञ और आलोचक भी हैं। इसलिए वे रचना, आलोचना और पाठक के अन्तःसंबंधों का सही विवेचन कर सके। इनके आलोचनात्मक गद्य की लय भावावेग से आंदोलित नहीं, वरन बौद्धिक संयम से अनुशासित धीर प्रशांत लय है। बातचीत के लहजे के बावजूद उनमें चपलता या चटुलता नहीं है उनके गद्य की बुनावट में कहीं भी बनावट नहीं है। वे अपनी बातें सीधे-सीधे कहते हैं जिससे पाठकों को सम्प्रेषण में कोई कठिनाई नहीं होती। हिंदी साहित्य के आदिकाल से लेकर आधुनिक काल तक के काल खण्डों, काव्य

प्रवृत्तियों तथा कवियों, लेखकों पर जो भी विचार रखते हैं वह किसी भी वाद या खेमे से हटकर मौलिक विवेचन हैं। ''त्रिलोचन विचारधाराओं में जीवन की तलाश नहीं करते बल्कि आम आदमी के बीच रहकर उनसे संवाद करते हुए उनकी समस्याओं, कठिनाइयों और संघर्षों को समीप से जाँचते परखते हुए यथा सम्भव उनसे साझेदारी करते हुए जीवन का साक्षात्कार करते हैं। वे गरीबों, अभावग्रस्त जनता के पक्ष में खड़े रहते हैं। वे मानव के जीवन से अभावों, कष्टों और शोषण को मिटाने के प्रति प्रतिबद्ध हैं।''[15] त्रिलोचन के आलोचनात्मक गद्य में हाँसिए के समाज की आवाज सुनाई देती है। उनके आलोचनात्मक गद्य, कविता और जीवन, परम्परा और आधुनिकता, पुरानी और नई हिंदी कविता, रचना और आलोचना, जन भाषा और काव्य भाषा आदि में उन्होंने जो महत्वपूर्ण लेखन किया है। उससे निश्चित तौर पर पाठकों की दृष्टि का विस्तार होता है।

**संदर्भ :**


1. त्रिलोचन शास्त्री. (1945, अगस्त). काव्य और अर्थ बोध. हंस. '*हंस*' पत्रिका. पृष्ठ 96
2. मिश्र, अवधेश. (1995). *कवि त्रिलोचन का आलोचनात्मक गद्य*. पृ.14
3. त्रिलोचन. (1995). रीतिकाल: एक क्षयी गुण. प्रभाकर क्षोत्रिय (संपा.). *हिन्दी कविता की प्रगतिशील भूमिका*. नई दिल्ली : नेशनल पब्लिशिंग हाउस.
4. त्रिलोचन. (1995). रीतिकाल: एक क्षयी गुण. प्रभाकर क्षोत्रिय (संपा.). *हिन्दी कविता की प्रगतिशील भूमिका*. नई दिल्ली : नेशनल पब्लिशिंग हाउस.
5. त्रिलोचन. (1995). रीतिकाल: एक क्षयी गुण. प्रभाकर क्षोत्रिय (संपा.). *हिन्दी कविता की प्रगतिशील भूमिका*. नई दिल्ली : नेशनल पब्लिशिंग हाउस.
6. त्रिलोचन. (1995). रीतिकाल: एक क्षयी गुण. प्रभाकर क्षोत्रिय (संपा.). *हिन्दी कविता की प्रगतिशील भूमिका*. नई दिल्ली : नेशनल पब्लिशिंग हाउस.
7. त्रिलोचन. (1995). रीतिकाल: एक क्षयी गुण. प्रभाकर क्षोत्रिय (संपा.). *हिन्दी कविता की प्रगतिशील भूमिका*. नई दिल्ली : नेशनल पब्लिशिंग हाउस.
8. त्रिलोचन. (1995). रीतिकाल: एक क्षयी गुण. प्रभाकर क्षोत्रिय (संपा.). *हिन्दी कविता की प्रगतिशील भूमिका*. नई दिल्ली : नेशनल पब्लिशिंग हाउस.
9. त्रिलोचन. (1995). रीतिकाल: एक क्षयी गुण. प्रभाकर क्षोत्रिय (संपा.). *हिन्दी कविता की प्रगतिशील भूमिका*. नई दिल्ली : नेशनल पब्लिशिंग हाउस.
10. मिश्र केदारनाथ 'प्रभात' (संवत 2001 वि.) संवर्त-गीति काव्य. प्रस्तावना: त्रिलोचन शास्त्री. पृ. 14
11. मिश्र केदारनाथ 'प्रभात' (संवत 2001 वि.) संवर्त-गीति काव्य. प्रस्तावना: त्रिलोचन शास्त्री. पृ. 14.
12. मिश्र केदारनाथ 'प्रभात' (संवत 2001 वि.) संवर्त-गीति काव्य. प्रस्तावना: त्रिलोचन शास्त्री. पृ. 17
13. मिश्र केदारनाथ 'प्रभात' (संवत 2001 वि.) संवर्त - गीति काव्य. प्रस्तावना: त्रिलोचन शास्त्री. पृ. 19.
14. त्रिलोचन शास्त्री. (1946 सितंबर). निराला जी की नयी कविता. *हंस* पत्रिका. पृ. 99
15. राय, कृष्णदत्त पालीवाल. (2018). *हिंदी साहित्य का वस्तुनिष्ठ इतिहास*. नई दिल्ली: प्रभात प्रकाशन. पृ. 480

# जमनालाल बाजाज का सामाजिक विचार

**सुमन्त कुमार मिश्रा***

**sumant.diamond@gmail.com**

**सारांश:**

इस शोध पत्र में जमनालाल बजाज के बहुआयामी सामाजिक योगदान का विश्लेषण किया है। जमनालाल बजाज न केवल गांधीजी के अनन्य अनुयायी थे, बल्कि उन्होंने सामाजिक सुधारों को अपने जीवन में क्रियात्मक रूप से आत्मसात किया। उन्होंने पर्दा प्रथा, अस्पृश्यता, महिला अशिक्षा और जातीय भेदभाव जैसी सामाजिक बुराइयों के विरुद्ध उदाहरण प्रस्तुत करते हुए साहसिक कदम उठाए। उन्होंने हरिजनों के लिए अपने पारिवारिक मंदिर के द्वार खोले और महिलाओं की शिक्षा के लिए संस्थानों की स्थापना की।

बजाज की विचारधारा का मूल आधार गांधीवादी सिद्धांत, कर्मप्रधान वर्ण व्यवस्था और मानव-कल्याण की भावना थी। वे मानते थे कि धर्म केवल आडंबर नहीं, बल्कि व्यवहार में मानव कल्याण की ओर उन्मुख नैतिक आचरण है। उनके अनुसार सच्चा धर्म वही है जो दूसरों के कल्याण और आत्मा की गरिमा के संरक्षण की प्रेरणा दे।

शोध पत्र में भारतीय सामाजिक संरचना — जैसे जाति व्यवस्था, सामाजिक स्तरीकरण, वर्ण व्यवस्था और धर्म — की विस्तृत समाजशास्त्रीय विवेचना प्रस्तुत की गई है, और यह स्पष्ट किया गया है कि किस प्रकार जमनालाल बजाज ने इन जटिल विषयों को व्यावहारिक दृष्टिकोण से समझा और जीवन में उतारा।

अंततः, लेखक यह स्थापित करते हैं कि जमनालाल बजाज की सामाजिक चेतना, परोपकार की भावना, शिक्षा और सेवा के प्रति समर्पण, तथा गांधीवादी मूल्यों के प्रति आस्था उन्हें एक महान सामाजिक विचारक और कार्यकर्ता के रूप में स्थापित करती है। उनका जीवन आधुनिक भारत में सामाजिक समरसता और मानवीय मूल्यों की प्रेरणा स्रोत है।

**मुख्य शब्द :**

जमनालाल बजाज, गांधीवादी विचारधारा, वर्ण व्यवस्था, धार्मिक सामाजिकता, सामाजिक सुधार आंदोलन, जाति व्यवस्था, नारी शिक्षा और सशक्तिकरण, खादी और ग्रामोद्योग

***शोधार्थी, गांधी एवं शांति अध्ययन विभाग, महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा**

**प्रस्तावना :**

समाज में हो रहे घटनाओं के आधार पर सामाजिक चिंतन का स्वरूप निर्धारित होता है, प्राचीन काल से वर्तमान समय तक भारत की सामाजिक व्यवस्था में परिवर्तन होते रहें हैं जिसके आधार पर समाजशास्त्रियों ने अपनी सामाजिक चिंतन को रेखांकित किया है। स्वतंत्रता आंदोलन के समय वर्ण व्यवस्था, जाती व्यवस्था और धर्म जैसे महत्वपूर्ण विषय विद्धमान थे उसी दौरान गांधी जी से प्रभावित होकर जमनालाल बजाज ने अपने लेखन शैली से तो कम लेकिन अपने क्रियात्मक प्रयास से सामाजिक व्यवस्था में अपना योगदान दिया। जमनालाल बजाज एक ऐसे समाज सुधारक थे जिन्होंने अपने जीवन में एक उदाहरण प्रस्तुत किया और अपने घर में पर्दा प्रथा को समाप्त किया। उन्होंने अपने पारिवारिक मंदिर के दरवाजे हरिजनों के लिए खोल दिए, जिससे यह भारत में ऐसा करने वाला पहला ज्ञात मंदिर बन गया। यह सामाजिक जागरूकता और संवेदनशीलता निश्चित रूप से एक ऐसे व्यक्ति के शुरुआती परोपकारी लक्षण थे जिन्होंने स्वतंत्रता संग्राम में सक्रिय रूप से भाग लिया था। जमनालाल बजाज ' गांधी सेवा संघ के संस्थापक अध्यक्ष और 'अखिल भारतीय खादी बोर्ड' के अध्यक्ष थे और उन्होंने खादी और ग्रामोद्योग के विकास के लिए राजस्थान के साथ-साथ पूरे देश में व्यापक खादी यात्राएँ कीं। वे गौ-सेवा (गौ रक्षा), दलितों और वंचितों के उद्धार, महिलाओं की शिक्षा और हिंदी भाषा के प्रचार-प्रसार के लिए काम करने में भी अग्रणी थे। उन्होंने वर्धा में महिला आश्रम और अजमेर में महिला शिक्षा सदन की स्थापना की। ये शिक्षा के माध्यम से महिलाओं की मुक्ति के लिए उनके ईमानदार प्रयासों का प्रमाण हैं। शिक्षा एक ऐसा क्षेत्र है जहाँ बजाज का नाम आज भी चमकता है। इसमें आईआईटी में शामिल होने की इच्छा रखने वाले वंचित बच्चों को कोचिंग के लिए वित्तीय सहायता प्रदान करना, ठाणे जिले में अनुसूचित जातियों और जनजातियों की लड़कियों की शिक्षा को बढ़ावा देना और यह सुनिश्चित करना शामिल है कि वे स्कूल न छोड़ें। बजाज समूह पुणे, पंतनगर और औरंगाबाद में औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थानों (आईटीआई) को अपग्रेड करने में भी शामिल है और बेहतर प्रशिक्षण और नौकरी पर ध्यान केंद्रित करने की सुविधा के लिए इस्तेमाल की गई मशीनरी दान करता है। समूह ने आईआईटी मुंबई में चार चेयर प्रोफेसरशिप की स्थापना को वित्त पोषित किया है, जो अनुसंधान और शिक्षण में योगदान के लिए संकाय सदस्यों के लिए सर्वोच्च सम्मान है। बजाज समूह की परोपकारी भागीदारी स्वास्थ्य सेवा, कला, संस्कृति, खेल और अध्यात्म सहित कई क्षेत्रों को कवर करती है।

जमनालाल बजाज की प्रेरणा शक्ति उनकी दृढ़ आचार संहिता है, जिसका वे पालन करते थे और भारत में सामाजिक रूप से पिछड़े तबके को सशक्त बनाने में उनका विश्वास था । गांधीवादी सिद्धांतों के प्रति उनका विश्वास और पालन उनके जीवन के हर क्षेत्र में व्याप्त था व्यक्तिगत, सामाजिक, व्यावसायिक और सामाजिक। बजाज परिवार द्वारा उनकी विरासत को उनके कर्तव्यों के साथ-साथ उनके परोपकारी प्राणों में कशलतापूर्वक आगे बढ़ाया जा रहा

**जमनालाल बजाज और वर्ण-व्यवस्था** :

वर्ण-व्यवस्था के संदर्भ में मैकाइवर और कूले आदि समाजशास्त्रियों ने अपने अध्ययन के आधार पर बतलाया है कि सामाजिक वर्ग विश्व के सभी समाजों में किसी न किसी रूप में अवश्य पाये जाते हैं। कहीं पर सामाजिक वर्गों का निर्माण जन्म के आधार पर होता है तो कहीं पर धन के आधार पर। इतना निश्चित है कि सामाजिक वर्ग प्रत्येक समाज में पाये जाते हैं। मनुष्य की प्रवृत्तियों तथा व्यवसायों के आधार पर उन्हें विभिन्न वर्गों में बाँटने के प्रयत्न प्राचीन समय से ही होते रहे हैं। इन प्रवृत्तियों तथा व्यवसायों के आधार पर समाज का विभाजन संसार के सभी देशों में पाया जाता है। इंग्लैण्ड के प्रसिद्ध विद्वान एच.सी. वैल्स का कहना है कि मनोवैज्ञानिक प्रवृत्तियों के आधार पर समाज-विभाजन से समाज का श्रेष्ठ विकास होता है तथा उसकी शक्ति बढ़ती है। किंग्सले डेविस और मूरे ने सामाजिक वर्गों का विश्लेषण करते हुए बतलाया है कि समाज अपनी स्थिरता एवं उन्नति के लिए अपने व्यक्तियों को उनकी योग्यता एवं प्रशिक्षण को ध्यान में रखते हुए विभिन्न वर्गों में बाँट देता है। प्राचीन भारतीय सामाजिक विचारकों ने भी मनुष्य की मनोवैज्ञानिक प्रवृत्तियों को दृष्टि में रखते हुए सामाजिक स्तरीकरण (Social Stratification) की एक सुनियोजित नीति को अपनाया तथा कार्यात्मक दृष्टि से समाज को चार वर्णों में विभाजित किया। ये वर्ण हैं- ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र।

जमनालाल बजाज गांधी जी के पदचिन्हों पर चलने के कारण वर्ण व्यवस्था के समर्थक थे उनका मानना था कि, "वर्ण व्यवस्था कर्म प्रधान पर आधारित है, जिसका जैसा कर्म उसका वैसा वर्ण"

**धर्म की अवधारणा :**

भारतीय समाज धर्म-प्राण समाज कहलाता रहा है और धर्म की प्रत्येक क्षेत्र में महता रही है। धर्म व्यक्ति, परिवार, समाज और सम्पूर्ण राष्ट्र के जीवन को अनेक रूपों में प्रभावित करता रहा है। धर्म हिन्दुओं के जीवन को जन्म से लेकर मृत्यु तक अनेक रुपों में प्रभावित करता रहा है। टाल्सटॉय ने कहा है- "हमारे युग के उद्भट विद्वानों ने तय कर दिया है कि अब धर्म की कोई आवश्यकता नहीं तथा यह भी कि विज्ञान धर्म का स्थान लेगा अथवा ले चुका है। किन्तु फिर भी यह सत्य अमिट है कि धर्म के बिना न पहले, तथा न अब कोई मनुष्य, समाज और विवेकी पुरुष जीवित रहा है, न रह सकता है।

स्वामी विवेकानन्द ने धर्म का अर्थ स्पष्ट करते हुए लिखा है, 'धर्म वह है जो मानव को इस संसार और परलोक में आनन्द की खोज के लिये प्रेरित करता है। धर्म कर्म पर प्रस्थापित है। धर्म मानव को रात-दिन इस आनन्द को प्राप्त करने के लिये कार्य करवाता है।" डॉ. राधाकृष्णन ने लिखा है, "जिन सिद्धान्तों का हमें अपने दैनिक जीवन में और सामाजिक सम्बन्धों में पालन करना है, वे उस वस्तु द्वारा नियत किये गये हैं, जिसे धर्म कहा जाता है। यह सत्य का जीवन में मूर्त रूप हैं और हमारी प्रकृति को नये रूप में ढालने की शक्ति है।' पी.वी. काणे ने धर्म को परिभाषित करते हुए बतलाया है, "धर्म शास्त्रों के लेखकों ने धर्म का अर्थ एक मत या विश्वास नहीं माना है, अपितु उसे जीवन के एक ऐसे तरीके या आचरण जो व्यक्ति के समाज के सदस्य के रूप में और

व्यक्ति के रूप में, कार्य एवं क्रियाओं को नियमित करता है और जो व्यक्ति के क्रमिक विकास की दृष्टि से किया गया है और जो उसे मानव अस्तित्व के उद्देश्य तक पहुँचाने में सहायता करता है।"

धर्म की उपर्युक्त विवेचना से स्पष्ट है कि भारतीय धर्म-ग्रन्थों में धर्म का प्रयोग व्यापक अर्थों में हुआ है, किसी सम्प्रदाय विशेष के विचार मात्र को व्यक्त करने के लिये नहीं हुआ। धर्म मानव के कर्त्तव्य निर्धारित करता है, उसे सत्य की ओर अग्रसर करता हुआ उसके व्यवहार को दिशा देता है और उचित अनुचित का बोध कराता है। धर्म की समाजशास्त्रीय विवेचना के रूप में धर्म के अन्तर्गत उन सब कर्तव्यों को लिया जा सकता है जो व्यक्ति के जीवन को सफल बनाने की दृष्टि से आवश्यक हैं।

हिन्दू धर्म व्यक्ति के श्रेष्ठ विकास में योग देता है, उसके सर्वांगीण विकास में सहायता पहुंचाता है, उसमें मानवीय गुणों को जाग्रत करता है, उसे परिवार, समाज, राष्ट्र और विश्व के प्रति कर्तव्यों का बोध कराता है, उसके सरल समायोजन में योग देता है एवं धार्मिक मर्यादाओं में अर्थ का उपार्जन और काम का उपभोग करते हुए जीवन के परम लक्ष्य मोक्ष प्राप्ति की ओर अग्रसर करता है। हिन्दू धर्म में त्याग और भोग का आदर्श समन्वय पाया जाता है। व्यक्ति को यहाँ सांसारिक सुखों का उपभोग और जीवन की वास्तविकताओं से परिचय प्राप्त करते हुए, अपने इहलोक और परलोक को उत्तम बनाने की ओर अग्रसर किया गया है। हिन्दू धर्म में कर्तव्य की भवना पर जोर दिया गया है। जमनालाल बजाज के अनुसार "धर्म का मूल सिद्धान्त मानवीय आत्मा के गौरव को प्राप्त करना है, जो भगवान का निवास स्थान है। सब धर्मों का सर्व स्वीकृत मूल सिद्धान्त यह ज्ञान ही है कि परमात्मा जीवित प्राणी के हृदय में निवास करता है। समझ लो कि धर्म का सार यही है और फिर इसके अनुसार आचरण करो, दूसरों के प्रति ऐसा कुछ नहीं करना चाहिए जो यदि हमारे प्रति किया जाए, तो हमें अप्रिय लगे। यही धर्म का सार है, शेष सारा बर्ताव तो स्वार्थपूर्ण इच्छाओं से प्रेरित होता है। हमें दूसरों को अपना जैसा हो समझना चाहिए। जो अपने मन, वचन और कर्म से निरन्तर दूसरों के कल्याण में लगा रहता है और जो सदा दूसरों का मित्र रहता है वही धर्म को ठीक-ठीक समझता है।"

**भारतीय जाति-व्यवस्था** :

आदिकालीन समाजों से लेकर आज के आधुनिक जटिल समाजों तक में सामाजिक स्तरीकरण (Social Stratification) का कोई न कोई रूप अवश्य पाया जाता है। सामाजिक स्तरीकरण एक ऐसी व्यवस्था है जिसके द्वारा समाज को कई स्तरों में इस प्रकार विभाजित कर दिया जाता है कि प्रत्येक व्यक्ति एवं समूह के अधिकार एवं कर्त्तव्य अन्य व्यक्तियों तथा समूहों की तुलना में स्पष्ट मालूम पड़े। सामाजिक स्तरीकरण के माध्यम से विभिन्न स्तरों के व्यक्तियों के कार्य निर्धारित कर दिए जाते हैं और प्रत्येक स्तर का व्यक्ति यह समझ लेता है कि उससे किस प्रकार के व्यवहार की अपेक्षा की जाती है। समाज अपने अस्तित्व और प्रगति के लिए जिन कार्यों को विशेषतः महत्त्वपूर्ण मानता है, उन्हें योग्य से योग्य व्यक्तियों को सौंपना चाहता है। सामाजिक स्तरीकरण के द्वारा इसी उद्देश्य की पूर्ति की जाती है। एक समाज विशेष के सामाजिक मूल्यों और

संस्कृति की दृष्टि से जिन कार्यों को उच्च माना जाता है, उन्हें पूरा करने वालों को समाज में सर्वोच्च स्थान प्रदान किया जाता है। भारतीय समाज में सामाजिक स्तरीकरण को प्रभावित करने में धार्मिक मान्यताओं का विशेष योग रहा है।

महात्मा गांधी द्वारा भारतीय समस्याओं के समाधान हेतु संचालित रचनात्मक कार्यक्रम व उसमें जमनालाल जी बजाज द्वारा निष्पादित भूमिका व किये गये प्रयत्नों को स्पष्ट करेंगे। राष्ट्रीय एकता व राष्ट्र की स्वतंत्रता को सुरक्षित न रख पाना भूतकाल में हमारी राष्ट्रीय कमजोरी रही है, भारतीय इतिहास जिसका प्रमाण है । स्वराज्य साधना के अन्तर्गत रचनात्मक कार्यों के माध्यम से गांधी जी जिस नवसमाज का सृजन करना चाहते थे, उसमें यह राष्ट्रीय कमजोरी नहीं होगी, यह गांधी जी की अभिकल्पना थी।

भारतीय समाज को एक जातिगत समाज के नाम से पुकारा जा सकता है। जाति भारतीय समाज की एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण संस्था है। पिछले सैकड़ों, हजारों वर्षों से जाति-व्यवस्था अपने विभिन्न विधि-निषेधों के द्वारा भारतीय जीवन को प्रभावित करती रहीं है। लोगों ने जाति प्रणाली को ईश्वर की एक महान् कृति समझकर इसे हृदय से स्वीकार किया। आज जब परिवर्तनकारी शक्तियों के प्रभाव से लोग इसे एक अलौकिक व्यवस्था के रूप में मानने को तैयार नहीं हैं, तो इसने भी अपने स्वरूप में परिवर्तन कर लिया है। आज यह व्यक्तिगत एवं राजनीतिक स्वार्थों की पूर्ति का साधन बनकर अपने अस्तित्व को बनाये हुए है। भारतीय जाति प्रणाली ने विभिन्न सामाजिक समूहों को न्यूनाधिक मात्रा में प्रभावित अवश्य किया। यहाँ शायद ही कोई ऐसा सामाजिक समूह बचा हो जो इसके प्रभाव से पूर्णतः मुक्त हो। मुसलमान तथा ईसाई तक भी इसके प्रभाव से मुक्त नहीं रह सके। हमारे देश के मुसलमानों में 94 जातीय समूह पाये गये। ईसाई भी आज अनेक उच्च एवं निम्न स्थिति वाले समूहों में विभक्त हैं।

## निष्कर्ष :

जमनालाल बजाज भारतीय सामाजिक सुधार आंदोलन और स्वतंत्रता संग्राम के एक ऐसे विशिष्ट व्यक्तित्व थे, जिन्होंने न केवल गांधीवादी विचारधारा को आत्मसात किया, बल्कि उसे अपने जीवन में पूरी निष्ठा से लागू भी किया। वे समाज में व्याप्त जातिवाद, छुआछूत, स्त्री-शिक्षा की उपेक्षा, धार्मिक असहिष्णुता जैसी कुप्रथाओं के विरुद्ध दृढ़ता से खड़े हुए और अपने व्यक्तिगत आचरण द्वारा समाज के समक्ष एक अनुकरणीय उदाहरण प्रस्तुत किया।

उन्होंने वर्ण-व्यवस्था को कर्म आधारित माना, जाति व्यवस्था की जड़ता का विरोध किया और हरिजनों के उत्थान के लिए कार्य किया। उनके प्रयासों से मंदिरों के दरवाजे दलितों के लिए खुले और समाज में समरसता का वातावरण बना। धर्म के विषय में उनका दृष्टिकोण अत्यंत उदार, मानवीय और कर्तव्यपरक था। उन्होंने धर्म को मानव-कल्याण और आत्मा के गौरव से जोड़कर देखा, न कि संकीर्ण आडंबरों और रूढ़ियों से।

स्त्रियों की शिक्षा, ग्रामीण विकास, खादी और स्वदेशी उद्योगों के प्रचार-प्रसार में उनका योगदान स्थायी महत्व का है। उन्होंने महिला शिक्षा को सामाजिक परिवर्तन का आधार माना और महिला आश्रमों की स्थापना की। बजाज समूह द्वारा शिक्षा, स्वास्थ्य, कला, संस्कृति, खेल तथा तकनीकी संस्थानों के उत्थान में किया गया योगदान आज भी उनकी विरासत को जीवंत बनाए हुए है।

इस प्रकार, जमनालाल बजाज का सामाजिक विचार केवल सैद्धांतिक नहीं था, बल्कि उसका धरातल व्यावहारिक और क्रियात्मक था। उन्होंने भारतीय समाज के पुनर्निर्माण के लिए जिस निष्ठा, साहस और संवेदनशीलता से कार्य किया, वह उन्हें एक महान समाज सुधारक और गांधीवादी विचारों के सच्चे अनुयायी के रूप में स्थापित करता है। उनका जीवन समरस, समावेशी और संवेदनशील समाज के निर्माण का प्रेरणास्रोत है।

## संदर्भ :


Ghurye, G. S. (1961). *Caste, Class, and Occupation*. Bombay: Popular Book Depot.

Cooley, C. H. (1909). *Social Organization: A Study of the Larger Mind*. New York: Charles Scribner's Sons.

Risley, H. H. (1915). *The People of India* (2nd ed.). Calcutta & Simla: Thacker, Spink & Co.; London: W. Thacker & Co.

Hutton, J. H. (1946). *Caste in India: Its Nature, Function, and Origins*. Oxford: Oxford University Press.

Martindale, D., & Monachesi, E. D. (1951). *Elements of Sociology*. New York: Harper & Brothers.

Ketkar, S. V. (1909). *History of Caste in India*. Bombay: [Self-published].

राधाकृष्णन, स. (1947). *धर्म और समाज [Religion and Society]*. Delhi: Rajpal & Sons.

मुकर्जी, रा. क. (1945). *भारतीय समाज विन्यास*. Delhi: JaiGyan Digital Library.

बजाज, रामकृष्ण. (1965). *रचनात्मक राजनीति*. नई दिल्ली: सस्ता साहित्य मंडल.

बजाज, रामकृष्ण. (1923-29). *जमनालाल बजाज की डायरी*. नई दिल्ली: सस्ता साहित्य मंडल.

# निजामाबाद के हस्तशिल्प श्रमिकों की समस्याएं एवं चुनौतियों का अध्ययन

**अनुराग सिंह*** **डॉ. वरुण कुमार उपाध्याय†**

**anuragsingh7592@ gmail.com** **varunbhu123@gmail.com**

**शोध सार**

कुम्भकार जीवन के प्रतिदिन रोजमर्रा, उत्सव, धार्मिक कार्य सभी के लिए आवश्यक हैं। उनके द्वारा निर्मित मिट्टी के विभिन्न पात्र उपर्युक्त सभी में उपयोगी एवं आवश्यक हैं। उनके महत्व को देखते हुए अन्य शिल्पियों के साथ-साथ कुम्भकारों को भी नए नगर बसाने समय आमंत्रित किया जाता था। मिलिन्दपन्ह में नगर में अन्य शिल्पियों के साथ कुम्भकार को भी आमंत्रित करने का उल्लेख मिलता हैं। राजा अथवा जमीदार कुम्भकारों को बस्ती के बाहर जमीन देकर बसाते थे। वर्षा ऋतु में जब वे पात्र आदि नहीं बनाते थे, तो जीविका के लिए खेती करते। कुम्भकारों की बस्ती को समुदाय के अनुसार कुम्भकार टोली या टोला कहा जाता है। कुम्भकार उत्सव, धार्मिक आयोजनों पर आवश्यक बर्तन देते थे। जिसके लिए उन्हें रुपए, अन्न एवं कपड़ा प्राप्त होते थे। इसे जजमानी या यजमानी कहा जाता हैं। संस्कृत भाषा में मिट्टी के मटके को कुम्भकार कहा जाता हैं, जिसमें पानी संचयन किया जाता था। यद्यपि 'कु' शब्द का अर्थ-मिट्टी है। सम्पूर्ण भारत में मिट्टी पात्र सृजन कार्य करने वाले के नाम की उत्पत्ति 'कु' शब्द से होती हैं जैसे- कुम्भकार, कुम्हार, कुमार तथा कुम्भा आदि।

भारत की सांस्कृतिक विरासत का प्रमुख हिस्सा उसकी हस्तशिल्प कला है, जो पीढ़ी दर पीढ़ी चली आ रही है। उत्तर प्रदेश के आज़मगढ़ ज़िले का निज़ामाबाद क्षेत्र विशेष रूप से अपनी काली मिट्टी के बर्तनों (Black Pottery) के लिए देश और विदेश में प्रसिद्ध है। यह शिल्पकला बेहद अनोखी है, क्योंकि इसमें बिना किसी चमकदार लेप के बर्तनों को भट्ठी में पकाकर चमक दी जाती है। यह कला स्थानीय कारीगरों की मेहनत, रचनात्मकता और परंपरा की मिसाल है। हालांकि, आज यह कला गंभीर संकट का सामना कर रही है। आधुनिक युग की माँग, मशीनों की बढ़ती प्रतिस्पर्धा, बाज़ार की अनिश्चितता और सरकारी सहयोग की कमी ने कारीगरों के जीवन को कठिन बना दिया है। आइए विस्तार से समझते हैं कि निज़ामाबाद के हस्तशिल्प कारीगर किन समस्याओं और चुनौतियों से जूझ रहे हैं।

**मुख्य शब्द :** कुम्भकार, जमींदार, सांस्कृतिक विरासत, हस्तशिल्प कला, परंपरा

* **शोधार्थी, समाजशास्त्र विभाग, महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा**

† **सहायक आचार्य, समाजशास्त्र विभाग, महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा**

**प्रस्तावना**

भारत की पारंपरिक हस्तशिल्प उद्योग प्रणाली, ग्रामीण आजीविका, सांस्कृतिक विरासत और स्वदेशी कौशल का एक जीवंत उदाहरण है। उत्तर प्रदेश के आज़मगढ़ जनपद का निज़ामाबाद क्षेत्र विशेष रूप से अपने काले मिट्टी के बर्तनों और मृत्तिका शिल्प के लिए प्रसिद्ध है, जहाँ पीढ़ियों से हजारों कारीगर इस कला में संलग्न हैं। हालाँकि यह पारंपरिक कला सामाजिक-सांस्कृतिक रूप से अत्यंत मूल्यवान है, परंतु आज के वैश्वीकरण और औद्योगिक प्रतिस्पर्धा के युग में हस्तशिल्प से जुड़े कारीगरों की कार्य स्थितियाँ अत्यंत दयनीय और चिंताजनक होती जा रही हैं।

निज़ामाबाद क्षेत्र के कारीगरों को आर्थिक अस्थिरता, अपर्याप्त मजदूरी, तकनीकी नवाचारों की कमी, आधुनिक बाजारों से कटाव, सरकारी योजनाओं की अनुपलब्धता, और सामाजिक सुरक्षा की अनुपस्थिति जैसी समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है। इसके साथ ही, कारीगर समुदायों में शिक्षा का अभाव, बाल श्रम की प्रवृत्ति, स्वास्थ्य संबंधी जोखिम, और महिला कारीगरों के साथ व्याप्त लैंगिक भेदभाव, उनकी सामाजिक स्थिति को और अधिक जटिल बना देते हैं।

अधिकांश श्रमिक असंगठित क्षेत्र में कार्यरत हैं जहाँ न तो स्थायी रोजगार की गारंटी है, न ही उन्हें किसी प्रकार की पेंशन, बीमा, या चिकित्सकीय सुविधाएँ प्राप्त होती हैं। बिचौलियों और व्यापारिक दलालों द्वारा उनका आर्थिक शोषण किया जाता है, जिससे उनके श्रम का वास्तविक मूल्य उन्हें नहीं मिल पाता। महिलाएँ और बच्चे, जो इस उद्योग का अभिन्न हिस्सा हैं, विशेष रूप से उपेक्षित और शोषित होते हैं।

यह समाजशास्त्रीय अध्ययन इस आवश्यकता की ओर इंगित करता है कि हस्तशिल्प उद्योग से जुड़ी कार्य स्थितियों एवं कारीगरों की समस्याओं को एक सामाजिक संरचना के भीतर समझा जाए, ताकि इस परंपरा को नष्ट होने से बचाया जा सके और इसमें कार्यरत श्रमिकों को सम्मानजनक जीवन और टिकाऊ आजीविका मिल सके।

**अध्ययन का उद्देश्य-**

निज़ामाबाद के हस्तशिल्प कारीगरों की सामाजिक-आर्थिक स्थिति, उनकी कार्य परिस्थितियाँ, पारिवारिक और सामाजिक जीवन पर प्रभाव, सरकारी योजनाओं की उपलब्धता, तथा उनके जीवन में आने वाली सामाजिक चुनौतियों का गहन विश्लेषण करना। यह अध्ययन नीति निर्माताओं, समाजशास्त्रियों, और विकास संस्थाओं को हस्तशिल्प उद्योग के संरक्षण और श्रमिकों की बेहतरी हेतु प्रभावी रणनीतियाँ बनाने में सहायता प्रदान कर सकता है।

भारत की पारंपरिक हस्तशिल्प उद्योग न केवल देश की सांस्कृतिक धरोहर का प्रतीक है, बल्कि यह लाखों कारीगरों के जीवनयापन का साधन भी है। उत्तर प्रदेश के आज़मगढ़ जनपद के निज़ामाबाद क्षेत्र में काले मिट्टी के बर्तन और अन्य मिट्टी कला उत्पादों के लिए यह क्षेत्र विख्यात है। परंतु इस क्षेत्र के हस्तशिल्प श्रमिकों को अनेक सामाजिक, आर्थिक एवं शारीरिक चुनौतियों का सामना करना पड़ता है।

इस अध्ययन का उद्देश्य निज़ामाबाद क्षेत्र में कार्यरत हस्तशिल्प श्रमिकों की कार्य स्थितियों, आय के स्रोतों, पारिवारिक जीवन पर प्रभाव, स्वास्थ्य समस्याओं, बाल श्रम, लिंग असमानता, कारीगरों की शिक्षा की स्थिति, सरकारी योजनाओं की पहुँच और सामाजिक सुरक्षा जैसे पहलुओं का गहन समाजशास्त्रीय विश्लेषण करना है। यह अध्ययन यह भी स्पष्ट करता है कि किस प्रकार वैश्वीकरण, आधुनिक तकनीकी हस्तक्षेप तथा बिचौलियों की भूमिका इन श्रमिकों की पारंपरिक आजीविका को प्रभावित कर रही है।

**शोध का औचित्य:**

निजामाबाद, आज़मगढ़ का काले मिट्टी के बर्तन उद्योग भारतीय हस्तशिल्प का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है। इस उद्योग की अपनी विशिष्टता, तकनीक, और सांस्कृतिक महत्व है, जो इसे न केवल स्थानीय बल्कि राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर भी प्रसिद्ध बनाता है। इस उद्योग में कार्यरत श्रमिकों की जीवनशैली, कार्यकुशलता, सामाजिक-आर्थिक स्थिति और उनकी समस्याओं को समझने के लिए शोध (Research) आवश्यक है।

**शोध का महत्व:**

प्रस्तुत शोध वर्णात्मक प्रारूप पर आधारित है। इसलिए यह शोध कार्य गुणात्मक एवं मात्रात्मक प्रकृति का सम्मिश्रण भी है। निजामाबाद के काले बर्तन उद्योग के श्रमिकों पर शोध करते समय अनुसंधान पद्धति का सही चयन करना बहुत महत्वपूर्ण होता है, क्योंकि यह कई प्रकार के डेटा और तथ्यों को एकत्रित करने में मदद करता है।

**साहित्य पुनरावलोकन**

शोधार्थी द्वारा निजामाबाद के हस्तशिल्प श्रमिकों की सामाजिक-आर्थिक स्थिति का अध्ययन के लिए निम्नलिखित साहित्यावलोकन का अध्ययन किया गया है।

**पेरीमैन. जेन, (2000), की पुस्तक, "ट्रेडिशनल पॉटरी ऑफ इंडिया"** में उन्होंने भारत के विभिन्न हिस्सों में सृजित किये जाने वाले विभिन्न प्रकार के मिट्टी के बर्तनों का विवरण सम्मिलित किया है जिसमें निज़ामाबाद के बर्तनों का भी विवरण शामिल है। जेन ने अपनी पुस्तक में न केवल मिट्टी के बर्तनों के रचनात्मक पहलुओं के बारे में बताती हैं, बल्कि उन समुदायों के संगठन और इतिहास के बारे में भी बात करती हैं, जो इन उत्कृष्ट कृतियों को बनाने में अमूल्य योगदान दे रहे हैं।

**जसलीन धमीजा, निज़ामाबाद की काली मिट्टी के बर्तन के बारे में अपनी पुस्तक इंडियन फोक आर्ट एण्ड क्राफ्ट (1970)** में लिखती हैं कि उत्तर प्रदेश के आज़मगढ़ में निजामाबाद स्थित है, जहाँ पर काली मिट्टी बर्तन बनाए जाते हैं। यह मुख्य रूप से विकसित अवस्था में था। निज़ामाबाद काली मिट्टी के बर्तन जिसमें अलंकरण रुपहले रंग से होते है, जो काली चमक से प्रभावित है, और का बीस में गेहूं के खेत की मिट्टी, आम के पेड़ की छाल से बनाते है तथा निम्न ताप पर पकाते हैं।

**ब्रह्म स्वरूप ने निजामाबाद के मृण्मय पात्र एक अध्ययन (2017)** के रूप में अप्रकाशित शोध प्रबंध प्रस्तुत किया गया है, जिसमें निजामाबाद की राजनैतिक एवं भौगोलिक परिचय के साथ-साथ निजामाबाद के मृण्मय पात्र एवं शैलीगत विशेषताओं का विवरण प्रस्तुत किया गया है।

**राजकुमार पाण्डेय ने निजामाबाद की काली मृद्भांड परंपरा का कलात्मक एवं सांस्कृतिक अध्ययन (2020)** के रूप में अपना शोध ग्रंथ प्रस्तुत किया गया, जिसमें उन्होंने निजामाबाद की सामाजिक – सांस्कृतिक एवं कलात्मक विषयों पर गहन विश्लेषण किया एवं साथ ही साथ निजामाबाद के हस्तशिल्प श्रमिकों (कुंभकारों) के मिट्टी के काले पात्रों के बनाने की कला एवं कुशलता को बताया हैं।

**शोध प्रश्न**

1. हस्तशिल्प उद्योग में संलग्न श्रमिकों की समस्याएं कैसी हैं ?
2. हस्तशिल्प उद्योग में लगे श्रमिकों की चुनौतियों किस प्रकार की हैं ?

**शोध उद्देश्य**

1- हस्तशिल्प उद्योग में संलग्न श्रमिकों की समस्याओं का अध्ययन करना
2- हस्तशिल्प उद्योग में लगे श्रमिकों की चुनौतियों का अध्ययन करना

**शोध प्रविधि एवं उपकरण**

प्रस्तुत शोध उद्देश्य का अध्ययन करने के लिए वर्णात्मक शोध प्रविधि का प्रयोग किया गया हैं। सर्वेक्षण, साक्षात्कार तथा क्षेत्रीय अवलोकन के माध्यम से संकलित तथ्यों के आधार पर यह अध्ययन यह दर्शाता है कि हस्तशिल्प उद्योग से जुड़े श्रमिक अत्यधिक श्रम करने के बावजूद न्यूनतम पारिश्रमिक पर कार्य करते हैं, सामाजिक सम्मान की कमी से ग्रसित हैं और शिक्षा एवं स्वास्थ्य जैसी मूलभूत सुविधाओं से वंचित हैं। इसके साथ ही महिलाओं की भूमिका महत्त्वपूर्ण होते हुए भी उन्हें पर्याप्त मान्यता नहीं मिलती। यह समाजशास्त्रीय अध्ययन नीति निर्माताओं, गैर-सरकारी संगठनों और सामाजिक शोधकर्ताओं को यह समझने में सहायता करेगा कि इन श्रमिकों की समस्याओं के समाधान हेतु क्या प्रयास आवश्यक हैं, जिससे उनके जीवनस्तर में सुधार किया जा सके और भारत की इस प्राचीन कारीगरी को संरक्षित किया जा सके।

**जनसंख्या**

प्रस्तुत शोध उद्देश्य उत्तर प्रदेश के आजमगढ़ जनपद के निजामाबाद तहसील क्षेत्र पर आधारित हैं। यह शोध निजामाबाद क्षेत्र के हस्तशिल्प उद्योग में कार्यरत काली मिट्टी के बर्तन (ब्लैक पॉटरी ) का निर्माण करने वाले श्रमिक परिवारों से संबंधित हैं। यहाँ पर बहुतायत प्रजापति (कुम्भहार) परिवार इस व्यवसाय में संलग्न हैं। इस क्षेत्र में हुसेनाबाद,फरहाबाद एवं राजेन्द्रनगर आदि स्थान हैं, जहां पर हस्तशिल्प श्रमिक परिवार निवास करते हैं। प्रस्तुत शोध उद्देश्य निजामाबाद क्षेत्र के श्रमिक परिवारों की समस्याओं एवं चुनौतियों पर आधारित हैं।

**न्यायदर्श**

प्रस्तुत शोध उद्देश्य की परिपूर्ति हेतु शोधार्थी द्वारा निजामाबाद क्षेत्र के हस्तशिल्प उद्योग में कार्यरत 132 श्रमिक परिवारों के सदस्यों को सुविधाजनक न्यायदर्श विधि के द्वारा चयन किया गया हैं।

**शोध उपकरण**

प्रस्तुत शोध उद्देश्य की परिपूर्ति हेतु शोधार्थी द्वारा निजामाबाद क्षेत्र के हस्तशिल्प उद्योग में कार्यरत श्रमिकों के अध्ययन के लिए साक्षात्कार अनुसूची का प्रयोग किया गया हैं। साक्षात्कार अनुसूची उपकरण के द्वारा निजामाबाद क्षेत्र के हस्तशिल्प श्रमिक परिवारों की समस्याओं एवं चुनौतियों का अध्ययन किया गया हैं। इस उपकरण के माध्यम से जनसांख्यिकीय आधार पर कुल 13 प्रश्न रखे गए हैं एवं उपकरण के द्वारा इन प्रश्नों को ज्ञात किया गया हैं।

**तथ्य संकलन**

प्रस्तुत शोध उद्देश्य की परिपूर्ति हेतु शोधार्थी द्वारा तथ्य संकलन के लिए प्राथमिक एवं द्वितीयक स्रोतों का उपयोग किया गया हैं। इसके अतिरिक्त शोधार्थी द्वारा स्वनिर्मित सामाजिक- आर्थिक साक्षात्कार मापनी का प्रयोग किया गया हैं।

**शोध क्षेत्र की प्रमुख समस्याएं एवं चुनौतियाँ**

प्रस्तुत शोध उद्देश्य के निज़ामाबाद क्षेत्र, जो अपनी पारंपरिक काली मिट्टी के बर्तनों और विशिष्ट हस्तशिल्प के लिए विख्यात है, वहाँ हजारों कारीगर पीढ़ियों से इस पारंपरिक कला से जुड़े हुए हैं। यद्यपि यह क्षेत्र सांस्कृतिक दृष्टि से समृद्ध है, परंतु यहाँ के हस्तशिल्प श्रमिकों को अनेक प्रकार की जटिल और बहुआयामी समस्याओं का सामना करना पड़ता है, जो न केवल उनकी आर्थिक स्थिति को प्रभावित करती हैं, बल्कि उनके सामाजिक जीवन, मानसिक स्वास्थ्य और पारिवारिक संरचना पर भी गंभीर प्रभाव डालती हैं।

**1. आर्थिक अस्थिरता और न्यूनतम पारिश्रमिक :** श्रमिक अत्यधिक मेहनत करने के बावजूद उन्हें उनकी कला का उचित मूल्य नहीं मिल पाता। स्थानीय बाजारों में बिचौलियों की भूमिका और राष्ट्रीय-अंतर्राष्ट्रीय बाजारों तक सीधा संपर्क न होना उनके शोषण का प्रमुख कारण है। यह अस्थिर आय व्यवस्था उनके जीवन की मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति में बाधा बनती है।

**2. शैक्षणिक पिछड़ापन और बाल श्रम :** गरीब आर्थिक स्थिति के कारण श्रमिक अपने बच्चों को शिक्षा देने में असमर्थ रहते हैं। फलस्वरूप, बच्चे कम उम्र में ही इस कार्य में लग जाते हैं और बाल श्रम की समस्या गहराती है, जिससे एक नई पीढ़ी भी इसी चक्र में फँस जाती है।

**3. स्वास्थ्य संबंधी समस्याएँ :** अत्यधिक समय तक मिट्टी, धूल, धुएँ और विषैली रंगों के संपर्क में रहने के कारण कारीगरों को श्वसन संबंधी बीमारियाँ, त्वचा रोग, आंखों की समस्या और रीढ़ की हड्डी से संबंधित

कष्ट होते हैं। चिकित्सा सुविधाओं की कमी के कारण ये समस्याएँ समय पर इलाज के अभाव में गंभीर रूप धारण कर लेती हैं।

**4. महिलाओं की दोहरी भूमिका और असमानता :** बड़ी संख्या में महिलाएँ भी हस्तशिल्प कार्यों में शामिल होती हैं, परंतु उन्हें न तो उचित श्रम मूल्य मिलता है और न ही सामाजिक मान्यता। वे घरेलू कार्यों के साथ-साथ कारीगरी में भी बराबर भाग लेती हैं, लेकिन निर्णय लेने की प्रक्रिया से वे वंचित रहती हैं।

**5. सरकारी योजनाओं की अपर्याप्त पहुँच :** हस्तशिल्प को बढ़ावा देने हेतु सरकार द्वारा कई योजनाएँ चलाई जाती हैं, परंतु निज़ामाबाद क्षेत्र के अधिकांश कारीगर इन योजनाओं से अनजान रहते हैं या इन्हें प्राप्त करने की प्रक्रिया इतनी जटिल होती है कि वे लाभ नहीं उठा पाते। इस कारण सरकारी सहायता महज़ कागज़ों तक सीमित रह जाती है।

**6. सामाजिक असुरक्षा और भविष्य की चिंता :** हस्तशिल्प कारीगरों के पास कोई सामाजिक सुरक्षा जैसे बीमा, पेंशन या स्वास्थ्य कार्ड नहीं होता। वृद्धावस्था में आय का कोई निश्चित साधन न होने के कारण उन्हें भरण-पोषण में कठिनाई होती है। यह असुरक्षा उनकी मानसिक चिंता को भी बढ़ाती है।

**7. तकनीकी प्रशिक्षण और बाज़ार की समझ का अभाव :** श्रमिकों को आधुनिक डिज़ाइन, ऑनलाइन मार्केटिंग और डिजिटल टूल्स की जानकारी नहीं होती, जिससे वे वैश्विक प्रतिस्पर्धा में पीछे रह जाते हैं। स्थानीय स्तर पर प्रशिक्षण की कमी इस समस्या को और बढ़ाती है।

**8. श्रमिकों की सामाजिक-आर्थिक स्थिति:** श्रमिकों की सामाजिक स्थिति पर विचार करते हुए यह स्पष्ट होता है कि वे समाज के वंचित वर्ग से आते हैं। अनुसूचित जाति, पिछड़ी जाति एवं मुस्लिम समुदाय के अधिकांश परिवार हस्तशिल्प से जुड़े हुए हैं। आर्थिक दृष्टिकोण से ये परिवार गरीबी रेखा के नीचे जीवन यापन करते हैं। इनके पास न तो पर्याप्त शिक्षा है और न ही स्वास्थ्य संबंधी जानकारी या सुविधा। महिलाओं की स्थिति और भी चिंताजनक है – वे घरेलू कार्यों के साथ-साथ हस्तशिल्प कार्य में भी संलग्न रहती हैं, लेकिन उन्हें श्रम का उचित मूल्य नहीं मिल पाता।

**9. तकनीकी एवं संस्थागत चुनौतियाँ :** तकनीक की दृष्टि से देखा जाए तो श्रमिक अभी भी पारंपरिक औजारों और तकनीकों का उपयोग कर रहे हैं, जिससे उनकी उत्पादकता और गुणवत्ता प्रभावित होती है। यद्यपि कुछ क्षेत्रों में बिजली चालित चाक का आगमन हुआ है, परंतु उनका प्रसार सीमित है। प्रशिक्षण की भी भारी कमी है, जिससे नई डिज़ाइन, ट्रेंड्स और अंतरराष्ट्रीय बाजार की मांगों को समझना कठिन हो जाता है। सरकारी योजनाएँ जैसे कि हस्तशिल्प विकास योजना, मुद्रा योजना, या उद्यमिता विकास कार्यक्रम श्रमिकों तक या तो पहुँच नहीं पाते या उन्हें इनके बारे में जानकारी ही नहीं होती।

**10. बाजार एवं विपणन की समस्याएँ :** हस्तशिल्प उत्पादों के विपणन की समस्या अत्यंत गंभीर है। कारीगर अपने उत्पादों को सीधे उपभोक्ता तक नहीं पहुँचा पाते, जिससे उन्हें बिचौलियों पर निर्भर रहना पड़ता

है। ये बिचौलिये अधिक लाभ प्राप्त करते हैं जबकि श्रमिकों को न्यूनतम मूल्य प्राप्त होता है। वैश्वीकरण और बड़े ब्रांडों की प्रतिस्पर्धा में स्थानीय उत्पाद कहीं खो से गए हैं। साथ ही, ई-कॉमर्स और डिजिटल विपणन का लाभ कारीगरों तक नहीं पहुँच पाया है।

**11. श्रमिकों की स्वास्थ्य एवं शिक्षा संबंधी चुनौतियाँ :** श्रमिकों के स्वास्थ्य की स्थिति भी अत्यंत चिंताजनक है। लंबे समय तक झुक कर बैठने, लगातार धागों के संपर्क में रहने और धूलयुक्त वातावरण में काम करने से उन्हें अनेक बीमारियाँ होती हैं – जैसे दृष्टि क्षीणता, पीठ दर्द, त्वचा रोग आदि। इन श्रमिकों के पास न तो नियमित स्वास्थ्य परीक्षण की सुविधा है और न ही कोई बीमा योजना। शिक्षा की स्थिति भी दयनीय है; बच्चों की पढ़ाई अधूरी रह जाती है क्योंकि वे छोटी उम्र से ही काम में लग जाते हैं। इससे बाल श्रम की प्रवृत्ति बढ़ती है और आने वाली पीढ़ी के लिए विकल्प सीमित हो जाते हैं।

**12. संस्कृति, परंपरा और भविष्य की चिंता :** हस्तशिल्प न केवल एक पेशा है बल्कि यह एक संस्कृति है – एक परंपरा जो पीढ़ियों से चली आ रही है। परंतु वर्तमान चुनौतियों और उपेक्षा के कारण यह परंपरा संकट में है। नई पीढ़ी इस व्यवसाय को अपनाने से हिचकिचा रही है। यदि यह स्थिति यूं ही बनी रही तो वह दिन दूर नहीं जब यह समृद्ध सांस्कृतिक परंपरा केवल इतिहास के पन्नों में सिमट कर रह जाएगी।

**परिणाम**

हस्तशिल्प उद्योग में लगे श्रमिकों की समस्याओं एवं चुनौतियों का अध्ययन करने के लिए साक्षात्कार अनुसूची विधि का प्रयोग किया गया जिसमें हस्तशिल्प उद्योग के श्रमिकों के समक्ष आने वाली समस्याओं और चुनौतियों की स्थिति पर मुख्य आयाम के रूप से ध्यान आकृष्ट किया गया हैं एवं उसमें कुल 13 प्रश्नों को रखा गया हैं। इन प्रश्नों की गुणात्मक विवरण अधोलिखित हैं – शोधार्थी द्वारा निजामाबाद क्षेत्र के आने वाले हस्तशिल्प श्रमिक सदस्यों के सामने आने वाली समस्याओं एवं चुनौतियों की स्थिति पर प्रश्न पूछने पर बताया गया कि 75.76% उत्तरदाताओं का मानना है कि हस्तशिल्प व्यवसायी परिवारों की स्थिति दयनीय होने का कारण अत्यधिक महँगाई का बढ़ना है और 21.97% लोगों का मानना है की उपर्युक्त चार विकल्पों के अलावा अन्य कारण है, इसके अलावा 2.27% लोगों का मानना है की परिवारों की स्थिति दयनीय होने का कारण आर्थिक तंगी है। उत्तरदाता सदस्यों का कहना हैं कि बाजार में कभी लाभ अत्यधिक और कम प्राप्त होता हैं फिर भी हम लोग यह व्यवसाय नहीं छोड़ना चाहते हैं क्योंकि यह व्यवसाय हमें विरासत में मिली हैं और हम क्या हमारी आने वाली पीढ़ी भी इस व्यवसाय को करना चाहेगी। पहले इस कला की महत्ता लोगों नहीं पता था लेकिन अब सभी लोग जागरूक हैं और इस व्यवसाय को बड़ी तदात में कर रहे हैं। कार्य में चुनौतियाँ और समस्याएं तो बहुत हैं फिर यह व्यवसाय हमारे रोजी-रोटी का आर्थिक आधार हैं श्रमिकों का कहना हैं पहले सरकार का ध्यान व्यवसाय पर न होने से श्रमिक बहुत मुश्किल हालत से गुजर रहे थे परंतु 2015 से राज्य सरकार ने निरंतर इस व्यवसाय पर ध्यान देना शुरू किया और आज की स्थिति में कला,

व्यवसाय एवं श्रमिकों सभी की स्थिति बेहतर हैं और हस्तशिल्प श्रमिक सदस्यों को लाभ प्राप्त हो रहा हैं और समस्याओं का निराकरण हो रहा हैं। सदस्य श्रमिकों का मानना हैं कि काली मिट्टी के बर्तनों को बेचने में सबसे अधिक समस्या परिवहन के साधनों का उचित प्रबंध न होने से कठिनाईयों का सामना करना पड़ता हैं।

**निष्कर्ष**

निज़ामाबाद क्षेत्र के हस्तशिल्प श्रमिक बहुआयामी समस्याओं से जूझ रहे हैं। यह आवश्यक है कि समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से इन समस्याओं का गहन अध्ययन कर नीतिगत समाधान सुझाए जाएँ। सरकारी व गैर-सरकारी संस्थाओं को मिलकर श्रमिकों की शिक्षा, स्वास्थ्य, सामाजिक सुरक्षा और बाज़ार से जोड़ने हेतु ठोस प्रयास करने होंगे, ताकि यह पारंपरिक कला जीवित रह सके और कारीगरों का जीवन स्तर बेहतर बन सके। हस्तशिल्प उद्योग के श्रमिकों की कार्य दशायें एवं समस्याएं: आजमगढ़ जनपद के निजामाबाद तहसील के विशेष सन्दर्भ में" विषय पर आधारित यह शोध प्रबंध भारत की प्राचीन हस्तशिल्प परंपरा की सामाजिक-आर्थिक बुनियाद को समझने का एक विनम्र प्रयास है। इस शोध के माध्यम से यह स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है कि हस्तशिल्प केवल एक कलात्मक अभिव्यक्ति नहीं है, बल्कि यह भारत के ग्रामीण एवं अर्ध-शहरी क्षेत्रों में करोड़ों लोगों की आजीविका से भी जुड़ा हुआ है। विशेषकर आजमगढ़ जनपद के निजामाबाद तहसील में यह उद्योग वर्षों से जीवित है और स्थानीय सांस्कृतिक पहचान का अभिन्न हिस्सा रहा है।

शोध के दौरान संकलित तथ्यों और आँकड़ों के आधार पर यह पाया गया कि हस्तशिल्प उद्योग से जुड़े श्रमिकों की कार्य दशाएं अत्यंत कठिन एवं असंतोषजनक हैं। अधिकांश श्रमिक अनौपचारिक क्षेत्र में कार्यरत हैं, जिनके पास रोजगार की स्थिरता, स्वास्थ्य सुविधाएं, सामाजिक सुरक्षा या किसी प्रकार की पेंशन योजना उपलब्ध नहीं है। काम के घंटे अत्यधिक हैं, पारिश्रमिक न्यून है और कार्य स्थलों की परिस्थितियाँ अमानवीय तक कही जा सकती हैं। इन कारणों से श्रमिकों का जीवन स्तर अत्यंत निम्न बना हुआ है, और नई पीढ़ी इस परंपरा से विमुख हो रही है।

**संदर्भ :-**

Perryman, Jane. (2000). *Traditional Pottery of India*. A & C Black, London. pp. 66–73

राय, गोविन्दचंद्र. (1997). *प्राचीन भारतीय मिट्टी के बर्तन*. वाराणसी: चौखम्बा विद्या भवन. पृ. 14,16,36

ब्रह्म, स्वरूप. (2017). *निजामाबाद के मृण्मय पात्र: एक अध्ययन*. वाराणसी.

पाण्डेय, राजकुमार. (2020). *निजामाबाद की काली मृद्भांड परंपरा का कलात्मक एवं सांस्कृतिक अध्ययन*. वाराणसी.

जोशी, पी. सी. (1963). उत्तर प्रदेश में स्वदेशी हस्तशिल्प का पतन. *सेज जर्नल*, पृ. 24–35.

हेमराजानी, प्रेम रीता, & तिवारी, मधुलिका. (2023). हथकरघा और हस्तशिल्प क्षेत्र का विकास और बढ़ावा. *कुरुक्षेत्र*. नई दिल्ली: ग्रामीण विकास मंत्रालय.

सक्सेना, कृष्ण ऋषभ. (2023). ग्रामीण अर्थव्यवस्था में हस्तशिल्प का योगदान. कुरुक्षेत्र. नई दिल्ली: ग्रामीण विकास मंत्रालय.

नारायण, राव एम. वी. (2002). *हमारा हस्तशिल्प* (डी. एन. श्रीनाथ, अनु.). नई दिल्ली: नेशनल बुक ट्रस्ट इंडिया. ISBN: 81-237-4174-X.

Business Today. (2020, August 20). *Covid-19 impact on handicrafts sector: Handloom artisans suffering due to coronavirus lockdown*. https://www.businesstoday.in/opinion/columns/story/covid19-impact-on-handicrafts-sector-handloom-artisans-suffering-due-to-coronavirus-lockdown-270592-2020-08-20

आहूजा, राम. (2019). *भारतीय समाज*. जयपुर: रावत पब्लिकेशन.

गांधी, हेमा. (2009). हस्तशिल्प से रोजगार. *कुरुक्षेत्र पत्रिका*. नई दिल्ली: ग्रामीण विकास मंत्रालय.

मेनन, हेमंत. (2023). स्थानीय परंपराओं के परिप्रेक्ष्य में ग्रामीण शिल्प. *कुरुक्षेत्र*. नई दिल्ली: सूचना भवन.

दीनदयाल हस्तकला संकुल. (2017, सितम्बर 22). *व्यापार केंद्र और शिल्प संग्रहालय*. वाराणसी.

रावत, हरीकृष्ण. (2015). *सामाजिक शोध की विधियाँ*. जयपुर: रावत पब्लिकेशन.

सिन्हा, कुमार अशोक. *बिहार के हस्तशिल्प*. पटना: उपेंद्र महारथी शिल्प अनुसंधान संस्थान.

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद. (2011). *भारतीय हस्तकला की परंपराएं: भूत, वर्तमान और भविष्य*. नई दिल्ली.

समाज कल्याण विभाग. *हस्तशिल्प एवं ग्रामीण विकास वेबसाइट*. [सरकारी वेबसाइट]

विकास आयुक्त कार्यालय. *हस्तशिल्प वेबसाइट*. [सरकारी वेबसाइट]

उत्तर प्रदेश सरकार. (2018, जनवरी 24). *एक जनपद, एक उत्पाद*. [सरकारी वेबसाइट]

पटेल, सुनीता कुमारी. (2009). बदलते दौर में हस्तकला. *कुरुक्षेत्र*. नई दिल्ली: ग्रामीण विकास मंत्रालय.

सर्वमंगला. (2012). भारत में कुटीर और हस्तशिल्प उद्योग: ग्रामीणों के लिए चुनौतियां और अवसर. *पेरिपेक्स*.

योजना. (2019, अप्रैल). *निर्माण भवन*. नई दिल्ली: ग्रामीण विकास मंत्रालय.

*कुरुक्षेत्र पत्रिका*. (2009, जुलाई). नई दिल्ली: निर्माण भवन, ग्रामीण विकास मंत्रालय.

राज्य शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद. (2013). *कला व शिल्प*. रायपुर: छत्तीसगढ़.

दुबे, श्यामाचरण. (1996). *समय एवं संस्कृति*. नई दिल्ली: वाणी प्रकाशन. ISBN: 81-7055-464-0

जैन, राजीव. (2002). *भारत में सार्वजनिक उद्योग (प्रथम संस्करण)*. नई दिल्ली: यूनिवर्सिटी पब्लिकेशन.

# Restoring Cultural Heritage: Navigating the Challenges and Assessing the Implications

**LOKESH PANDEY***

**lokeshpandeybhu08@gmail. com**

**Abstract**

The study explores the complexities involved in conserving cultural heritage, with a focused case study on restoration projects in Varanasi (Banaras), one of the oldest continuously inhabited cities in the world. This research investigates the multifaceted challenges of cultural heritage restoration, including issues of authenticity, community involvement, urban development pressure, and bureaucratic hurdles. Using qualitative methods—specifically, semi-structured interviews with local artisans, conservation experts, municipal authorities, and informal group discussions with residents—this study captures diverse perspectives on heritage value, loss, and regeneration. Fieldwork centered around notable projects such as the Kashi Vishwanath Corridor, the restoration of ghats along the Ganga River, and the rejuvenation of temple precincts highlights both the positive and disruptive impacts of these interventions. The research is grounded in the need to balance modern development with the preservation of intangible cultural identities and traditional urban fabric. It aims to contribute to policy discussions and community-led conservation strategies by emphasizing participatory approaches and contextual sensitivity. This study is crucial as Varanasi stands at a critical intersection between preservation and transformation, making it a vital model for heritage management in similar historic urban centers.

**Keywords:** Cultural Heritage Restoration, Varanasi, Community Participation, Urban Development, Intangible Heritage

---

* **Research Scholar, Department of Sociology, Mahatma Gandhi Central University, Motihari (Bihar)**

**Introduction**

Varanasi—also known as Banaras or Kashi—is one of the world's oldest continuously inhabited cities and a spiritual epicenter of India. Revered as the city of Lord Shiva, Varanasi holds immense religious, cultural, and historical significance. Situated on the banks of the Ganges River in Uttar Pradesh, its heritage includes not only monumental structures but also intangible cultural traditions such as music, Sanskrit scholarship, artisanal crafts, and religious rituals. However, like many ancient urban centers, Varanasi has increasingly come under pressure from modernization, population growth, tourism, and environmental degradation, all of which have raised urgent concerns about the preservation and restoration of its cultural heritage. Under these circumstances, restoring Varanasi's cultural resources becomes more than just a conservation effort; it is an essential tactic for identity preservation, cultural sustainability, and inclusive urban renewal. In recent decades, Varanasi's restoration efforts have accelerated, especially under national heritage and urban development initiatives like the Smart Cities Mission and the HRIDAY (Heritage City Development and Augmentation Yojana, introduced in 2015). The Kashi Vishwanath Corridor Project, which started in 2019, has been the most well-known and contentious of these. By removing encroachments and extending access ways, this project sought to provide a magnificent corridor between the Kashi Vishwanath Temple and the ghats along the Ganga River. The project included the destruction of centuries-old buildings and the uprooting of locals and business owners, even if it also improved pilgrimage flow and unearthed long-buried sanctuaries (Sharma, 2020). At the core of the intricate discussion around the restoration of Varanasi's cultural legacy is the paradox of such interventions: maintaining religious value while possibly undermining typical urban patterns.

The rehabilitation of the Ganga's famous tiered embankments, known as the riverfront ghats, has been another crucial area of concentration. Repairing deteriorating stone structures, cleaning the ghat regions, and enhancing sanitation infrastructure have been the goals of projects overseen by the Archaeological Survey of India (ASI) and funded by foreign organizations. For example, repairing ancient masonry and enhancing drainage and lighting were part of the restoration of the Manikarnika and Dashashwamedh Ghats (ASI Report, 2018). Although technically successful, these

initiatives have occasionally lacked community involvement, which has resulted in local dissatisfaction over aesthetic modifications and access limitations. Concerns about being left out of design processes are common among local priests, boatmen, and resident populations, which reduces the restored venues' authenticity and usability (Interview excerpts, 2023). The increasing need to investigate how Varanasi's cultural heritage restoration initiatives are negotiated between many stakeholders—government officials, heritage experts, visitors, and the local people that inhabit and work there—is what spurred this study. The research reveals deeply ingrained emotional, economic, and cultural linkages with heritage structures and activities by using qualitative techniques like semi-structured interviews and casual group discussions with craftspeople, temple caretakers, store owners, and city planners. For instance, a number of local shopkeepers bemoaned the loss of ancestral properties and community networks as a result of recent renovation during casual conversations in the Vishwanath Gali region. Younger citizens simultaneously voiced hope for more accessible, cleaner metropolitan areas and higher tourism-related revenue. The complex ramifications of heritage restoration in dynamic urban settings like Varanasi are reflected in these divergent opinions. Varanasi's cultural significance extends beyond its architectural legacy. Intangible cultural traditions including as Banarasi silk weaving, Hindustani classical music, Vedic scholarship, and seasonal celebrations such Dev Deepawali are also rooted in the city. Therefore, restoration must include the preservation and maintenance of cultural ecosystems and livelihoods in addition to architectural protection. Any comprehensive cultural strategy must include initiatives like supporting Guru-shishya traditions in music schools or reviving Weavers' colonies in Madanpura. However, top-down, infrastructure-heavy methods to restoration frequently ignore these factors. This study is important because it aims to close this gap by critically assessing the restoration process, the parties engaged, and the issues at play. Varanasi is a microcosm of the larger urban heritage issues that South Asian cities face, such as striking a balance between modernity and tradition, development and conservation, and making sure that legacy is preserved as a dynamic, inclusive, and community-focused resource. The study's findings aim to educate not only Varanasi's heritage strategy, but

also give transferable lessons for other cities coping with cultural preservation in the face of fast modernization.

**The Historical and Cultural Landscape of Varanasi: A Heritage in Transition**

Varanasi, also known as Kashi or Banaras, is one of the oldest continuously inhabited towns in the world. Nestled along the Ganges River, its identity is closely linked to India's spiritual and cultural history. The city is not only a sacred pilgrimage destination for Hindus, but also a repository of ancient knowledge, art, and ritual practice. Varanasi has long been a symbol of religious unity, with centuries-old temples, mosques, monasteries, and ghats. Singh (2012) describes the city's geography as a sacred cosmogram, in which physical features are linked to divine symbolism and ordinary life intersects with spiritual devotion. Varanasi's past is unique in that it combines the material and metaphysical. However, its intricacy leaves it susceptible to oversimplified ideas of urban redevelopment and tourism-centric growth. Restoration initiatives, particularly those funded by national programs such as the HRIDAY Scheme and the Smart Cities Mission, have prioritized the visual and physical preservation of significant monuments and temple zones. While these interventions are clearly vital, they frequently ignore the living cultural practices and social networks that give the city its own rhythm.

Intangible heritage is severely neglected in traditional artisan communities, such as the Banarasi silk weavers of Madanpura and Lallapura. These towns, which formerly thrived under royal patronage and guild-based structures, are now in decline as a result of decreased demand, mechanization, and insufficient government backing. In a conversation with a master weaver in Madanpura, he stated: “They talk about restoring heritage, but who restores our looms? We are the living heritage, yet nobody notices us” (Based on interview, 6, September, 2023). His statements emphasize the gap between policymakers' understanding of heritage, which is mostly defined by tangible, tourism-oriented sites, and heritage as experienced by people, whose skills, memories, and social systems provide an equally important cultural legacy. This viewpoint is consistent with data from INTACH's 2020 Cultural Mapping Report, which shows a 45% decline in practicing traditional craftspeople over the past two decades. This

collapse is more than just economic; it is existential, endangering the transmission of information, identity, and social cohesiveness. Thus, a full restoration strategy in Varanasi must go beyond masonry and materials and incorporate education, economic incentives, and community-driven preservation approaches.

**Challenges in Cultural Heritage Restoration: Between Conservation and Development**

Restoration in Varanasi exists in a liminal area between historical veneration and the constraints of modern urbanization. The most visible manifestation of this tension is the Kashi Vishwanath Corridor Project (KVCP), a flagship redevelopment plan launched in 2019 to construct a spectacular promenade connecting the Kashi Vishwanath Temple to the Ganga riverbank. The corridor, which covers more than 5 lakh square feet, required the acquisition and demolition of nearly 300 structures, including residential buildings, stores, and lesser-known shrines. The project's supporters claim that it improves accessibility, clears temple paths, and reveals hidden heritage sites. However, detractors argue that it has evicted hundreds of households, destroyed vernacular buildings, and imposed a sanitized, tourist-centric image that damages the city's natural fabric. In an interview, a merchant relocated from the Vishwanath Gali area stated, “We were not given a choice. “My family has been selling puja goods here for three generations. Now we've been transferred to a lane where no one comes” (Based on interview, 17 september, 2023). His experience exemplifies a larger pattern of dispossession, in which rehabilitation is associated with displacement.

The analysis of this narrative indicates a key policy gap: the lack of tools for negotiating between heritage value and human rights. Furthermore, the emotional upheaval caused by families who have lost not only income, but also cultural ties is generally overlooked in official records. Dr. Neha Trivedi, a conservation architect, further criticized the idea, saying, “We are losing the organic complexity of the city—replacing layered textures with polished stone and LED lighting. “This is not preservation; it is aesthetic engineering” (Based on Interview on 04, October, 2023). Her observation highlights the superficiality that can occur when rehabilitation is confined to surface beauty.

Spatial investigation employing GIS mapping techniques, together with the UP Urban Development Report (2022), demonstrates a 17% decrease in residential and micro-religious structures in the corridor area. These were replaced by open plazas, standardized paths, and modern drainage systems. While these renovations increase sanitation and flow, they also remove the area's rich historical narrative. The corridorization of sacred space has transformed once-intimate pilgrimage paths into panoramic panoramas, better suited to photography than prayer. In this setting, rehabilitation programs risk becoming cultural homogenizers rather than protectors of diversity. Policymakers must appreciate that Varanasi's past is a patchwork that should be carefully conserved rather than reconstructed.

**Community Perception and Participation: The Missing Link in Restoration Projects**

One of the most important but frequently overlooked aspects of cultural restoration in Varanasi is community involvement. Residents have a special interest in historic projects because they are stewards of local knowledge, traditions, and space usage. However, the majority of the city's rehabilitation programs have taken a top-down approach, with little input or participation. Participants in a group discussion with women from the Bangalitola area were dissatisfied with the remodeling of surrounding ghats. "(Based on Interview, 20, October, 2023) They made it beautiful for visitors, but difficult for us to live, "one woman said, referring to the removal of covered areas that were formerly used for household tasks and social meetings. Such stories highlight a reoccurring theme: restoration is typically regarded as isolation rather than empowerment.

This difference is further demonstrated by the hallowed geography of the ghats. A priest at Manikarnika Ghat remarked, "No one has asked us how we do the rites here. They've recently begun construction. We now have to change our times because to the noise and obstacles" (Based on interview, 28, October, 2023). Construction projects that do not follow religious calendars or local rhythms undermine rituals, which rely on timing, sanctity, and spatial configuration. The broader implication is a breakdown in cultural continuity, with heritage sites becoming performance zones for visitors rather

than sacred areas for practitioners. Such transitions can exacerbate tensions between resident groups and authorities, reducing confidence and collaboration.

Quantitative data backs up these observations. According to a 2023 survey conducted by Banaras Hindu University's Department of Sociology, 62% of residents felt excluded from heritage project decision-making processes, and 48% reported negative impacts on their daily lives, such as relocation, restricted movement, and loss of livelihood. These results show that current restoration methods fall short of promoting inclusive urban government. To address this issue, community advisory boards, participatory design charrettes, and cultural impact studies must be implemented. Restoration must be viewed as a collaborative discourse that values local individuals' experiential knowledge, rather than a technical exercise.

**Implications of Restoration: Cultural, Economic, and Urban Outcomes**

The ramifications of cultural restoration in Varanasi are complex and linked with the city's changing socioeconomic landscape. On the plus side, restoration has boosted tourism, enhanced infrastructure, and increased the city's national and international prestige. According to the Uttar Pradesh Tourism Board (2023), footfall at the Kashi Vishwanath Temple has increased by 250% since the corridor was completed, creating new revenue streams for the local economy. Sanitation, lighting, and riverside development have improved the city's accessibility and navigability, especially for senior pilgrims and international visitors.

However, these advantages are coupled with substantial expenditures. The redistribution of visitor flow has reshaped the city's spatial economy, concentrating trade along the rebuilt corridor while marginalizing ancient bazaars and outlying areas. In an interview, a tea vendor who has relocated to a calmer lane stated, “Tourists walk where the corridor takes them. We are now invisible” (Based on interview, 10, November, 2023). This discovery illustrates a pattern of economic displacement in which conventional livelihoods are threatened by a shift in consumer demand. Furthermore, gentrification pressures are increasing as property values rise in rebuilt regions, driving away long-term inhabitants and artisans. Such consequences call into question the premise that restoration is inherently inclusive. From a cultural standpoint,

transforming heritage places into planned tourist experiences runs the risk of commercialising sacred rituals. Informal talks with boatmen, flower sellers, and singers indicate a common sentiment: their cultural displays are being perceived as attractions rather than traditions. According to an elderly boatman, “Now it feels like we are acting out our culture for cameras, not living it.” (Based on Interview, 26, December, 2023). This behavior is consistent with MacCannell's (1976) thesis of' staged authenticity, ' in which legacy becomes a spectacle for external audiences, separating it from its community roots. The end consequence is a degradation of meaning, with rituals tailored for photographic value rather than spiritual coherence. The effects of urban planning are likewise paradoxical. Restoration has improved environmental management and transportation, but it has also disturbed social networks and informal economies. Street sellers, seasonal festival organizers, and neighborhood associations perceive less autonomy and more regulation. The city's organic adaptability, which was originally its greatest strength, is being supplanted by rigid zoning and monitoring. As a result, the true consequences of restoration are more than just aesthetic or economic; they are ontological, challenging who has the authority to define and inhabit legacy. Moving ahead, restoration policies must be reconsidered through the lens of cultural sustainability. This includes not just the physical upkeep of structures, but also the revival of knowledge systems, ritual cycles, and community economy. Adaptive reuse initiatives, community-led tourism concepts, and intergenerational training programs can all help close the gap between preservation and engagement. As a result, Varanasi can become more than just a museum of the past, but also a living laboratory for modern heritage.

**Conclusion: Toward Inclusive and Sustainable Heritage Restoration in Varanasi**

The restoration of cultural property in Varanasi exemplifies a larger issue confronting old cities around the world: how to conserve the past without displacing the present, and how to accept modernity without destroying memory. This study, based on field interviews, informal group discussions, and secondary data, indicates that restoration efforts in Varanasi, while ambitious and frequently well-intentioned, have produced complex and varied results. While projects such as the Kashi Vishwanath Corridor have

improved the city's physical landscape and boosted tourism, they have also caused social dislocation, disadvantaged traditional livelihoods, and weakened community-led cultural traditions. The lack of community participation in planning and decision-making has exacerbated these divides, highlighting the need to redefine restoration as a culturally sensitive and socially inclusive process. Affirmative action must begin with a redefining of what defines "heritage." It must go beyond temples and stone architecture to encompass the living traditions, oral histories, artisan networks, and ritual ecosystems that give Varanasi its spirit. Policies should prioritize community engagement through organizations such as Cultural Heritage Councils, which are comprised of local people, artisans, religious practitioners, scholars, and planners. Heritage Impact Assessments, which are comparable in rigor to Environmental Impact Assessments, should be implemented prior to any large-scale reconstruction. These assessments should take into account not just visual and structural changes, but also intangible disturbances to cultural rhythms, socioeconomic ties, and identity development. Furthermore, economic rehabilitation programs for displaced people and traditional artisans must be included into heritage efforts. This includes microfinance schemes, artisan centers, and training initiatives that resuscitate endangered talents and integrate them into sustainable tourist models. For example, developing guided cultural circuits led by local storytellers, boatmen, and musicians might allow tourists to see heritage through the eyes of the community, changing them from passive onlookers to respectful participants.

Equally important is the preservation of vernacular architecture through adaptive reuse policies that enable existing buildings to perform new, community-driven functions without losing their historical integrity. A path ahead must also recognize the importance of cultural education and understanding among planners and policymakers. Academic institutions, especially local universities such as Banaras Hindu University, should be encouraged to collaborate with government agencies on research, documentation, and community participation. These collaborations can result in long-term knowledge repositories and participatory governance models based on anthropological understanding, rather than just bureaucratic statistics. Finally, Varanasi should be envisioned as a dynamic cultural organism that evolves via negotiation,

resilience, and mutual respect, rather than a static heritage zone to be polished and preserved. The preservation of its heritage must thus be an act of ethical stewardship, with equal consideration for past, present, and future generations. Varanasi can only restore its role as a beacon of inclusive and sustainable cultural rejuvenation if restoration is embedded in its people's daily lives.

**References: -**

Archaeological Survey of India (ASI). (2018). *Annual Conservation Report: Ghats of Varanasi*. Government of India.

BHU Survey on Public Heritage Perception (2023). Department of Sociology, BHU.

Field Interviews and Group Discussions conducted in Varanasi (September-December 2023).

INTACH (2020). *Cultural Mapping Report: Varanasi*. Indian National Trust for Art and Cultural Heritage.

MacCannell, D. (1976). *The Tourist: A New Theory of the Leisure Class*. Schocken Books.

Ministry of Housing and Urban Affairs. (2015). *HRIDAY Scheme Guidelines*. Government of India.

Sharma, R. (2020). *Kashi Vishwanath Corridor and the Politics of Heritage*. Indian Express Archives.

Sharma, R. (2020). *Kashi Vishwanath Corridor and the Politics of Heritage*. Indian Express.

Singh, R. L. (2012). *Varanasi: The Cultural Heritage*. Varanasi Heritage Press.

UP Urban Development Report (2022). Government of Uttar Pradesh.

Uttar Pradesh Tourism Board (2023). *Tourist Influx and Economic Impact Report*.

# NOTES FOR AUTHORS

## SHODH KHANIJ: *Multidisciplinary Peer Reviewed Journal*

**1. Submissions**

Authors should send all submissions and resubmissions to shodhkhanij@gmail.com or gandhikhadi@gmail.com some articles are dealt with by the editor immediately, but most are read by outside referees. For submissions that are sent to referees, we try to complete the evaluation process within one month. As a general rule, Shodh Khanij operates a double-blind peer review process in which the reviewer's name is withheld from the author and the author's name is withheld from the reviewer. Reviewers may at their own discretion opt to reveal their name to the author in their review, but our standard policy is for both identities to remain concealed.

Absolute technical requirements in the first round are: ample line spacing throughout (1.15), an abstract, adequate documentation using the author-date citation system and an alphabetical reference list and a word count on the front page (include all elements in the word count). Regular articles are restricted to an absolute maximum of 8,000 words, including all elements (title page, abstract, notes, references, tables, biographical statement, etc.).

**2. Types of articles**

In addition to Regular Articles, Shodh Khanij publishes the Viewpoint column with research-based policy articles, Review Essays, Book Review and Special Data Features.

**3. The manuscript**

The final version of the manuscript should contain, in this order:

(a) title page with name(s) of the author(s), affiliation

(b) Abstract

(c) Main text

(d) List of references

(e) Biographical statement(s)

(f) Tables and figures in separate documents

(g) Notes (either footnotes or endnotes are acceptable)

Authors must check the final version of their manuscripts against these notes before sending it to us.

The text should be left justified, with an ample left margin. Avoid hyphenation. Throughout the manuscripts, set line spacing to 1.15.

The final manuscript should be submitted in Kokila Hindi Unicode Font MS Word for Windows.

**4. Language**

Shodh Khanij is a Bilingual Journal, i.e. English and हिंदी (Kokila Hindi Unicode Font Size 16). The main objective of an academic journal is to communicate clearly with an international audience.

Elegance in style is a secondary aim: the basic criterion should be clarity of expression. We allow UK as well as US spelling, as long as there is consistency within the article. You are welcome to indicate on the front page whether you prefer UK or US spelling.

**5. The abstract**

The abstract should be in the range of 200-300 words. For very short articles, a shorter abstract may suffice. The abstract is an important part of the article. It should summarize the actual content of the article; rather than merely relate what subject the article deals with. It is more important to state an interesting finding than to detail the kind of data used: instead of 'the hypothesis was tested', the outcome of the test should be stated. Abstracts should be written in the present tense and in the third person (This article deals with...) or passive (... is discussed and rejected). Please consider carefully what terms to include in order increasing the visibility of the abstract in electronic searches.

**6. Title and headings**

The main title of the article should appear at the top of pg. 1, followed by the author's name an institutional affiliation. The title should be short, but informative. All sections of the article (including the introduction) should have principal subheads. The sections are not numbered. This makes it all the more important to distinguish between levels of subheads in the manuscripts – preferably by typographical means.

**7. Notes**

Notes should be used only where substantive information is conveyed to the reader. Mere literature references should normally not necessitate separate notes; see the section on references below. Notes are numbered with Arabic numerals. Authors should insert notes by using the footnote/endnote function in MS Word.

**8. Tables**

Each Table should be self-explanatory as far as possible. The heading should be fairly brief, but additional explanatory material may be added in notes which will appear immediately below the Table. Such notes should be clearly set off from the rest of the text. The table should be numbered with a Roman numeral and printed on a separate page.

**9. Figures**

The same comments apply, except that Figures are numbered with Arabic numerals. Figure headings are also placed below the Figure. Example: Figure 1.

**10. References**

References should be in a separate alphabetical list; they should not be incorporated in the notes. Use the APA form of reference.

**11. Biographical statement**

The bio sketch in Shodh Khanij appears immediately after the references. It should be brief and include year of birth, highest academic degree, year achieved, where obtained, position and current institutional affiliation. In addition, authors may indicate their present main research interest or recent (co-)authored or edited books as well as other institutional affiliations which have occupied a major portion of their professional lives. But we are not asking for a complete CV.

**12. Proofs and reprints**

Author's proofs will be e-mailed directly from the publishers, in pdf format. If the article is co-authored, the proof will normally be sent to the author who submitted the manuscripts. (Corresponding author). If the e-mail address of the corresponding author is likely to change within the next 6–9 months, it is in the author's own interest (as well as ours) to inform us: editor's queries, proofs and pdf reprints will be sent to this e-mail address. All authors (corresponding authors and their co-authors) will receive one PDF copy of their article by email.

**13. Copyright**

The responsibility for not violating copyright in the quotations of a published article rests with the author(s). It is not necessary to obtain permission for a brief quote from an academic article or book. However, with a long quote or a Figure or a Table, written permission must be obtained. The author must consult the original source to find out whether the copyright is held by the author, the journal or the publisher, and contact the appropriate person or institution. In the event that reprinting requires a fee, we must have written confirmation that the author is prepared to cover the expense. With literary quotations, conditions are much stricter. Even a single verse from a poem may require permission.